RNI Number : MPHIN/2016/70609
ISSN NUMBER : 2455-9814
वर्ष : 7, अंक : 27
अक्टूबर-दिसम्बर 2022
मूल्य 50 रुपये

Dhingra Family Foundation
USA

विभोम-स्वर

वैश्विक हिन्दी चिंतन की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

शिवना प्रकाशन द्वारा प्रकाशित नई पुस्तकें

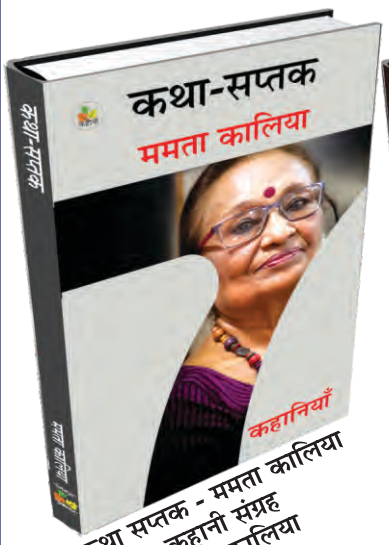

कथा सप्तक - ममता कालिया
कहानी संग्रह
ममता कालिया

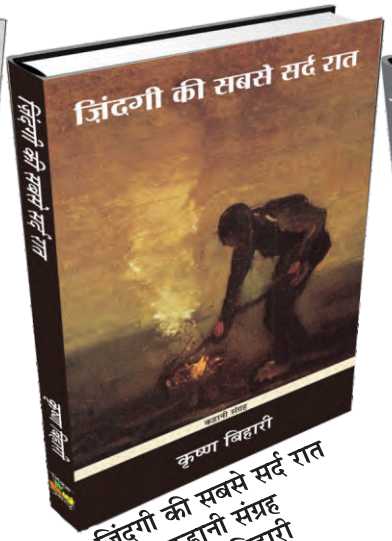

ज़िंदगी की सबसे सर्द रात
कहानी संग्रह
कृष्ण बिहारी

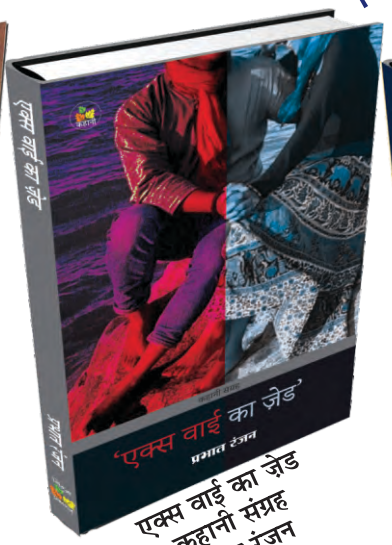

एक्स वाई का ज़ेड
कहानी संग्रह
प्रभात रंजन

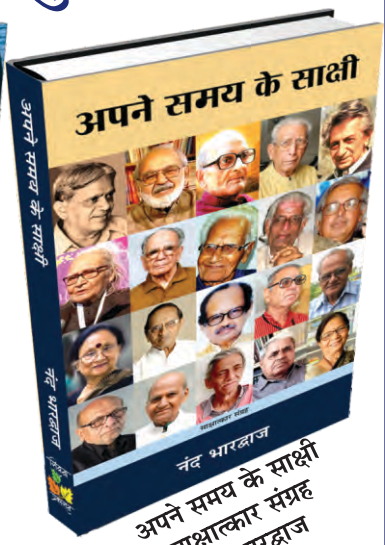

अपने समय के साक्षी
साक्षात्कार संग्रह
नंद भारद्वाज

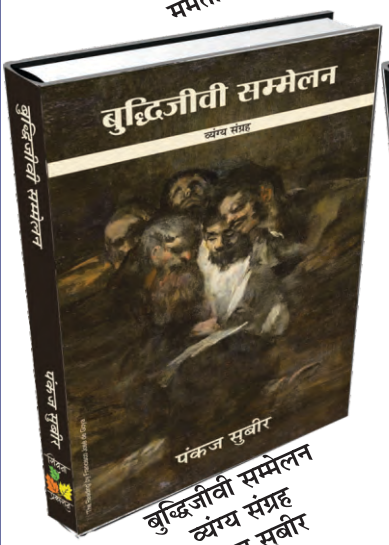

बुद्धिजीवी सम्मेलन
व्यंग्य संग्रह
पंकज सुबीर

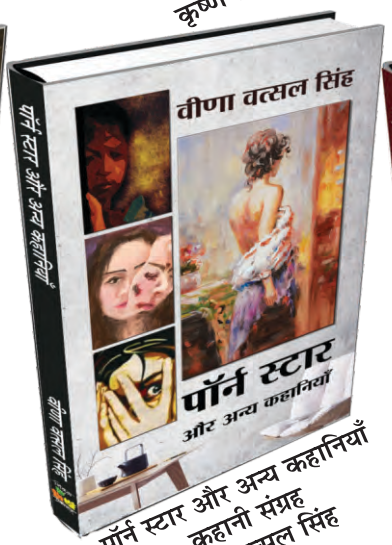

पॉर्न स्टार और अन्य कहानियाँ
कहानी संग्रह
वीणा वत्सल सिंह

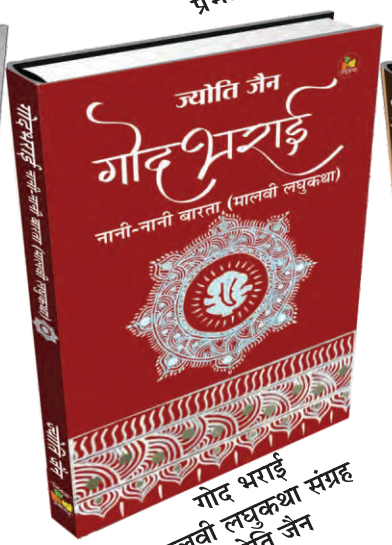

गोद भराई
मालवी लघुकथा संग्रह
ज्योति जैन

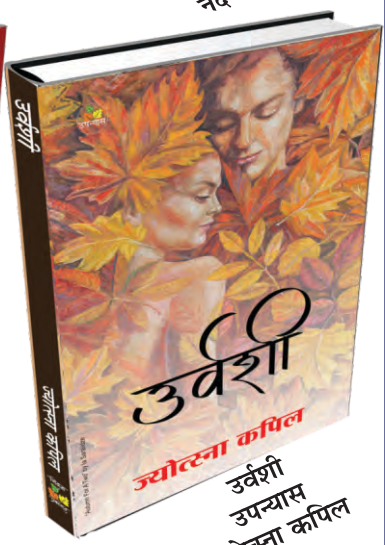

उर्वशी
उपन्यास
ज्योत्स्ना कपिल

समुंदरों के पार
यात्रा वृत्तांत
चौधरी मदन मोहन समर

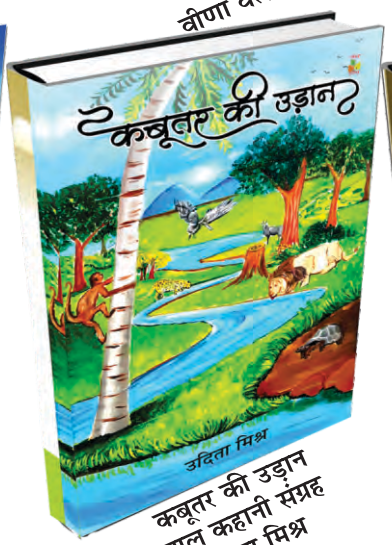

कबूतर की उड़ान
बाल कहानी संग्रह
उदिता मिश्र

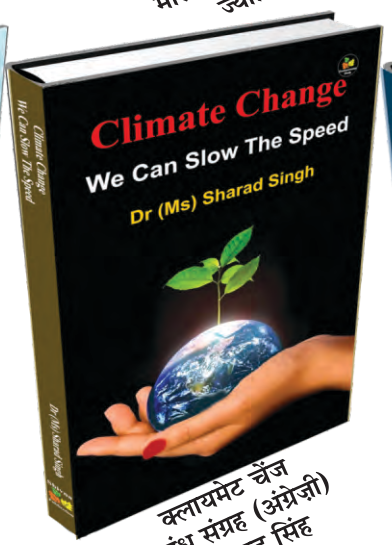

क्लायमेट चेंज
निबंध संग्रह (अंग्रेज़ी)
डॉ. शरद सिंह

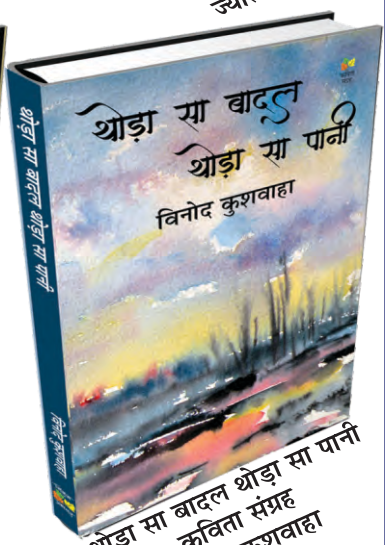

थोड़ा सा बादल थोड़ा सा पानी
कविता संग्रह
विनोद कुशवाहा

शिवना प्रकाशन
शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फोन : 07562-405545, 07562-695918
मोबाइल : +91-9806162184 (शहरयार)
ईमेल : shivna.prakashan@gmail.com
http://shivnaprakashan.blogspot.in

amazon
http://www.amazon.in

flipkart.com
http://www.flipkart.com

Mobile - +91-9806162184, +91-6265665580
+91-8819806162
https://twitter.com/shivnac
https://www.facebook.com/shivna.prakashan
https://www.youtube.com/c/ShivnaCreations
Email- shivna.prakashan@gmail.com

संरक्षक एवं
प्रमुख संपादक
सुधा ओम ढींगरा

संपादक
पंकज सुबीर

क़ानूनी सलाहकार
शहरयार अमजद ख़ान (एडवोकेट)

तकनीकी सहयोग
पारुल सिंह, सनी गोस्वामी
डिज़ायनिंग
सुनील सूर्यवंशी, शिवम गोस्वामी

संपादकीय एवं व्यवस्थापकीय कार्यालय
पी. सी. लैब, शॉप नं. 2-7
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, म.प्र. 466001
दूरभाष : +91-7562405545
मोबाइल : +91-9806162184
ईमेल : vibhomswar@gmail.com

ऑनलाइन 'विभोम-स्वर'
http://www.vibhom.com/vibhomswar.html
फेसबुक पर 'विभोम स्वर'
https://www.facebook.com/vibhomswar

एक प्रति : 50 रुपये (विदेशों हेतु 5 डॉलर $5)
सदस्यता शुल्क
3000 रुपये (पाँच वर्ष), 6000 रुपये (दस वर्ष)
11000 रुपये (आजीवन सदस्यता)
बैंक खाते का विवरण-
Name: Vibhom Swar
Bank Name: Bank Of Baroda,
Branch: Sehore (M.P.)
Account Number: 30010200000312
IFSC Code: BARB0SEHORE

संपादन, प्रकाशन एवं संचालन पूर्णत: अवैतनिक, अव्यवसायिक। पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा। पत्रिका जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर माह में प्रकाशित होगी। समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र सीहोर (मध्यप्रदेश) रहेगा।

विभोम-स्वर

वैश्विक हिन्दी चिंतन की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

वर्ष : 7, अंक : 27, त्रैमासिक : अक्टूबर-दिसम्बर 2022
RNI NUMBER : MPHIN/2016/70609
ISSN NUMBER : 2455-9814

बालिका ख़ुशी जो जहाज़ महल माण्डव के बाहर छोटी सी दुकान लगाती है।

आवरण चित्र
पंकज सुबीर

Dhingra Family Foundation
101 Guymon Court, Morrisville
NC-27560, USA
Ph. +1-919-801-0672
Email: sudhadrishti@gmail.com

इस अंक में

विभोम स्वर
वर्ष : 7, अंक : 27,
अक्टूबर-दिसम्बर 2022

संपादकीय 3

मित्रनामा 5

कथा कहानी

ब्लडी कोठी
दिव्या माथुर 8

हाकिम का पाजामा
नीरज नीर 13

निर्णय सही था
अर्चना मिश्र 16

बूढ़ा हो गया हुआ पौधा
सतीश सरदाना 22

सुख विदाई का
शेफालिका सिन्हा 27

अगोचर
हरि प्रकाश राठी 30

तुम आओगे न
सन्दीप तोमर 33

मजबूर
डॉ. चुम्मन प्रसाद श्रीवास्तव 38

भाषांतर

दूसरा हादसा
उर्दू कहानी
मूल लेखक : तारिक छतारी
अनुवादक: पंकज पराशर 43

अजनबी
मलयालम कहानी
मूल कथाकार: अब्राहम मैथ्यू
अनुवादक : डॉ.षीना ईप्पन 46

ललित निबंध

राम कौन?
डॉ. वंदना मुकेश 49

शहरों की रूह

नीलांजल मॉरीशस
चौधरी मदन मोहन "समर" 53

व्यंग्य

गूगल बाबा की जय
डॉ. दलजीत कौर 58

पत्नी और धर्मपत्नी
ललन चतुर्वेदी 60

लघुकथा

आवाज़
सुभाष चंद्र लखेड़ा 12

क्वालिटी टाइम
डॉ. मधु संधु 21

राख से पहले
ज्योत्सना सिंह 61

विशिष्ट कवि

वसंत सकरगाए 62

कविताएँ

'मीनू' मीना सिन्हा 64
रेखा भाटिया 65
हेमन्त शर्मा 66
लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव 67
प्रतिभा चौहान 68

गीत

कैलाश मनहर 69

ग़ज़ल

डॉ. आरती कुमारी 70
जय चक्रवर्ती 71

आख़िरी पन्ना 72

विभोम-स्वर सदस्यता प्रपत्र

यदि आप विभोम-स्वर की सदस्यता लेना चाहते हैं, तो सदस्यता शुल्क इस प्रकार है : 3000 रुपये (पाँच वर्ष), 6000 रुपये (दस वर्ष) 11000 रुपये (आजीवन सदस्यता)। सदस्यता शुल्क आप चैक / ड्राफ़्ट द्वारा विभोम स्वर (VIBHOM SWAR) के नाम से भेज सकते हैं। आप सदस्यता शुल्क को विभोम-स्वर के बैंक खाते में भी जमा कर सकते हैं, बैंक खाते का विवरण-

Name of Account : Vibhom Swar, Account Number : 30010200000312, Type : Current Account, Bank : Bank Of Baroda, Branch : Sehore (M.P.), IFSC Code : BARB0SEHORE (Fifth Character is "Zero")

(विशेष रूप से ध्यान दें कि आई. एफ. एस. सी. कोड में पाँचवा कैरेक्टर अंग्रेज़ी का अक्षर 'ओ' नहीं है बल्कि अंक 'ज़ीरो' है।)

सदस्यता शुल्क के साथ नीचे दिये गए विवरण अनुसार जानकारी ईमेल अथवा डाक से हमें भेजें जिससे आपको पत्रिका भेजी जा सके: 1- नाम, 2- डाक का पता, 3- सदस्यता शुल्क, 4- चैक/ड्राफ़्ट नंबर, 5- ट्रांज़ेक्शन कोड (यदि ऑनलाइन ट्रांस्फ़र है), 6-दिनांक (यदि सदस्यता शुल्क बैंक खाते में नकद जमा किया है तो बैंक की जमा रसीद डाक से अथवा स्कैन करके ईमेल द्वारा प्रेषित करें।)

संपादकीय एवं व्यवस्थापकीय कार्यालय : पी. सी. लैब, शॉप नंबर. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, म.प्र. 466001, दूरभाष : 07562405545, मोबाइल : 09806162184, ईमेल : vibhomswar@gmail.com

दोहरी मानसिकता राष्ट्र और समाज के लिए अहितकर है

सुधा ओम ढींगरा
101, गाईमन कोर्ट, मोरिंस्विल
नॉर्थ कैरोलाइना-27560, यू.एस. ए.
मोबाइल- +1-919-801-0672
ईमेल- sudhadrishti@gmail.com

दोहरी मानसिकता मनुष्य को कुंठित कर जाती है, इसका एहसास भी उसे नहीं होता। स्पष्ट सोच बहुत कम लोगों की होती है और दूरदर्शी भी वे ही बन पाते हैं। सन् 2009 में मैंने फ़ेसबुक और ट्विटर का प्रयोग शुरू किया था। उन दिनों लेखकों का एक गुट फ़ेसबुक पर अमेरिका के ख़िलाफ़ लिख रहा था और यहाँ रह रहे भारतीयों यानी प्रवासी भारतीयों को भी अपनी पोस्ट्स में नीचा दिखा रहे थे। तक़रीबन सभी प्रवासी भारतीयों ने, जो फ़ेसबुक पर थे, उनके लिखे को नज़रअंदाज़ किया। समझ गए थे कि कुंठित मन और बिना जानकारी के वे लिखी गईं बातें थीं। कुछ भी समझाने का अर्थ विवाद शुरू करवाना था।

प्रवासी भारतीय भारत से ही तो आए हुए हैं, और इस मानसिकता को भी अच्छी तरह से समझते हैं, कि रेल के सामान्य डिब्बे में बैठा यात्री अमेरिका के प्रेज़िडेंट जो बाइडन को देश को कैसे चलाना चाहिए, की सीख देने से नहीं चूकता और स्वयं के वोट को छोटे-मोटे लालच में ग़लत नेता को दे देता है। दूसरों को शिक्षा देनी तो जन्मसिद्ध अधिकार समझा जाता है।

गत दिनों अमेरिका के अलग-अलग शहरों से आभासी दुनिया के कई लेखक मित्रों के फ़ोन कॉल्स आए, जो अमेरिका अपने बच्चों से मिलने आए हुए हैं। उनमें वे लेखक भी थे; जिन्होंने कभी अमेरिका और यहाँ रह रहे भारतीयों के ख़िलाफ़ लिखा था। उन्हीं लेखकों ने जब अमेरिका की तारीफ़ों के पुल बाँधने शुरू किये और बड़े गर्व से कहा कि अब यहीं सैटल होंगे तो यूके के एक लेखक की कही बात याद आ गई। ऐसे लोग दोहरी मानसिकता वाले, दोहरे मापदंडों के होते हैं, कहते कुछ हैं और करते कुछ हैं। दूसरों के लिए अमेरिका की बुराइयाँ बताई जाती हैं, अपने बच्चों को अमेरिका में स्थापित करने की कोशिश की जाती है, तब यह बेहतरीन देश हो जाता है। समाज और जनजीवन में यह मानसिकता बहुत गहरे घर कर चुकी है।

राजनीति में दोहरी मानसिकता हर देश में पाई जाती है, सत्ता पार्टी की आलोचना तो विरोधी पार्टी करती ही है, बेशक रूलिंग पार्टी देश और जनता के हित के लिए कार्य कर रही हो। अपनी सत्ता के समय विरोधी पार्टी ने चाहे कितनी ही ग़लतियाँ क्यों न की हों, उन्हें भुला दिया जाता है। खैर पूरे विश्व में राजनीति एक धंधा बन चुकी है। अंतर इतना है अमेरिका में दो पार्टियों की तनातनी में देश का अहित नहीं होने दिया जाता और आमजन का पूरा ध्यान रखा जाता है...

संपादकीय

इस दोहरी मानसिकता के चलते कई मुद्दे तक अस्पष्ट रह जाते हैं। उदाहरण स्त्री विमर्श। इस पर चर्चा बहुत होती है, लिखा भी बहुत जाता है, पर परिभाषा, स्वरूप, दिशा कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं। विदेश के स्त्री विमर्श से प्रभावित होकर बहुत कुछ कहा और रचा गया, जो देश की स्त्रियों पर लागू ही नहीं होता। स्त्री विमर्श की अवधारणा देश, हालत, परिस्थितियों के अनुसार संगठित होनी चाहिए। पर इसकी ओर ध्यान देने का किसी के पास समय नहीं।

हिन्दी भाषा भी इस दोहरे व्यवहार की ही शिकार हो रही है। कोरोना ने वर्चुअल गोष्ठियों की भरमार ला दी। वह समय की ज़रूरत थी। बड़े-बड़े विषयों पर विद्वानों ने चर्चाएँ कीं, परिचर्चाएँ हुईं, कई भाषा विशेषज्ञों ने वक्तव्य दिए पर इससे हिन्दी भाषा को क्या लाभ हुआ ? किसी ने यह नहीं सोचा की भाषा के प्रचार-प्रसार और युवा पीढ़ी में इसे लोकप्रिय बनाने के लिए ज़मीनी स्तर पर काम करना होता है। एक पूरी पीढ़ी हिन्दी से विमुख हो चुकी है। सेमिनार, कांफेंसिज़ होनी चाहिए पर साथ ही साथ अन्य बिंदुओं पर भी ध्यान देना चाहिए। जिन अंग्रेज़ी स्कूलों में फ्रेंच को हिन्दी से अधिक महत्त्व दिया जाता है, वहाँ हिन्दी को भी उसी स्तर पर रखने के लिए कार्य करना चाहिए। अपनी भाषा का सम्मान बच्चें देखेंगे तो उसकी ओर आकर्षित भी होंगे। जब बच्चों के सामने ही हिन्दी को दोयम दर्जे पर रखा जाएगा तो वे उस भाषा को क्यों सीखेंगे ? पहले समाज और माँ-बाप को इस बात के महत्त्व को समझना ज़रूरी है कि चाहे अंग्रेज़ी रोटी-रोज़ी की भाषा है, पर हिन्दी को भी कमतर नहीं मानना चाहिए, तभी सही अर्थों में हिन्दी का विकास होगा। ऐसे में हिन्दी दिवस की भी आवश्यकता नहीं होगी।

समाज और व्यक्ति के दोहरे मापदंड अविश्वसनीयता और उलझन का ऐसा वातावरण निर्मित कर देते हैं; जिससे स्पष्टता कभी नहीं आती, अगली पीढ़ियाँ भी प्रश्नों के उत्तर तलाशती अस्पष्ट ही रहती हैं, चाहे धर्म हो या दर्शन, जीवन मूल्य हो या फलसफा अपरिभाषित ही रह जाते हैं।

आज देश में जो असंतोष और अशांति का माहौल है, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और अन्य अनेकों कारणों के साथ-साथ दोहरी मानसिकता और दोहरे मापदंड भी कारक हैं। समय रहते सचेत होना अनिवार्य है।

उत्सवों का माहौल सज रहा है। दशहरा, दीपावली, थैंक्सगिविंग और नववर्ष की विभोम-स्वर और शिवना साहित्यिकी टीम की ओर से आप सबको ख़ूब बधाई और ढेर सारी मंगलकामनाएँ !!!

आपकी,

सुधा ओम ढींगरा

जिस प्रकार आकाश पर इंद्रधनुष खिंचता है उसी प्रकार मन के आकाश पर भी इंद्रधनुष सात रंगों को समेटे हुए खिलता है। मगर उसके लिए मन में संघर्षों की धूप तथा आनंद की बरसात दोनों का होना बहुत ज़रूरी है। किसी भी एक की अनुपस्थिति में सात रंग भी अनुपस्थित हो जाते हैं।

मित्रनामा

जुलाई-सितम्बर 2022 अंक में छपी हंसा दीप की कहानी 'टूक-टूक कलेजा' पर खंडवा में साहित्य संवाद तथा वीणा संवाद ने चर्चा की। इस चर्चा के संयोजक श्री गोविन्द शर्मा तथा समन्वयक श्री शैलेन्द्र शरण थे।

यह मार्मिक, संवेदनशील कहानी

आधुनिकीकरण के इस दौर में रिश्तों के बीच अब अजनबीपन बढ़ता ही जा रहा है। स्वार्थ और संवेदनहीनता रिश्तों पर भारी पड़ रही है। सहज मानवीय संबंधों की ऊष्णता तेज़ी से उदासीनता में बदलती जा रही है। आपाधापी के इस माहौल में निजता की चाह और परायापन आज के जीवन की अनिवार्यता सी बनती जा रही है। जीवन की यह अनिवार्यता आज पारिवारिक और सामाजिक जीवन में हर जगह घुलती जा रही है। धीरे-धीरे संवेदन शून्यता और जड़ता बढ़ रही है जो 'टूक-टूक कलेजा' कहानी में सहज ही परिलक्षित हो रही है। गर्भ में रखने से लेकर खून से सींच भविष्य बनाने वाली माँ हो या पिता आज के दौर में अपनी स्वार्थसिद्धी के लिए सब रिश्ते हाशिए पर हैं। कहानी पढ़ मेरा भी कलेजा टूक-टूक हो गया। मार्मिक, संवेदनशील कहानी के लिए बहुत-बहुत बधाई!

-उपमा शर्मा

000

टूक-टूक कलेजा

हंसा दीप की छोटी सी कहानी 'टूक-टूक कलेजा' मानवीय संवेदना से सराबोर कहानी है। एक घर के प्रतीकात्मक माध्यम से दो पीढ़ियों के अंतराल को रेखांकित करती है। आज के आपसी रिश्तों की पड़ताल पूर्ण तटस्थता के साथ करते हुए कटु सत्य को उजागर किया है। माँ और बेटों के कोमल, संवेदनशील रिश्तों के द्वारा आज जीवन में आए बदलाव, रिश्तों के खोखलेपन को स्पष्ट किया है।

-मनोहर सिंह राठौड़

000

हृदय स्पर्शी कहानी

कहानी 'टूक-टूक कलेजा' हृदय स्पर्शी कहानी है जो हमें सिखाती है, की इंसान व मकान दोनों एक समान ही होता है जैसे बच्चे की बालवस्था से बुढ़ापे तक का सफ़र, वैसे ही मकान की नींव डलने से जर्जर तक का सफ़र एक समान ही होता है, कहानी की नायिका द्वारा अपने घर का बहुत सुन्दर चित्रण किया गया है ईंट-पत्थर के मकान को वह घर में तब्दील करती है, मकान चाहे किराये का हो या स्वयं का हम अपनी देख-रेख से उसे घर बनाते हैं, गृह प्रवेश के बाद साफ सफाई से लेकर, उसकी एक-एक दीवार को सजाना, घर के कोने-कोने से हमें प्यार होता है। नायिका भी 12 वर्ष एक छोटे से घर में रहती है, जहाँ का कण-कण उसके हृदय में बसा है, अपने बच्चों को सुविधा देने के लिए वह बड़े मकान में आती है, जिसे वह बड़े प्यार व देखभाल से उसकी साज-सज्जा करती है। पर समयानुसार बच्चे अपनी सुविधा को देखते हुए,और बड़ा घर देखते हैं और माँ को छोड़ कर अपने-अपने घर बनाने लगते हैं, तब नायिका बड़े भावुक हो कर कहती है -मैंने जिनके लिए उस प्यारे से घर को छोड़ा, वे आज मुझे यहाँ छोड़ गए। बड़ा भावुक पल है पर समयानुसार बदलाव भी निश्चित है।

-उमा चौरे, इंदौर

000

शीर्षक को सार्थक करती कहानी

कहानी 'टूक-टूक कलेजा' अपने नाम को, शीर्षक को सार्थक करती हुई प्रतीत होती है। घर को इंसानों की भावनाएँ व्यक्त करते बताना, उसका मानवीकरण अच्छा बन पड़ा है। लेखक ने आज के समाज की बड़ी समस्या बच्चों को माता-पिता की चिंता न होना, अपनी दुनिया में ही रहना, पालकों का एकाकीपन बड़ी ख़ूबी से दर्शाया है। पाठक एक बार में बिना रुके पढ़ जाता है। सच में नायिका का बच्चों की परवरिश जैसे घर की देखभाल करना, छोटे घर को छोड़ बड़े घर में जाना फिर उसे सजाना उसकी कलात्मक रुचि को भी दर्शा रहे हैं, और माँ अपने बच्चों की परवरिश एक कलाकार की तरह करती है, कहीं कोई कमी नहीं छोड़ती, पर बच्चे....?

-संध्या पारे साकल्ले

000

प्रवाह से भरी भाषा

कहानी 'टूक-टूक कलेजा' गृहस्थी को सर्वोपरि समझने वाली और अंतत: अकेली रह जाने वाली नायिका पर केंद्रित है। कहानी की भाषा प्रवाह से भरी और कसाव लिए हुए है। कहानी के प्रारंभ से, जीवन के अंतिम पड़ाव पर स्वयं का आत्मावलोकन करती नायिका, अपनी तुलना पीछे छूट गए पुराने घर से करती है। जीवन में नए पड़ावों के आने पर पुराना पीछे छूट जाता है यह एक सर्वविदित तथ्य है किंतु एक समय में केंद्र में रहता इंसान जब हाशिये पर धकेल दिया जाता है, तो बहुधा विगत स्मृतियों के धुँधलके में विचरण करने पर विवश हो जाता है, और तब अवचेतन मन में दबी कई बातें उभर कर आती हैं। बच्चों की सुविधा के लिए छोटे घर को छोड़ने का अपराधबोध भी नायिका के मन में दबी हुई एक ऐसी ही अवचेतन में दर्ज हुई दुविधा है जो सुरुचिपूर्ण ढंग से सजाए गए घर का साम्य नायिका स्वयं से अनुभूत करती है।

-गरिमा चवरे, रतलाम

000

मानवीय प्रेम पर आधारित कहानी

कहानी 'टूक-टूक कलेजा' मानवीय प्रेम पर आधारित कहानी है। प्रेम, मोह, लगाव, अपनत्व केवल सजीव प्राणियों से ही नहीं होता अपितु मनुष्य के जीवन में शामिल सभी सजीव, निर्जीव वस्तुओं से हो जाता है। बारह साल तक उस घर में रहने के बाद उसे छोड़ते समय नायिका को घर में बिताए सभी पल चलचित्र की तरह याद आते हैं। बच्चों के बड़े होने पर घर छोटा लगता है पर उस निर्जीव घर का बिछोह नायिका के मन को द्रवित कर देता है। कहानी पढ़कर मुझे 25 बरस पहले की मेरी कॉलोनी की घटना याद आती है जब एक ग़रीब आदमी को क़र्ज़ भरने के लिए अपना घर चालीस हज़ार में बेचना पड़ा था और उसी कॉलोनी में किराए से रहना पड़ा, पर जब-जब वह आदमी अपने घर के सामने से गुज़रता था घर को प्रणाम करके कुछ बड़बड़ाता हुआ

निकल जाता था। पता नहीं क्या बोलता था पर हम लोग इतना तो समझ सकते है कि उसके हृदय में कितनी वेदना रही होगी उस समय। कहानी में आगे बताया गया नए घर में माँ को छोड़कर बच्चे अपने-अपने नए घरों में चले गए, मुझे लगता है यहाँ लेखिका को थोड़ा विस्तार देना था। ख़ैर जब ख़ुद के बच्चे नायिका को छोड़कर चले गए तब उन्हें अहसास हुआ कि वह भी उस निर्जीव मकान की तरह हो गई, जो समय के साथ खस्ताहाल हो गया है, कमज़ोर हो गया है किसी को अब उसकी ज़रूरत नहीं है। कहानी अच्छी है कहानीकार हंसा दीप को बधाई।

-सौरभ लाड़, इंदौर

000

दिल को छू लेने वाली कहानी

'टूक-टूक कलेजा' कहानी जिस मकान में कहानी की नायिका रहती है, उस छोटे मकान को छोड़ने से मन में उपजे प्रश्नों और बेचैनियों को उन्होंने बहुत ही सूक्ष्मता से चित्रित किया है। ईंट, सीमेंट, गारा, मिट्टी से बना मकान तो मकान होता है, किन्तु उसमें रहने वालों की सुरुचियाँ उस मकान को घर बना देती हैं। जिस मकान में दशकों रहने से उसकी हर ईंट, दीवार, छत, फर्श, रंग जो आपकी रुचियों और भावनाओं का रंग ही होता है। वह स्थान जहाँ मकान स्थित है, उसका घर हो जाना, यह सब आपके व्यक्तित्व में समाहित हो जाता है। मनुष्य का मन ही ऐसा है कि वर्षों का साथ बेजान सी लगने वाली चीज़ों से भी उसके प्रति आत्मीयता और लगाव में तब्दील हो जाता है। इसी भावभूमि पर उन्होंने संवेदना के स्तर पर दिल को छू लेने वाली कहानी रची है। विष्णु खरे की भी दिल्ली में बने बड़े अहातों वाले घरों को लेकर एक उम्दा कविता है, जिसमें कवि की प्रश्नाकुलता है कि इन घरों में रहने वालों को आवाज़ देकर, पुकारा कैसे जाए। कहा भी जाता है कि घर छोटा होता है किन्तु उसमें रहने वालों के दिल बड़े होते हैं। हमें अपने पुराने बने पैतृक मकानों से इसीलिए लगाव हो जाता है।

कहानी में एक वाक्य आता है कि नई तकनीक से बने घरों में घर बोलते हैं, इंसान नहीं। भौतिक सुख सुविधओं से लैस मकान, अत्याधुनिक जीवन शैली में जीवन जीते बच्चों को पसंद आते हैं। उन्हें पुराने घरों में रचा-बसा भावनाओं का वह संसार जो दिन-रात आपसे बतियाता है, रास नहीं आता। इन्हीं ज़रूरतों के चलते नायिका जब पुराना घर बदल कर सामान सहित नए घर में रहने लगती है। उस पुराने घर को छोड़ते समय वह घर मूक दर्शक की तरह उसे देखता रहता है, उसकी पुरानी दीवार से झड़ते प्लास्टर की परत से वह आहत हो जाती है, उसे लगता है, वह स्वयं एक पुराने घर की तरह है। यह भाव उसके कलेजे को छू जाता है। कहानी संवेदना के स्तर पर हृदय को छू जाती है, भाषा प्रवाहमयी है।

-अरुण सातले

000

पाठकों पर कहानी प्रभाव छोड़ती है

कहानी अत्यन्त संवेदनशील और भावुक करने वाली है। प्रेम सिर्फ़ सजीवों से ही नहीं अपितु निर्जीव वस्तुओं से भी होता है। अपनी माटी, अपने जन्मस्थान, अपनी वस्तुओं और अपने घर से प्रेम हो जाना मानवीय स्वभाव होता है, उस पर यदि व्यक्ति, संवेदनशील साहित्यकार हों तो इस प्रेम की कोई सीमा नहीं होती।

प्रस्तुत कहानी में मुख्य पात्र को अपना पुराना घर छोड़ना पड़ता है। अपने लिये नहीं, अपने बच्चों के लिये। जिस घर में वो बारह वर्ष रही जिसे उसने अपने परिश्रम और त्याग से मकान से घर बनाया, सजाया, सँवारा, उसी घर को छोड़ना पड़ा था, अपने बच्चों के लिये। जिस वस्तु से भावनात्मक जुड़ाव हो गया हो उसे छोड़ना कितना कष्टदाई होता है, इसे हर संवेदनशील व्यक्ति समझ सकता है।

"पुरानी तकनीक, आउट डेटेट" -इस वाक्य के साथ कहानी पाठकों को भावुक कर देती है। जब पात्र पुराने घर से अपनी तुलना करते हुए, अपने आप को पुराने घर की तरह त्यज्य मान लेती है। बच्चे उसे छोड़कर जा रहे हैं। ठीक उसी तरह जिस तरह से उन्होंने पुराने घर को छोड़ा था। बच्चे जा रहे हैं, अपनी माँ को छोड़कर। बग़ैर माँ की ओर एक बार देखे। बग़ैर हाथ हिलाये। कहानी बहुत छोटी है किन्तु पाठकों पर बड़ा प्रभाव छोड़ती है। प्रवाहमयी कहानी लेखन हेतु लेखिका को बधाई।

-वैभव कोठारी

000

अत्यंत रोचक कहानी

'टूक-टूक कलेजा' कहानी एक अछूते विषय पर लिखी अद्भुत कहानी है। निर्जीव ईंट पत्थर के बने मकान भी सजीव हो जाते हैं, जब उनसे गहरा अपनत्व जुड़ जाता है और यह प्राय: हर महिला के साथ होता है। क्योंकि वह उस मकान को सजाने, सँवारने और खुशहाल बनाने में अपना विशेष योगदान देती है। किन्तु वह महिला भी साधारण मानव होने के साथ एक माँ भी है, जिस मकान से अपनत्व जोड़कर बातें करती थी। उसी मकान को बच्चों के कारण छोड़ना पड़ा। नए और बड़े मकान में नए सिरे से सजाने सँवारने में पुराने मकान को भूल जाती है। यह एक सामान्य मानवीय गुण है। एक अंतराल के बाद फिर वही समय आता है, जब बच्चों को यह नया घर भी पुराना और छोटा लगने लगता है और वे अपने नए आशियाने में चले जाते हैं। नायिका अपने टूक-टूक होते कलेजे को लेकर दरवाज़े पर खड़ी उन्हें जाते देखती रहती है। अब नायिका को पुराना मकान याद आता है, उससे जुड़ा अपनापन, ममत्व याद आता है, यहाँ नायिका के मनोभावों के साथ पूरा न्याय करते हुए हंसा दीप ने बहुत सही चित्रण कर दिया है। उसकी व्यथा को शब्द दे दिए हैं और कहानी मार्मिक हो गई। दुखांत होते हुए भी कहानी मन को छू लेती है, सर्वथा नवीन विषय पर आधारित इस कहानी में नायिका के अलावा कोई पात्र प्रत्यक्ष रूप से नहीं आता। नायिका को भी कोई संज्ञा नहीं दी गई है, फिर भी कहानी अत्यंत रोचक, भावपूर्ण, मार्मिक है।

-शशि शर्मा, इंदौर

000

मकान बोलता है

कहानीकार हंसा दीप इस कहानी के माध्यम से पाठक वर्ग के हृदय में स्थान पाने में सफल हुई हैं। निश्चित ही जिस पुराने मकान

में हमारे कई साल व्यतीत हुए हों,उसकी एक एक ईंट से हमारा जीवंत सम्पर्क हो जाता है। कहानीकार ने कथन के माध्यम से पुराने मकान के प्रति अथाह प्रेम व्यक्त किया है। कहानीकार को यह अहसास भी हुआ है कि मकान बोलता है। नए मकान में जाते समय पुराने मकान को अलविदा कहना भी मालकिन भूल गई, जिसे बख़ूबी कथन के माध्यम से बताया है। कहानीकार की सफलता है कि कहानी पढ़ने वाला यह समझता है कि यह मुझ पर ही लिखी गई है। बच्चों का बगैर हाथ हिलाए ट्रक में सामान भर के चल देने ही पूरी कहानी को जन्म दिया है। यह सच भी है कि नई तकनीक में घर बोलते हैं इंसान नही।

-सुनील चौरे "उपमन्यु", खण्डवा

000

मिट्टी से जुड़ाव की कहानी

यह कहानी अपनी मिट्टी से जुड़ाव की कहानी है। जब कोई व्यक्ति अपने मन का रेशा-रेशा जोड़कर घर बनाता है। उसे उस घर से अपनों की तरह ही प्रेम हो जाता है। इस मोह में लिपटा वह उसमें जीवंतता की अनुभूति करता है। कहानी की नायिका भी अपने घर से एक जीवंत जुड़ाव महसूस करती है। लेकिन बच्चों के बड़े होने के साथ ही उन्हें वह घर छोटा और पुराना लगने लगता है। जिसमें वे पले, पढ़े और बड़े हुए। अंतत: नया बड़ा मकान ले लिया जाता है। कहानी की नायिका भी जड़ों को छोड़, जाने को तैयार हो जाती है। जाते समय घर अपना प्लास्टर का टुकड़ा गिरा कर बिछुड़ने के दु:ख का इज़हार करते हुए उसे रोकने का असफल प्रयास करता है। लेकिन वह समझ नहीं पाती। अब नए मकान के अकेलेपन में उसे वह सब याद आता है कि कैसे उसने अपने हाथों से घर को सँवारा था। लेकिन नियति, परिस्थिति और बच्चों का स्वार्थ उसे अपने घर से दूर कर मकान में ला पटकता है। जहाँ अकेलेपन से निरन्तर लड़ने के अतिरिक्त और कुछ नहीं बचा था। भले ही मकान बहुत बड़ा था लेकिन वह घर नहीं था। कहानी भावनात्मक और आकर्षक शिल्प में गूँथी गई है। लेकिन कहानी थोड़ा सा और विस्तार माँगती है और कहानी का अंत ज़्यादा स्पष्टता की माँग करता है। शेष सुन्दर कहानी है।

-श्याम सुंदर तिवारी, खण्डवा

000

निर्जीव सामान में जान डाल दी

घर चाहे बड़ा हो या छोटा घर सिर्फ घर होता है। लड़की जब घर में बहू के रूप में प्रवेश करती है तो सपनों से सजा संसार सबसे प्यारा होता है। कहानी की शुरुआत भी इसी भावना से हुई है। छोटा सा आशियाना जिसमें आत्मा का वास होता है उससे विलग होने का दर्द सभी को नहीं होता। जो सहेजता है सँवारता है जो समय नहीं बिताता वर्ण जीवन जीता है रिश्तों को पालता पोस्ता है।

उस स्थान की कीमत सिर्फ और सिर्फ अनुभूतियों से होती है। लेखिका ने ईंट, दीवार, छत, दरवाज़े और रखे हुए निर्जीव सामान में जान डाल दी। जीवंत रिश्तों की कहानियाँ तो बहुत गढ़ी गईं और पढ़ी गईं है। लेकिन घर में एकत्रित किया गया सामान कभी बेवफ़ा नहीं हो सकता। आप उन्हें समय दो, वह आपको सम्मान देते हैं। परिवार के लिए, वक़्त की आवश्यकता अनुसार स्थान परिवर्तन मजबूरी बन जाना, लेकिन प्रकृति से दूर होने की पीड़ा को हंसा दीप ने ख़ुद जिया ही होगा, जिसे कहानी के माध्यम से हम तक संप्रेषित करने रचनात्मकता प्रशंशनीय है। बहुत ही सुंदर तरीके से एक विचार, एक अनुभव, एक परिवर्तन को भीतर तक गहरे महसूस करना। वाकई एक अच्छा उदाहरण है। अधिक फैलाव ना करते हुए आत्मकेंद्रित परिवर्तन को टूक-टूक होते हुए कलेजे का विशेषण देते हुए अपने जुड़ाव को अभिव्यक्त करना अच्छे लेखन की श्रेणी में है। बच्चों का निर्मूल व्यवहार और जैसे प्रेम का या लगाव ना होना, अचानक चले जाना। लेखिका का अकेले रह जाना, जैसे खाली मकान जो खड़ा तो है लेकिन निर्जीव सीमेंट की पपड़ी का गिर कर आलिंगन देना जैसे पल सामान्य न हो कर विशिष्टता के क्षण बन गए हैं। किंतु जाते समय विमुख होकर निकल जाने जैसे व्यवहार से आहत हो जाना अतिसंवेदनशीलता का उदाहरण है।

-डॉ. रश्मि दुधे

000

भावना प्रधान शैली

सरसरी तौर पर ही मैं इस कहानी को पढ़ने को उत्सुक था लेकिन कुछ पंक्तियाँ पढ़कर मेरी उत्सुकता बढ़ती गई और मैं बँध सा गया। किसी कहानी के चित्त में स्थापित हो जाना ही कहानीकार का मुख्य उद्देश्य होता है और फिर वही पाठक के मानस पटल पर अंकित हो जाता है। हंसा दीप की कहानी 'टूक-टूक कलेजा' मानस पटल पर अंकित चित्र सा दस्तावेज़ है। लगाव, मोह अपनेपन का भाव मानव को मिली असाधारण भेंट है जो न केवल मानव को बल्कि सजीवता की परिभाषा लिए हर प्राणी में होती हैं। 'टूक-टूक कलेजा' भी भावनाओं के समंदर की गहराई में छिपे सीप सी है। भावना प्रधान शैली में लिखी गई कहानी संवेदनाओं को उकेरने की कहानी है।

-सन्तोष चौरे 'चुभन'

000

विचारों की सघनता

हंसा दीप की इस कहानी 'टूक-टूक कलेजा' को पढ़कर लगता है- लेखन संवेदना की माँग करता है। यह संवेदना विचारों की गहराई हो। आलंबन या विषय से इतना भावनात्मक लगाव हो कि वह सहजता से पाठक को करुणा तक ले आए। शिल्प, कथ्य, कथानक आपस में इस तरह जुड़ जाएँ कि आप विषय से हट न पाएँ।

इस कहानी को पढ़ते हुए ऐसा भी लगा कि विषय बहुत सामान्य भी हो सकता है, साधारण भी, छोटा भी हो सकता है, बिना जीवित चरित्र के भी। वह वृक्ष भी हो सकता है और घर भी। यानी मानव के साथ शिद्दत से जुड़ी कोई भी चीज़ कहानी रच सकने के लिए काफी है। शेष लेखक की क्षमता, उसका अध्ययन, भावनात्मकता और विचारों की सघनता रचना को रचना बना देती है। कहानी के तत्व तो अत्यंत ज़रूरी हैं ही।

-शैलेन्द्र शरण

000

ब्लडी कोठी

दिव्या माथुर

'चोर भी दो घर छोड़कर डाका डालता है, मम्मी।' बड़े बेटे सुमित की बात सुनकर मानसी का दिल दहल गया; अपने ही छोटे भाई के लिए यह क्या कह गया सुमित? उसके पति अभिनव की मृत्यु को अभी एक हफ़्ता ही तो हुआ था; बच्चे और संबंधी तो क्या, उसे लगा कि हफ़्ते भर में जैसे सारी दुनिया ही बदल गई थी।

'यह आप क्या कह रहे हैं?' सास के दिल पर लगी ठेस को महसूस करते हुए बड़ी बहू सानवी की प्रश्नभरी दृष्टि पति की ओर उठी।

'तू ये अच्छे-अच्छे मुहावरे कहाँ से सीख आया, सुमित?' ग़ुस्से में मानसी ने पूछा तो सुमित ने नज़र चुरा ली, मन ही मन वह भी पछता रहा था कि कम से कम माँ के सामने उसे ऐसा नहीं कहना चाहिए था।

'मम्मी जी, आप इनकी बात को दिल से न लगाइए। ये इनके नहीं, चाची जी के शब्द हैं। चाचा-चाची की बातों में आकर कहीं हम आपस की प्यार-मुहब्बत ही न खो बैठें, सुमित।' सानवी की बात खरी थी किंतु सुमित फिर चिढ़ गया।

'चाचा-चाची ठीक ही तो कहते हैं, अमित और आरुषि को मम्मी ने हद से ज़्यादा सिर पर चढ़ा रखा है।' तिरछी नज़र से देखती हुई सानवी जैसे पति को बताना चाह रही थी कि कम से कम उसे समय और स्थान देखकर बात करनी चाहिए।

'अजीब बात है; अमित और आरुषि कहते हैं कि मैं तुम दोनों को ज़्यादा चाहती हूँ।' मानसी एक ठंडी साँस लेती हुई बेटे-बहू के पास से उठ गई।

अपने को कितना भाग्यशाली समझती आई थी मानसी कि उसका परिवार एक सुखी परिवार था; किसी के घर में कोई कमी नहीं थी, किसी में लड़ाई-झगड़ा नहीं, कोई तेरी-मेरी नहीं। सुमित और सानवी न्यूयॉर्क में रहते थे और बेटी महक और उसका पति डैनियल ऑस्ट्रेलिया में। साल में एक ही बार तो आना होता था उनका किंतु जब भी आते, तोहफ़ों से लदे-फ़दे। बस एक ही कमी रह गई थी; सुमित और सानवी के अपनी कोई औलाद नहीं थी किंतु वे अमित- आरुषि के बच्चों अर्णव और अनन्या पर जान छिड़कते थे।

मानसी को समझ नहीं आ रहा था कि अभिनव के मरते ही घर ऐसे कैसे बिखरने लगा। क्या अभिनव के पास कोई जादू था या फिर उनके डर से कोई बोलता नहीं था। बेटों ने तो अभिनव की तेरहवीं का भी इंतज़ार नहीं किया और लड़ने लगे। सुमित दिल्ली पहुँचा तो तैश में था। वह चाचा-चाची के कहे में आकर तो अमित ताऊ-ताई के बहकावे में आकर अपने ही घर की शांति नष्ट करने पर तुले थे। ससुराल वालों को तो जैसे मौका ही मिल गया था मानसी के घर में हस्तक्षेप करने का और उन्होंने घर को कुरुक्षेत्र का मैदान बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। क्या मानसी की ही आँखें बन्द थीं जो वह देख नहीं पाई कि उसके बेटे-बहुओं को पट्टी पढ़ाई जा रही थी? वह जानती थी कि अमित-आरुषि ताऊ-ताई के साथ बहुत हिल-मिल गए थे किंतु

दिव्या माथुर
83 ए, डीकन रोड, लंदन एन डब्लू-2 5 एन एन, यू.के.
ईमेल- vatayanpoetry@gmail.com

उसने इसे अन्यथा नहीं लिया था।

अभी हाल ही में तो चाचा-चाची पूरा एक महीना अमेरिका में सुमित और सानवी के साथ रहकर लौटे थे; उनके पाँव ज़मीन पर नहीं पड़ रहे थे। सुमित-सानवी के महल जैसे घर और उसमें सजे आधुनिक उपकरणों के बारे में जब वे अमित-आरुषि को बढ़ा-चढ़ा कर बताते तो उन्हें लगता कि वे यहाँ केवल झक मार रहे थे। जानते हुए भी कि देवर-देवरानी उसके परिवार में मन-मुटाव पैदा करने का प्रयत्न कर रहे थे, मानसी ने उनसे कभी यह भी जानने का प्रयत्न नहीं किया कि वे अमेरिका में सुमित को क्या पाठ पढ़ा कर आए थे; क्योंकि वह जानती थी कि सानवी चाचा-चाची की बातों में आने वालों में से नहीं थी। किंतु यहाँ तो उसका अपना बेटा ही बहक गया था। अभिनव के होते हुए उसने कभी किसी की परवाह ही नहीं की थी और न ही कभी किसी की हिम्मत हुई कि कोई चूँ भी कर जाए।

'शांति-पाठ के लिए मन्दिर बुक कर दिया था न तूने अमित?' मानसी ने तय किया कि वह तेरहवीं के सम्पन्न हो जाने तक अपने ऊपर अंकुश रखेगी।

'हाँ मम्मी, पंडित जी कह रहे थे कि हमें तीन बजे तक हॉल ख़ाली कर देना होगा।' अमित ने रूखे स्वर में जवाब दिया।

'आरुषि, सुबह तुम बिज़ी थीं, हलवाई आया था। ज़रा उसे फ़ोन पर मेन्यू बता देना।' मानसी ने कहा।

'मैंने उसे दोपहर को ही फ़ोन पर बता दिया था।' आरुषि भी मुँह सुजाए बोली।

'करें-धरें सब हम और भैय्या-भाभी चले आते हैं अपना हक़ जमाने।' अमित फूट पड़ा।

'कैसी बातें कर रहा है तू अमित?' चाहकर भी मानसी चुप न रह सकी। मन ही मन सोचने लगी कि बड़े मियाँ तो बड़े मियाँ, छोटे मियाँ सुभान अल्लाह!

'ठीक ही तो कह रहे हैं ये, मम्मीं। कभी इलेक्ट्रिशियन को बुलाओ तो कभी गैस वाले को, कभी टॉयलेट्स बन्द तो कभी छत टपकने लगी। इस ब्लडी कोठी को सँभालने के लिए अमित ही को तो भागते रहना पड़ता है। तब कहाँ होते हैं आपके प्यारे बेटा-बहू?' अमित से चिपक कर खड़ी आरुषि ने सास को उलाहना दिया तो मानसी के ग़ुस्से का पारावार न रहा।

'आरुषि, तुम्ही लोग रहते हो इस ब्लडी कोठी में तो इसे ठीक कराने क्या कोई और आएगा?'

'साल में एक बार भैया और महक आते हैं और सब उनके गुण गाते नहीं थकते। कभी उन्होंने पूछा हमसे कि घर की अपकीप कैसे करते हैं हम?' अमित बोला।

'सुमित या महक की जायज़ाद को किराए पर उठाने से पहले तुमने तो उनसे झूठ को भी नहीं पूछा कि उन्हें कोई एतराज़ तो नहीं या कि जो किराया आ रहा है, कहीं उन्हें उसकी ज़रूरत तो नहीं।'

'जब वे यहाँ रहते ही नहीं तो उन्हें क्या ऑबजैक्शन हो सकता है? ख़ाली पड़े-पड़े कोठी का जो हाल होता...' आरुषि ने दलील पेश करनी चाही।

'उनकी जायदाद से नब्बे हज़ार रुपये महीना किराया आ रहा था अब तक। इसी ब्लडी कोठी के किराए की वजह से मज़े उड़ाते रहे हो तुम सब।' मानसी बोलती ही चली गई, 'अर्णव और अनन्या के ऊपर शिफ़्ट हो जाने के बाद भी तुम्हें चालीस हज़ार तो मिल ही रहे हैं। नीचे वाली मंज़िल की रीफ़र्बिशमैंट के बाद सत्तर-अस्सी हज़ार और मिलने लगेंगे। इस ब्लडी कोठी में मज़े उड़ाओ तुम और इसकी अपकीप करें विदेश में बसे तुम्हारे भाई-बहन, भई वाह!' माँ को ग़ुस्से में देखकर वे दोनों चुप लगा गए। उन्हें अन्देशा नहीं था कि मानसी उन्हें यूँ लताड़ भी सकती थी।

घर में एक ख़ौफ़नाक सन्नाटा छा गया, जिसमें अर्णव और अनन्या की आवाज़ें आसमान में घिरे काले बादलों में कभी-कभी बिजली की सी कौंध छोड़ जातीं। बजाय पति का शोक मनाती, मानवी बच्चों के झगड़े सुलझाने में लगी थी। अभिनव ज़िंदा होते तो मजाल थी किसी की कि वे मानसी से इस बद्तमीज़ी से पेश आते!

अभिनव की आकस्मिक मृत्यु को मानसी के लिए झेलना ही बहुत कठिन था, उस पर बच्चों की यह तू-तू मैं-मैं। उसने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि कोई ऐसे अचानक उठकर चला जाएगा। पिछले रविवार की शाम की ही तो बात है। रोज़ की तरह, हल्के भोजन के बाद अभिनव सामने ही बाग में टहल रहे थे कि उनके सीने में जलन होने लगी; लौटकर वह लेट गए। मानसी ने कच्चा दूध पीने को दिया, फिर पुदीनहरे की दो गोलियाँ भी दीं किंतु जलन थी कि बढ़ती ही चली गई। दफ़्तर से अमित लौटा तो वह पिता को अस्पताल ले चलने की ज़िद करने लगा।

'डॉक्टर से मज़ाक उड़वाना है तो चलो।' मानसी और अमित उन्हें ज़बरदस्ती कार में बैठाकर ग्रेटर कैलाश स्थित एक प्राइवेट अस्पताल की ओर चल दिए।

अभी पाँच मिनट भी नहीं हुए थे कि अचानक अभिनव की तबीयत बिगड़ने लगी; वे सीधे एमर्जैंसी में पहुँचे। डाक्टर ने बताया कि उन्हें दिल का दौरा पड़ा था। जब मानसी और अमित को उनसे मिलने दिया गया तो वह बहुत कमज़ोर लग रहे थे किंतु ख़तरा टल गया था। रात के बारह बजे के क़रीब अभिनव ने अमित से घबराई हुई मानसी को घर ले जाने को कहा, जो वहाँ से टस से मस होने को तैयार नहीं थी। डॉक्टर के इस आश्वासन पर कि अभिनव अब ख़तरे से बाहर थे और उन्हें आराम की आवश्यक्ता थी, वे दोनों ही घर लौट आए।

रात के क़रीब डेढ़ बजे फ़ोन पर सूचना दी गई कि अभिनव को दिल का एक भारी दौरा पड़ा और इस बार वे उन्हें बचा नहीं सके। पड़ौसियों और अभिनव के मित्रों ने क्रिया-कर्म संबंधी सब काम सँभाल लिए थे। मानसी, अमित-आरुषि एवं अर्णव-अनन्या सभी एक सकते की सी हालत में थे। सुबह-सुबह निगम बोध घाट पर अभिनव का अंतिम संस्कार कर दिया गया।

मानसी को घर ऐसा ख़ाली लग रहा था कि जैसे वहाँ से केवल अभिनव ही नहीं, बहुत सारे लोग अचानक चले गए थे। सुमित-सानवी कहीं जाकर तीसरे दिन ही पहुँच पाए थे। उनके रहने की व्यवस्था ऊपर अर्णव और

अनन्या के कमरों में की गई थी, पोता-पोती नीचे दादी के कमरे में वापिस आकर आश्वस्त थे। समय की नाज़ुकता को देखते हुए किराएदार साहनीज़ अपना बाथरूम-टॉयलेट शेयर करने कि लिए राज़ी हो गए थे।

'दिस ब्लडी कोठी इज़ आवर्स एंड वी हैव टु शेयर टॉयलेट्स!' सुमित फिर भड़क उठा था, साहनीज़ अपना सा मुँह लेकर रह गए।

'कोई बात नहीं बेटा, कुछ ही दिनों की तो बात है। हमें पता होता कि ऐसा होगा तो...' अशांत मानसी ने सुमित को शांत करना चाहा।

'आपको तो कुछ नहीं पता था मॉम, डैड इतने दिनों से बीमार थे, आपने हमें बताया तक नहीं, अमित हमें एक फ़ोन ही कर देता...' सुमित भाव-विह्वल हो उठा।

'वी वर रन्निंग लाइक हैडलैस चिकंस, डैम इट...' अमित को भी ग़ुस्सा आ गया।

'मोबाइल्स के ज़माने में भागते-दौड़ते भी फ़ोन किया जा सकता है, अमित, पर तुम तो चाहते ही नहीं थे कि हम लोग समय पर पहुँच पाते।'

'वाट डू यू मीन?' मेज़ पर घूँसा मारते हुए अमित बोला।

'मदर्स डार्लिंग, यू वेरी वेल नो वाट आई मीन।'

'चुप हो जाओ, बहुत हो गया, अभी तुम्हारे डैड की तेरहवीं भी नहीं हुई है और तुम दोनों भाई चूहे-बिल्ली की तरह लड़ रहे हो।' मानसी का दिमाग़ भन्ना रहा था। कहीं वह बुरा सपना तो नहीं देख रही थी?

'मुझे तो बस आप यह बता दीजिए, मम्मी, कि हमें डैड की डेथ के बाद ही ख़बर क्यों दी गई?'

'सब इतना अचानक हुआ, सुमित, कि.?'

'एक ब्लडी कोठी के लिए ये लोग इतना गिर गए कि आख़िरी वक्त हम डैड से मिल भी न सके।' माँ के सीने से लगा सुमित सुबकने लगा तो मानसी घबरा गई कि कहीं अमित यह न सोचे कि वह सुमित की तरफ़दारी ले रही थी।

'वाट दि हैल इज़ ही टौकिंग एबाउट, मॉम?' कहता हुआ अमित भाई की ओर लपका तो आरुषि उसे ज़बरदस्ती घसीटती हुई नीचे ले गई।

अर्णव और अनन्या अवाक खड़े थे; ताऊ-ताई जी पहले जब भी अमेरिका से आते थे, इस तिमंज़ली कोठी में ख़ुशियों का गदर मच जाता था, जिसे जीवन भर की कमाई लगाकर अभिनव और मानसी ने बड़े प्यार से बनवाया था अपने तीनों बच्चों के लिए। बीच के खन में अभिनव-मानसी के साथ अमित-आरुषि और अर्णव-अनन्या रहते थे। सुमित के लिए नीचे वाला फ़्लैट था। महक को दूसरी मंज़िल ही पसन्द थी, जिसकी छत पर एक स्पोर्ट्स-रूम भी था। विवाह के बाद, महक वाले फ़्लैट को भी किराए पर चढ़ा दिया गया था। अमित की तनख़्वाह पूरी की पूरी बैंक में जमा हो जाती थी; आरुषि एक महारानी की तरह रहती और ख़र्च करती थी। घर में दो नौकरानियों के अलावा उसने झाड़ू-पोंछे और कपड़े धोने-इस्त्री करने वाली अलग लगा रखी थीं। माली और ड्राइवर तो थे ही। मानसी को यह समझ नहीं आ रहा था कि अमित और आरुषि को और क्या चाहिए?

अर्णव-अनन्या जब पाँच और छह वर्ष के हुए तो आरुषि ने ऊपर की मंज़िल पर बने दो शयन-कक्ष उनके लिए और ख़ाली करवा लिए। बाक़ी के बचे दो शयन-कक्ष, बैठक, रसोईघर और बाथरूम-टॉयलेट अब भी किराए पर चढ़े थे। सुमित ने कोठी में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई थी और करोड़पति माँ-बाप की इकलौती बेटी सानवी को भी पैसे की कोई कमी नहीं थी; किंतु चाचा और चाची ने अपने अमेरिका-वास के दौरान सुमित को न जाने क्या पट्टी पढ़ाई कि वह बात-बात में भड़कने रहा था।

'हमने तो सुना है कि तुम्हारे हिस्से में आरुषि अपना बुटीक खोलने जा रही है।' न्यूयॉर्क पहूँचते ही चाची ने सुमित और सानवी को एक नई ख़बर सुनाई।

'घर किराए पर उठाने से यह बेहतर रहेगा, हैं न सुमित?' सानवी ने पति को सावधान करना चाहा कि घर के मामले में वह चाचा-चाची की बात न ही सुने तो अच्छा था।

'सानवी, तुम तो बहुत ही गलिबल हो।' चाचा बोले थे।

'सचमुच सानवी, आरुषि धीरे-धीरे पूरी कोठी पर अधिकार कर लेगी और तुम्हें कुछ पता भी नहीं चलेगा, ऊपर की मंज़िल तो उसने पहले ही हथिया ली है।' चाची ने हमदर्दी दिखाते हुए कहा।

'चाची जी, हमें तो दिल्ली लौटना नहीं है, आरुषि को करने दें जो वह करना चाहती है, क्यों सुमित?'

'सानवी के माँ-बाप ने तो अपनी सारा धन-जायदाद उसके नाम कर दी है। तुम्हारा अपना क्या है?' सानवी को डर लगा कि मंथरा सी चाची का जादू कहीं सुमित पर चल ही न जाए।

'घर-जंवाई बनकर न रह जाना, सुमित। भैया ने कुछ सोच समझकर ही ग्राउंड फ़्लोर तुम्हारे नाम किया होगा, हैं के नईं?' चाचा ने बड़े भाई का हवाला दिया तो सुमित को लगा कि एक केवल चाचा-चाची थे, जिन्हें उसकी सचमुच परवाह थी।

इस विषय को लेकर सुमित और सानवी में जब तब बहस छिड़ने लगी। अभिनव की मौत का तो नहीं किंतु कोठी के हर हिस्से में मातम हो रहा था।

मानसी को फ़िक्र ही नहीं ख़ौफ़ था कि इन हालात में उसके पति की तेरहवीं केवल एक तमाशा न बन कर रह जाए।

अगली ही सुबह बेटी महक और डैनियल भी आ पहुँचे, जिन्हें हवाईअड्डे से लिवाने के लिए कुनाल मामा और जयश्री मामी पहुँचे थे, जो हाल ही में ऑस्ट्रेलिया में उनके मेहमान रह चुके थे। कम से कम डैनियल के तो वे विश्वास-पात्र बन ही चुके थे।

'अरे, तुम दोनों कितनी मेहनत करते हो, घर की सफ़ाई से लेकर बर्तन माँजने तक, कपड़े धोने और इस्त्री करने से लेकर भोजन पकाने तक सारे काम ख़ुद करते हो और वहाँ देखो अमित और आरुषि के क्या ठाठ हैं। दो-दो फ़ुल टाइम नौकरानियों के अलावा माली, ड्राइवर और दो पार्ट-टाइमर्स हैं उनके पास। यह सब तुम्हारे फ़्लैट के किराए के बल पर ही तो हो रहा है।' महक के तो नहीं किंतु डैनियल के कान अवश्य खड़े हो गए थे।

महक और डैनियल के रहने की व्यवस्था

ग्राउंड-फ़्लोर पर की गई थी, जहाँ इन दिनों लिपाई-पुताई का काम चल रहा था।

'अपना हिस्सा लेकर चाहे तुम किसी भिखारी को दे दो पर ऐसों के लिए क्यों छोड़ो जो अपने ही बड़े भाई और बहन का हिस्सा हड़पने की सोच रहे हों।'

कुनाल मामा उन्हें समझा रहे थे।

'हाँ, तुम्हारे हिस्से में अर्णव और अनन्या को सैटेल करने से पहले उन्हें तुमसे कम से कम पूछ तो लेना चाहिए था।' मामी ने आग में घी डाला। महक ने उनकी बातें अनसुनी करनी चाहीं किंतु डैनियल उनकी बातों को बड़े ध्यान से सुन रहा था।

'बट दे शुड हैव ऐट लीस्ट इंफ़ौर्म्ड अस, डार्लिंग।' डैनियल ने महक से कहा। महक के दिमाग़ में आया कि उसके निजी मामले में डैनियल क्यों टाँग अड़ा रहा था? पिछले चार सालों में डैनियल एक बार भी अपनी मर्ज़ी से दिल्ली आने को राज़ी नहीं हुआ था। ससुर की अकस्मात् मृत्यु का समाचार सुनकर वह झटपट दिल्ली चलने को तैयार हो गया था; क्या उसे अपनी पत्नी के हिस्से की जायदाद में सचमुच दिलचस्पी थी? महक को यह बात अच्छी नहीं लगी।

'डैनियल, वाए डू वी नीड पापाज़ हैंड-आउट्स?' महक ने उससे पूछ ही लिया।

'वाए नौट? यू वर हिज़ डार्लिंग डौटर, ही हैज़ लैफ़्ट इट फ़ौर यू. अवर किड्स विल बी सो प्राउड औफ़ देयर इन्हैरिटैंस वन डे, हनी।' डैनियल का तर्क सुनकर महक को लगा कि शायद वह ठीक ही कह रहा था।

कोठी में अब सचमुच मातम मनाया जा रहा था - ऊपर की मंज़िल पर सुमीत-सानवी के साथ चाचा-चाची, पहली मंज़िल पर अमित-आरुषि के साथ ताऊ-ताई जी और ग्राउंड फ़्लोर पर महक-डैनियल के साथ मामा-मामी, सब के सब ब्लडी कोठी और किराए को लेकर परेशान थे।

तन और मन से थकी हुई विधवा मानसी को तीन-मंज़िला कोठी में एक कोना भी नहीं नसीब नहीं हुआ जहाँ वह पति का शोक ठीक से मना सकती।

'अमित ने तुम्हें समय पर ख़बर कर दी होती तो कम से कम तुम अपने पिता से आख़िरी बार मिल तो लेते।' चाची ने अपनी बात फिर दोहराई।

'क्या जाने अमित और आरुषि का प्लैन सफ़ल हो ही गया हो। उनके कहने में आकर शायद तुम्हें जायदाद से बेदखल कर दिया हो।' चाचा बोले।

'जो भी हो, हमें नहीं चाहिए इस कोठी का एक भी कमरा। चलो सुमित, हम लोग होटल में जाकर रहते हैं।' तंग आकर सानवी बोली।

'नहीं नहीं, अमित-आरुषी यही तो चाहते हैं कि तुम ग़ुस्से में उठकर चल दो ताकि मानसी तुम्हें धिक्कारे। होटल चले जाओगे तो लोग भी यही कहेंगे न कि बाप की तेरहवीं तक भी नहीं रुक सके।' चाची घबराई कि कहीं उनका बना बनाया खेल न बिगड़ जाए।

'तुम्हें किसका डर है सुमित? यह तुम्हारी कोठी है, कम से कम जब तक भैया की विल नहीं पढ़ी जाती तब तक रुको।' चाचा ने कहा।

उधर माँ बिखरे हुए अमित को सँभाल रही थीं, जो आरुषि पर अपनी झल्लाहट उतार रहा था।

'ऊपर नीचे सब जगह पाँव फैलाकर तुमने ही उन सबको बोलने का मौका दिया है, आरुषि। भैया और महक दोनों मुझे ही दोषी ठहरा रहे हैं।'

'अमित, तुम अपना सारा ग़ुस्सा मुझ पर उतारना चाहते हो तो ठीक है। माँ ने तुमसे कहा था न कि भैया और महक को फ़ोन पर बता दो कि डैड को अस्पताल ले जा रहे हैं।'

'मैंने सचमुच नहीं सोचा था कि डैड...' अमित की रुलाई छूट गई।

'सुबह ही तो फ़ोन कर दिया था अमित ने। कुछ घंटों की देरी के लिए सुमित न जाने क्यों इतना शोर मचा रहा है।'

'चाचा-चाची ने उन्हें न जाने क्या-क्या बताया है कि वे हमसे इतने ख़फ़ा हैं।' आरुषि बोली।

'जो भी हो, अभी तो शांति रखो। लोगों की आँख-कान इन दिनों हमारी कोठी पर ही लगे हैं,' मानवी ने उनसे चुप हो जाने की प्रार्थना की।

'ब्लडी कोठी, मुझे अपना हिस्सा भी नहीं चाहिए, मॉम। जैसे ही पापा की तेरहवीं हो जाएगी, हम दुबई चले जाएँगे। आरुषि के मम्मी-पापा हमें कब से वहाँ सैट्टल होने के लिए कह रहे हैं।'

नीचे डैनियल और महक को समझाया जा रहा था कि इस दुनिया में नादान बनकर नहीं जिया जा सकता। यह कोई छोटी मोटी बात नहीं थी, इस समय कोठी की क़ीमत कम से कम बीस करोड़ तो होगी ही। वैसे बात पैसों की नहीं, उसूल की थी।

'अमित-आरुषि ने तेरा एक बाल भी बाँका किया न महक, तो मैं उनकी ऐसी की तैसी कर दूँगा।' गोल-मटोल मामा अपने फूले हुए गाल बजाते इधर से उधर लुढ़कने लगे।

'डोन्ट वरी, वी आर विद यू, 24/7।' जयश्री मामी के इशारे पर कुनाल डैनियल के गले में हाथ डाले बाहर निकल गया ताकि वह महक से अकेले में बात कर सके।

पीछे वाली बगिया में एक हफ़्ते के लिए हलवाई बैठा दिए गया था; इतने बड़े परिवार का चाय-नाश्ता, दोपहर और रात का भोजन घर की दो नौकरानियाँ तो अकेले सँभाल नहीं पातीं। घर के सभी सदस्य बहुत व्यस्त थे; बेचारों को नहाने-धोने का भी होश नहीं था।

दोपहर के भोजन के लिए परिवारजन बगिया में इकट्ठे हुए। थालियों में कते-सूत से चेहरों को निहारते हुए लोग एक दूसरे से नज़र मिलाने को भी तैयार न थे। हाथों में छुरी-काँटे न हुए तीर-तलवार हो गए; सबकी आँखों में गोला बारूद भरा था। मानसी को लगा कि जैसे अभिनव का प्रिय बगीचा कुरुक्षेत्र में बदल गया हो। सफ़ेद साड़ी में लिपटी मानसी भगवान् से मन ही मन पूछ रही थी कि अभिनव के जीवन भर की कमाई और उसकी जी-तोड़ मेहनत का क्या यही सिला मिलना था उसे? यकायक वह फूट-फूट के रोने लगी।

'दादी, क्या हुआ? आप रो क्यों रही हो?' अनन्या आकर दादी से चिपट गई।

'आप सभी दादी का दिल दुखा रहे हैं।' ग़ुस्से में सबकी ओर देखता हुआ अर्णव बोला। पोता-पोती दादी को लेकर बैठक में चले गए।

देवर-देवरानी, जेठ-जेठानी और भाई-

भाभी ने बारी-बारी आकर मानसी के कन्धे थपथपाए कि वह अपने को नहीं सँभालेगी तो कैसे चलेगा? घर लौटने से पहले सभी ने एक दूसरे से बचे हुए भोजन के पैकट्स ले जाने का आग्रह किया और फिर पैकेट्स उठाए वे सब अपने अपने घर लौट गए; खेल ख़त्म हो चुका था।

जल्दी ही मानसी का पूरा परिवार बैठक में उसके इर्द-गिर्द इकट्ठा हो गया; सब अवसाद से भरे थे। जादूगर के चुटकी बजाते ही जैसे बेहोश को होश आ जाए, कुछ ऐसी ही हालत थी उन सबकी।

'सौरी मम्मी, पापा की डेथ ने मुझे पागल कर दिया था।' सुमित और कुछ न कह सका। उसने माँ को सीने से चिपटा लिया, जो हिचकियाँ ले लेकर एक बार फिर रोने लगीं कि जैसे उनका दिल चूर-चूर हो जाएगा।

'दे डिड नौट नो हाउ टु एक्सप्रैस देयर ग्रीफ़।' सानवी ने अपना फ़लसफ़ा झाड़ा, जिससे सब सहमत थे।

'मम्मी, मेरे नाम तो बस आप अपना प्यार कर दीजिए। ज़िंदगी भर आपने मुझे कोई कमी नहीं होने दी। मैंने जो कुछ भी एचीव किया है, आपकी वजह से ही तो किया।' महक भी माँ से आ चिपकी।

'महक ठीक कह रही है। वादा कीजिए कि हमारे जीते जी अब आप कभी नहीं रोएँगी।' अमित बोला।

'आप नाहक रो रही हैं, आपके तीन-तीन कमाऊ बच्चे हैं, दो प्यारे-प्यारे पोता-पोती और ...' सानवी ने कहा।

'और यह ब्लडी कोठी।' दीवारों और छत पर नज़र दौड़ाती हुई मानसी बोली।

'नहीं, हमारी यह प्यारी-प्यारी कोठी, जो हर साल हमें पनाह देती है।' सुमित ने कहा।

'यह न होती तो हम सालाना पंछी कहाँ आकर बैठेंगे?' महक बोली।

कुछ ही देर में सबने अपने-अपने गिले-शिकवे दूर कर लिए थे, एक दूसरे से 'सॉरी' कहते हुए सब के सब सुबक रहे थे और मानसी एक बार फिर उन्हें ढाढस बँधाने में जुटी थी।

000

लघुकथा

आवाज़

सुभाष चंद्र लखेड़ा

दुष्यंत बाबू आजकल अस्वस्थ चल रहे हैं - यह ख़बर मुझे एक मित्र से मिली। इससे पहले कि मैं आपको आगे कुछ बताऊँ, यह बताना उचित होगा कि दुष्यंत बाबू सन् 2007 में निदेशक के पद से सेवा-निवृत्त हुए थे। मुझे भी कुछ वर्ष उनके साथ कार्य करने का मौक़ा मिला था लेकिन बाद में मैं किसी दूसरे संस्थान में ट्रांसफर हो गया था।

ख़ैर, उनके यहाँ मेरा तीज-त्यौहार पर आना-जाना होता रहा। हाँ, पिछले सवा दो साल के कोरोना काल में उनके यहाँ मैं कभी नहीं गया। इधर जब से क़ोरोना के संक्रमण दर में गिरावट हुई है और सरकारी पाबंदियाँ हटी हैं, मैं भी लोगों से मिलने-जुलने लगा हूँ।

बहरहाल, मित्र ने जैसे ही मुझे दुष्यंत बाबू के अस्वस्थ होने की ख़बर बताई, मैंने तय कर लिया कि मैं उनके हालचाल पूछने ज़रूर जाऊँगा।

कल मौक़ा मिला और मैं उनसे मिलने चला गया। उनका निवास स्थान मेरे फ़्लैट से लगभग डेढ़ किलोमीटर दूर यहीं द्वारका, दिल्ली में है। उनका बेटा विवाहित है और वह आजकल अपने परिवार के साथ गुरुग्राम में रहता है। हाँ, दुष्यंत बाबू के साथ आजकल उनकी पत्नी के अलावा उनके तीसरे भाई का बेटा रहता है जो आईएएस की तैयारी कर रहा है।

उनके यहाँ जाने से पहले मैंने उन्हें फ़ोन कर दिया था। मैं पहुँचा तो वे दरवाज़ा खोले मेरा इंतज़ार कर रहे थे। मैंने उन्हें प्रणाम किया और फिर उनका इशारा मिलने पर उनके सामने के सोफे पर बैठ गया।

मैंने जैसे ही उनसे उनकी तबीयत के बारे में पूछा, वे बोले, "मामूली बुख़ार या बदन दर्द होना इस उम्र में स्वाभाविक है लेकिन मेरी तो आवाज़ ही चली गई ?"

उनसे यह सुनते ही मैं उन्हें अचरज से देखने लगा। अच्छी भली आवाज़ है उनकी और वे कह रहे हैं कि मेरी आवाज़ चली गई। मेरे चेहरे पर उपजे सवाल को समझते हुए वे गंभीर स्वर में बोले, "पवन ! तुमने तो वह वक्त ख़ूब देखा है जब मेरी आवाज़ को सुनते ही घर या बाहर, सभी जगह लोग भागते हुए आते थे। सेवा-निवृत्त होने के बाद सब कुछ बदल गया और अब तो ऊँची आवाज़ में बोलने पर भी मेरी कोई नहीं सुनता।"

000

सुभाष चंद्र लखेड़ा
सी-180, सिद्धार्थ कुंज, सेक्टर-7, प्लाट नंबर-17, द्वारका, नई दिल्ली- 110075
ईमेल- subhash.surendra@gmail.com

हाकिम का पाजामा

नीरज नीर

वह एक बहुत ही गरम सुबह थी। बिजली घरों में कोयले की कमी के कारण बिजली की आपूर्ति कम हो रही थी, इसलिए उस उमस भरी सुबह में बिजली नदारद थी। घर के भीतर से अकुलाया हुआ, ठंडी हवा के लिए मैं बाहर बरामदे में आकर बैठ गया और क्यारियों में लगे फूलों को निहारने लगा। पौधे कुम्हलाए हुए दिख रहे थे। उन्हें पानी की सख़्त ज़रूरत थी। लेकिन जब तक बिजली न आ जाए, पानी खर्च करना समझदारी नहीं थी। बिजली का कोई भरोसा नहीं था। जब से कोयले की आपूर्ति कम हुई थी, बिजली लंबे समय तक ग़ायब रहती थी। पीने और खाना बनाने के लिए पानी की ज़्यादा ज़रूरत थी। यही सोचकर पौधों में पानी देना मैंने मुल्तवी कर दिया।

सहसा मैंने देखा कि फूलों की क्यारियों के बीच एक सफेद चमकीली चीज़ पड़ी है। मैं लपक कर वहाँ गया और उसे उठा लाया। मेरे आश्चर्य का कोई ठिकाना नहीं रहा। वह एक रेशमी पाजामा था, उसमें बेल-बूटे जड़े थे। इतना सुंदर पाजामा किसका होगा और यह मेरे अहाते में कैसे आ गया? पाजामा देखने से बहुत कीमती लग रहा था। मैंने उसे सहलाया, वह बहुत ही मुलायम था। उतना सुंदर और मुलायम रेशमी कपड़ा मैंने अपनी ज़िंदगी में कभी नहीं देखा। वह आश्चर्यजनक रूप से आम कपड़ों की तुलना में ठंडा भी था। मुझे उसे पहनने की बड़ी ही तीव्र इच्छा हुई। मैं फौरन ही भीतर गया और उसे पहन लिया। मुझे ठंडक महसूस हुई। अहा!

अगर ऐसा ही ऊपर का कुर्ता भी रहता तो कितना अच्छा होता! थोड़ी देर मैं इधर-उधर बरामदे में ही टहलता रहा फिर ऊपर एक पुरानी कमीज़ डालकर घर के बाहर सड़क पर निकल आया। उस पाजामे को पहनकर मेरी चाल में एक अजीब सी अकड़ आ गई थी, मैं ऊँट की तरह गर्दन ऊँची करके चल रहा था। मैं अपने भीतर एक बदलाव अनुभव करने लगा था। मैं आत्म विश्वास से भरा हुआ था। राह चलते कुछ लोग मेरे पाजामे को गौर से देख रहे थे। उनका इस तरह देखना मुझे अच्छा लग रहा था। जो लोग मुझे नहीं देख रहे थे, उन्हें मैं बेवकूफ़ और

नीरज नीर
आशीर्वाद, बुद्ध विहार,
पो ऑ अशोक नगर, राँची – 834002,
झारखंड
मोबाइल- 8789263238
ईमेल- neerajcex@gmail.com

बदमाश समझ रहा था। जब कुछ लोगों ने मुझे सलाम भी किया तो मुझे बड़ा अच्छा लगा।

थोड़ी देर बाद जब मैं घर लौटा तब तक अख़बार आ गया था। अख़बार वाला रोज़ की तरह अख़बार को रोल करके बरामदे में फेंक कर चला गया था। मेरी चाय पीने की इच्छा हुई। लेकिन फिर सोचा पहले अख़बार पढ़ लिया जाए। मैं वहीं लगी कुर्सी पर बैठकर अख़बार पढ़ने लगा। मैंने रोज़ की तरह अख़बार में सबसे पहले खेल की ख़बरें देखी और फिर सूडोकू बनाने लगा। उसके बाद जब मैंने मुख्य समाचारों के लिए मुख्य पृष्ठ देखा तो चौंक पड़ा।

अख़बार में जो पहले ही पन्ने पर सबसे महत्त्वपूर्ण ख़बर थी, वह यह कि बड़े हाकिम का पाजामा चोरी हो गया है एवं बड़े हाकिम के सिपाही उस पाजामे को ढूँढ़ रहे हैं और चोर को पकड़ते ही फाँसी पर लटका दिया जाने का हुक्म हुआ है। यह पढ़ते ही मुझे करंट सा लगा। कहीं यही तो हाकिम का पाजामा नहीं है? मैंने अपने पैरों की ओर देखा। पाजामा मेरे पैरों में ख़ूब फ़ब रहा था। ऐसा लगता था कि दर्ज़ी ने मेरी ही नाप से इसे सिला था। शायद हाकिम का शरीर मेरे ही बराबर हो। आख़िर हाकिम भी तो आदमी ही है। ऐसा मैंने सोचा। मैंने हाकिम को कभी नहीं देखा था। लेकिन हाकिम का पाजामा मैंने पहना हुआ है, यह सोचकर ही मेरे देह में भय से झुरझुरी होने लगी थी। कहीं मुझे ही चोर न समझ लिया जाए! पहले तो मैं वहीं पर पाजामा खोलने का प्रयत्न करने लगा फिर मुझे एहसास हुआ कि मैंने पाजामा के भीतर कुछ नहीं पहना है। सड़क किनारे खुले बरामदे में यूँ नंगा होना उचित नहीं है, कोई देख ले तो पागल समझेगा, यही सोचकर मैं दौड़कर भीतर गया और पाजामा खोल दिया।

मैंने पड़ोस के घर में झाँककर देखा, उनके घर में अभी तक कोई चहल-पहल नहीं थी। वे लोग शायद अभी सोकर नहीं उठे थे। मेरा पड़ोसी भी अजीब आदमी था। वह शराबी था और अक्सर शराब पीकर देर से घर आता था। घर आने के बाद देर तक उनके घर में आपस में लड़ाइयाँ होती थी, इसी लिए वे लोग देर से ही सोकर उठते थे। मुझे वे लोग ज़रा भी पसंद नहीं थे। मैंने उन्हें कई बार समझाया था कि इस तरह से देर रात झगड़ा करना और देर से सुबह उठना अच्छी बात नहीं है, पर उन्होंने मेरी बात पर कभी ध्यान नहीं दिया, उल्टे उन्हें मेरी बात अच्छी नहीं लगती थी और मुझे सबक सिखाने की धमकी देते थे। एक बार तो उनके झगड़े और शोर-शराबे से ऊबकर मैंने पुलिस भी बुला ली थी। लेकिन पुलिस भी क्या करती, आपस में पति -पत्नी का मामला था। पुलिस के आने के बाद पत्नी भी पति के पक्ष में बोलने लगी और उलटे मुझ पर ही परेशान करने का आरोप लगा दिया था।

ख़ैर, यह समय उनके बारे में सोचने का नहीं था। अभी इस पाजामे के बारे में सोचने का समय था, जिसके बारे में अब तक मुझे पूरा यकीन हो गया था कि यह पाजामा हाकिम का ही था। पाजामे में लगा रेशम, उसकी अच्छी सिलाई और उसपर लगे चमकीले बेल-बूटे, इस बात की बराबर तसदीक कर रहे थे कि यह कोई मामूली पाजामा नहीं था। मुझे पहले ही समझ जाना चाहिए था लेकिन मैंने इतनी दूर की बात नहीं सोची थी। हाकिम का पाजामा भी हाकिम की तरह विशिष्ट था।

मैंने इधर-उधर देखा और उस पाजामे को पड़ोसी के अहाते में फेंक दिया। फिर निश्चिंत होकर मैं घर के भीतर चला गया। घर के भीतर जाकर मैंने चाय बनाई, चाय पी और कमरे में लेटकर टीवी देखने लगा। पाजामे का रेशमी एहसास अभी तक मेरे शरीर को सहला रहा था। साथ ही एक सुकून भी था कि गले पड़ी मुसीबत से जल्दी ही छुटकारा मिल गया था। कुछ घण्टे के बाद जब बिजली आई तो मैंने सोचा कि पौधों को पानी दे दूँ। मुझे यह भी उत्सुकता थी कि पड़ोसी ने आख़िरकार उस पाजामे को देखा या नहीं और देखा तो क्या किया। मैं निश्चिंत था कि चूँकि पड़ोसी के घर में अख़बार नहीं आता है तो उसे इस पाजामे के पीछे की कहानी पता नहीं चलेगी।

लेकिन बाहर आकर मैं यह देखकर आश्चर्य में पड़ गया कि वह पाजामा मेरे ही बरामदे में, मेरी आराम कुर्सी पर पड़ा था। यह मेरे लिए बड़ी हैरत की बात थी। मेरी आँखें फटी की फटी रह गईं। यह कैसे हुआ? मैंने पड़ोसी के घर में झाँक कर देखा, वहाँ कोई नहीं था, न कोई हलचल थी। वे लोग शायद अभी तक सो कर नहीं उठे थे। फिर इस पाजामे का क्या जादू है? यह बार-बार मेरे ही घर में क्यों आ जा रहा है? मैं परेशान होकर इधर-उधर टहलने लगा।

तभी मैंने देखा कि रास्ते से दो सिपाही गुज़र रहे हैं और सभी घरों के भीतर उचक-उचक कर देख रहे है। वे शायद हाकिम के पाजामे को खोज रहे थे। वे मेरे घर के सामने आते, उससे पहले ही पाजामे को उठाकर मैं घर के भीतर तेज़ी से भाग गया। अब तो मेरी टाँगे काँप रही थी। मुझे लगा मैंने पाजामा नहीं बल्कि कोई जहरीला साँप पकड़ा हुआ है। मैंने पाजामे को ख़ुद से दूर फेंक दिया।

अगर सिपाही घर के भीतर आ गए तो क्या होगा? मैं तो इसे पहनकर सड़क पर घूम भी आया हूँ। कई लोगों ने मुझे देखा भी है। मेरा सिर चकराने लगा। बिजली फिर से चली गई थी। घर के भीतर घुटन और उमस महसूस हो रही थी। इसलिए मैं ताज़ा हवा लेने के लिए घर से बाहर बरामदे में आ गया। बाहर आकर मैंने देखा मेरा पड़ोसी अपने आँगन में पौधों की छँटाई कर रहा है। मेरे आने की आहट होते ही, रुककर उसने कमर सीधी की, मेरी ओर गौर से देखा और धीमे से मुस्करा दिया। मुझे उसकी मुस्कान अजीब लगी।

ओह! तो क्या उसे मालूम हो गया था कि यह हाकिम का पाजामा है और उसे मैंने उसके आँगन में रखा था? क्या पता, हो सकता है उस समय वह जगा हुआ हो और कहीं से मुझे देख रहा हो। हो सकता है उसने कल रात शराब नहीं पी और सबेरे जल्दी उठ गया हो। मैं ही तो उसे सबेरे जल्दी उठने के लिए कहता था। हो सकता है, उसे पहले से ही मालूम हो कि हाकिम का पायजामा चोरी गया है।

कुर्सी पर रखे अख़बार पर फिर से मेरी नज़र पड़ी। पाजामा चुराने वाले के लिए मोटे अक्षरों में फाँसी की बात लिखी हुई थी। हाकिम के लिए फाँसी आम बात थी। वह जिसे चाहे फाँसी दे सकता था। मुझे अपने गले पर दबाव सा महसूस होने लगा। फाँसी के

समय झटके से गर्दन की हड्डी टूट जाती है। मैंने अपने गले पर हाथ फेरा। आज मुझे पहली बार लगा कि मेरी गर्दन किसी सुंदर स्त्री की तरह लंबी है। मैं आईने के सामने खड़ा होकर अपनी गर्दन देखने लगा। मेरी टूटी हुई गर्दन कैसी लगेगी? लेकिन मैंने तो पाजामा नहीं चुराया है। यह तो मेरे अहाते में फेंका हुआ मिला। पर ऐसा कहने से क्या कोई मेरा यकीन करेगा? शायद कोई नहीं। न्याय की आँखों पर तो पट्टी बंधी है। लेकिन एक पाजामे के लिए इतनी सख्त सज़ा! बात मेरी समझ से परे थी। लेकिन हाकिम कुछ भी कर सकता था। जिसे चाहे सज़ा दे, जिसे चाहे इनाम बख्श दे।

यही सब सोचते हुए मेरे कदम घर से निकल कर हाकिम के घर की तरफ अनायास ही चल पड़े। रास्ते में मुझे चाय की तलब लगी तो एक दुकान पर ठहरकर मैं चाय पीने लगा। मुझे समझ में आया कि भूख और प्यास मृत्यु के भय से भी बड़े हैं। वहाँ कुछ लोग हाकिम के चोरी गए पाजामे की चर्चा कर रहे थे। मैं ध्यान से उनकी बातें सुनने लगा। वे कह रहे थे कि हाकिम इस बात से बहुत ही ज़्यादा नाराज़ है। अगर उसे पाजामा नहीं मिला तो वह सभी सिपाहियों को दंडित करेगा और पूरे शहर को भी सज़ा देगा।

लेकिन ऐसा क्या था उस पाजामे में? सहसा मेरे मुँह से निकल गया। मुझे डर भी लगा कि कहीं ये हाकिम के जासूस न हों, कहीं मुझे ही चोर न समझ लिया जाए। चोरी का पाजामा अभी तक मेरे घर में पड़ा था।

अपनी बातचीत में पड़े इस ख़लल से पहले तो वे अकचकाये फिर मुझे भी अपने करीब बिठाकर अपनी बातचीत में शामिल कर लिया। वे सिगरेट पी रहे थे। उन्होंने मुझे भी एक सिगरेट दी और चुपके से फुसफुसा कर बताया "जब पाजामा चोरी गया तब हाकिम महल से बाहर किसी परायी स्त्री के साथ सहवास कर रहा था, इतने में चोर ने उसका पाजामा चुरा लिया। हाकिम को वहाँ से नंगे अपने महल में जाना पड़ा।"

अब मुझे हाकिम के ग़ुस्से की वास्तविक वजह समझ में आ गई थी। मैं वापस अपने घर आ गया और पाजामे को ठिकाने लगाने की तरकीबें सोचने लगा। लेकिन कोई भी तक़ीब कारगर समझ में नहीं आई। इसी तरह पूरा दिन गुज़र गया। कल के अख़बार में फिर हाकिम के पाजामे की ही ख़बर प्रमुख थी। लेकिन इस बार ख़बर का सुर ज़रा बदल हुआ था। अख़बार ने लिखा था कि हाकिम के सिपाही अभी तक चोर को नहीं पकड़ पाए। जब हाकिम ही सुरक्षित नहीं तो प्रजा का क्या होगा? यह भी ख़बर थी कि हाकिम इस बात से बहुत क्रोधित है कि अभी तक चोर नहीं पकड़े गए एवं सिपाहियों पर चोर को पकड़ने का बहुत दबाव है। ख़बर पढ़कर मेरी घबराहट बहुत बढ़ गई। कहीं सिपाही मेरे घर तक न पहुँच जाएँ। यह सोचकर मैं बहुत परेशान हो उठा। मैं घर के अंदर गया पाजामे को जहाँ छुपाकर रखा था, वहाँ से निकाल लाया। पहले सोचा कि उसे जला दूँ, फिर लगा कि जलाने से धुआँ उठेगा, कहीं इससे हाकिम के सिपाहियों को या किसी और को शक न हो जाए। बहुत सोच -विचार कर उसे अच्छे से एक कागज़ में लपेट लिया। मैंने तय किया कि अब चाहे जो भी हो, इस पाजामे को हाकिम को दे आऊँगा और उसे सारी वास्तविकता बता दूँगा। हाकिम इतना बड़ा आदमी है क्या वह सच को समझेगा नहीं भला। यही सोचकर मैं घर से चला।

अभी कुछ दूर ही गया था कि देखा हाकिम के सिपाही रास्ते में एक आदमी को पकड़ कर लगभग घसीटते हुए ले जा रहे हैं, पता चला कि पाजामे का चोर मिल गया है, इसी के पास से हाकिम का पाजामा बरामद हुआ है।

मैंने अपने हाथ में लिए पैकेट की ओर देखा। पाजामा वहाँ सही सलामत था। जब पाजामा मेरे हाथ में है तो फिर इसके पास से कौन सा पाजामा बरामद हुआ? मैं सोच में पड़ गया।

अधिकारियों के द्वारा अख़बारवालों को रिपोर्ट दे दी गई कि चोर पकड़ा गया और हाकिम का पाजामा भी बरामद हो गया। अब चोर को फाँसी दे दी जाएगी। मैं दौड़ा-दौड़ा अधिकारी के पास गया और उसे बताया कि हाकिम साहब का पाजामा तो यह है, मेरे हाथों में, फिर आपने क्या बरामद किया? मैंने उसे पाजामा मिलने की पूरी कहानी सुना दी। अधिकारी ने पाजामे को देखा, उसकी आँखें चौड़ी हो गईं। लेकिन उसने मेरी बात सुनने में कोई रुचि नहीं दिखाई। उसने कहा अब चोर नहीं बदला जा सकता है, इससे हमारी बदनामी होगी। उसने सिपाहियों को आदेश दिया कि इसके हाथ से पैकेट छिन लो और इसे मारकर दूर भगा दो। सिपाहियों ने वैसा ही किया।

मैं बुरी तरह घायल हालत में सबको बताने की चेष्टा कर रहा था कि सिपाहियों ने जिसे पकड़ लिया है, वह चोर नहीं है, उसके पास से हाकिम का पाजामा बरामद नहीं हुआ है। लेकिन किसी को यह सुनने में रुचि नहीं थी। सब चोर की फाँसी का तमाशा देखने जा रहे थे। शीघ्र ही वहाँ मेले सा दृश्य उत्पन्न हो गया। कुछ ठेले-खोमचे वाले भी वहाँ पहुँच कर अपनी दुकानें लगा लिए। चारों तरफ उत्सव सा माहौल हो गया। मेरा पड़ोसी भी तमाशा देखने पहुँचा। मैंने उसे पास बुलाया और उसे बताया कि यह व्यक्ति जिसे फाँसी दी जा रही है, उसके पास कोई पाजामा बरामद नहीं हुआ है, वह चोर नहीं है। वह निर्दोष है। मैंने उसे पाजामा मिलने की सारी कहानी सुनाई।

मुझे यह देखकर बहुत खुशी हुई कि मेरे पड़ोसी ने मेरी बात गौर से सुनी। आज मुझे वह एक अच्छा आदमी लगा था। मैं ख़ामख्वाह ही इससे चिढ़ता था, मैंने सोचा।

फिर उसने मुझे देखा और धीमे से मुस्कराया। उसने मेरे कान के पास आकर कहा-"मैं जानता हूँ वह चोर नहीं है। पर तुम भाग्यशाली हो जो बच गए। उस पाजामे को दरअसल मैंने ही चुराया था।"

यह कहकर मेरा पड़ोसी वहाँ से चला गया। मुझे काटो तो खून नहीं। मैं हतप्रभ सा उसे जाते हुए देखता रहा।

संध्या समय शोर का एक ग़ुबार उठा। लोग खुश होकर तालियाँ बजा रहे थे। पकड़े गए आदमी को फाँसी दे दी गई थी।

उस दिन मेले में ख़ूब बिक्री हुई। वहाँ से लौटती हुई भीड़ हाकिम का गुणगान कर रही थी कि न्याय हो तो ऐसा हो।

000

निर्णय सही था

अर्चना मिश्र

बैंक के आंचलिक कार्यालय में आए हुए मुझे एक सप्ताह ही हुआ था कि आज नए उप महाप्रबंधक को देखकर ऐसा लगा कि इन्हें मैं पहचानती हूँ। दिमाग़ पर ज़ोर देने के बावजूद भी कुछ याद नहीं आया। दो दिन मेरे इसी उधेड़बुन में बीत गए। कि आज अचानक मुझे बड़े साहब ने बुलाया है, बताने के लिए मैसेंजर आया।

"क्यों बुलाया है?" मैंने मैसेंजर से पूछा।

"मुझे नहीं पता मैडम।" कह वो चला गया।

मैं चौंक गई, पता नहीं उन्होंने मुझे घूरते हुए तो नहीं देख लिया?

मेरा चेहरा ही ऐसा है कि कोई भाव छुप नहीं पाता। सोचते हुए मैं मन ही मन अपने को कोसने लगी।

अपने को संयत कर मन में डरते-डरते उनके केबिन में दाखिल हुई।

"जी सर!"

"आइए मैडम, बैठिए।" सुनकर, मैं उनके टेबल के सामने रखी कुर्सी पर बैठ गई।

"पहचाना मुझे ?"

उन्होंने दूसरा प्रश्न दागा।

मैंने फिर नज़रें उठाकर उनके चेहरे पर एक निगाह डाली। आँखें अंदर धँसी हुई, मोटे फ्रेम के चश्मे से ढ़की, अस्पष्ट चेहरे के साथ-साथ हाथों में कुछ-कुछ दूरी पर सफेद दाग़ जैसे दिख रहे थे। गले की त्वचा थोड़ी सी नीचे लटकी सी थी। साँवला रंग, त्वचा ऊबड़-खाबड़ सड़क जैसी लग रही थी।

"सॉरी सर ! नहीं पहचान पाई।" अपराध बोध से भरकर मैंने कहा।

"तुम वही रश्मि हो ? जो पहले भोपाल मुख्य शाखा में थी।"

"जी सर।"

"आप कैसे जानते हैं मुझे ?"

अब मेरा स्वर मुखर हुआ।

"मैं विनय जोशी हूँ।" सुनते ही मेरी चीख़ निकलते-निकलते बची।

विश्वास नहीं हुआ कि शाखा का सबसे ख़ूबसूरत जवान कुँवारा लड़का, वह भी प्रोबेशनरी ऑफ़िसर। पद के साथ-साथ उनका व्यक्तित्व बहुत प्रभावशाली था। उस पर उनका ड्रेस सेंस क्या ग़ज़ब का था जो हमेशा मुझे आकर्षित करता।

मैं जिस विभाग में थी, उसी में उनकी पहली पोस्टिंग हुई थी और काम सिखाने का अधिभार मुझे मिला। सब लोग कहते "वाह! रश्मि...तेरी तो किस्मत खुल गई। दिन भर तेरे पास बैठा रहता

अर्चना मिश्र
बी-3/401, फार्चून सिगनेचर, ओरिओन स्कूल के पास, बावड़िया कलाँ, भोपाल 462026, मप्र
मोबाइल- 9893423095
ईमेल-archanamishra0507.am@gmail.com

है।"

सुनकर मैं कहती "कोई फायदा नहीं काश! मैं कुँवारी होती।"

मेरा जवाब सुन सब हँसने लगते।

हमारी अच्छी दोस्ती हो गई थी। उन्होंने बातों ही बातों में बताया कि उनकी सगाई हो चुकी है। मेरे विभाग का कार्यकाल समाप्त होने पर उनका ट्रांसफर दूसरी शाखा में हो गया।

जब भी वह हमारी शाखा में आते, जिस भी सीट पर मैं बैठी होती मुझसे मिलने ज़रूर आते। कभी-कभी चिढ़ाते भी कि तुम मेरी प्रथम गुरु हो। मुझे बैंकिंग तुमने ही सिखाई है। मैं संकोच से भर जाती। कहाँ एक कैशियर-कम-क्लर्क और कहाँ एक प्रोबेशनरी ऑफ़िसर जिसका शानदार, उज्ज्वल भविष्य है।

आज तकरीबन तीस साल बाद उन्हें देखकर विश्वास ही नहीं हुआ, कि वह वही हैंडसम विनय जोशी सर हैं। मैं जब तक कुछ पूछती कि तभी किसी आगंतुक के आ जाने से मैं उठ खड़ी हुई। उन्होंने भी कहा-"ठीक है मैडम! बाद में बात करता हूँ।"

कहकर वे व्यस्त हो गए।

बैंक की नौकरी ही ऐसी है, जिसमें ग्राहक किसी भी समय आ सकता है, आख़िर भगवान् का दर्जा जो उसे प्राप्त है।

दो दिन बाद ऑफ़िस ऑर्डर मिला कि शनिवार को बड़े साहब ने कार्यकाल समाप्ति के पश्चात् मीटिंग रखी है। सभी स्टाफ सदस्यों का रुकना ज़रूरी है। मीटिंग के उपरांत उन्होंने मुझे रुकने का इशारा किया। मुझे शनिवार के दिन ज़्यादा देर रुकना बिल्कुल पसंद नहीं था। पर सब कुछ जानने की चरम उत्सुकतावश मेरा ध्यान उस ओर गया ही नहीं। मुझे रुकता देखकर बाकी सभी लोग उठ खड़े हुए।

उनका एक ही बेटा है। जिसने मैनिट भोपाल से इंजीनियरिंग की पढ़ाई की है। उन्होंने भोपाल में अपना घर बनवा लिया था; क्योंकि उनके प्रमोशन के साथ-साथ हर बार ट्रांसफर निश्चित था।

जब बेटे का मैनिट में दाखिला हो गया तो तय किया कि पत्नी उसके साथ भोपाल में रहेगी। घर अपना था सो चिंता नहीं थी। बेटे की पढ़ाई पूरी होते ही उसका जॉब लग गया। पहले वह अहमदाबाद में था। फिर दूसरी कंपनी से अच्छा ऑफर मिला तो बेटा मुंबई चला गया। उन दिनों वे जयपुर में पोस्टेड थे। जैसे ही अगला प्रमोशन उप महाप्रबंधक का हुआ उन्होंने पोस्टिंग मुम्बई करा ली। अब वे, पत्नी और बेटा साथ रहने लगे थे।

उन दिनों बेटे की शादी के लिए बहुत से रिश्ते आ रहे थे। भोपाल का एक रिश्ता बहुत ही धनाढ्य परिवार से था। वह लोग भोपाल के ही थे और लगातार लड़की देखने का आग्रह कर रहे थे। बेटे को लड़की फ़ोटो से पसंद आ गई तो बेटा और वे एक साथ छुट्टी लेकर भोपाल पहुँच गए। लड़की सभी को जँच गई। पैसे के साथ रूप भी था। और कन्या ने उनके और उनकी पत्नी के पैर छूकर अपने संस्कारी होने का भी सबूत दे दिया था।

लड़की के पिता ने अति विनम्र स्वर में आग्रह किया कि अभी सगाई कर देते हैं। आप दोनों को एक साथ छुट्टी मिलना इतनी जल्दी संभव नहीं होगा। बाकी शादी आपकी सुविधानुसार तय कर लेंगे।

उन्हें लड़की वालों की जल्दबाज़ी पर हैरानी हुई थी पर पत्नी का तर्क था-"हर लड़की के माता- पिता को ऐसी ही जल्दी होती है।" फिर बेटे का खुशी से खिला मुख देख वह भी तैयार हो गए। तय हुआ कि सगाई, शादी दोनों भोपाल में होगी।

रिटायरमेंट के बाद वह भी भोपाल में रहेंगे। उनके ज़्यादातर रिश्तेदार मध्यप्रदेश में हैं। इतनी जल्दी सगाई हुई कि कई करीबी रिश्तेदार नहीं आ पाए।

लड़की वालों ने काफी तामझाम के साथ सगाई की। पंडित जी ने छह महीने बाद का मुहूर्त निकाला। सभी लोग काफी खुश थे।

लेकिन सगाई के कुछ दिनों बाद बेटे को धमकी भरा फ़ोन मिला।

"तुम यह सगाई तोड़ दो।"

शुरू में बेटे ने किसी सिरफिरे का मज़ाक समझा। लेकिन जब कुछ दिनों के अंतराल से किसी भी समय फ़ोन आने लगे तो बेटे ने उन्हें सारी बात बताई।

"पापा! कोई मुझे धमकी दे रहा है कि इस लड़की से शादी तोड़ दो। अन्यथा गंभीर परिणाम भुगतने को तैयार रहना। कहता है- वह सिर्फ मेरी है।"

मैंने समझाया-"तुम लड़की से बात करो और पूछो; क्या उसका किसी के साथ अफेयर है?"

"ठीक है पापा।"

लड़की ने स्पष्ट इंकार कर दिया। कहा कि उसकी ज़िंदगी में कोई नहीं है।

फिर भी फ़ोन का सिलसिला थमा नहीं। पत्नी ने बताया तो मैं थोड़ा चिंतित हो उठा।

क्या पता सच में कोई हो। इस सगाई को तोड़ देना ही एकमात्र विकल्प लग रहा था। पत्नी भी मुझसे सहमत थी। वह भी डर गई थी। मैंने कहा- "इकलौता बेटा है हमारा। उसे समझाओ।"

उसकी माँ ने समझाया भी कि इससे अच्छी लड़की मिल जाएगी। हम यह सगाई तोड़ देते हैं। ख़ामख़्वाह किसी जोख़िम में अपने को डालना ठीक नहीं। पर जवानी का जोश और लड़की के प्यार में सराबोर उनके बेटे के मन में कोई खौफ़ नहीं था।

उसने कहा, "मैं नहीं डरता किसी से मम्मी।"

कुछ दिन बाद बेटे को पुनः धमकी भरा फ़ोन मिला पर इस बार उसने हिम्मत से कहा- "मैं उसी से शादी करूँगा। जो करना है कर लो।"

उस दिन के बाद उसे फ़ोन आने बंद हो गए। बेटे ने अपनी हिम्मत की बात अपनी माँ को बताई। सुनकर मैं आशंकित हो उठा।

मैंने तय किया कि मैं लड़की के पिता से बात करता हूँ ताकि सच्चाई का पता चले। सब सुनकर उसके पिता ने अपनी अनभिज्ञता जाहिर की।

"हम सब निश्चिंत होकर शादी की तैयारी में जुट गए। सभी बहुत उत्साहित थे। तभी उन्हें एक दिन बैंक के लैंडलाइन फ़ोन पर एक धमकी भरा फ़ोन आया।"

"मेरी बात ध्यान से सुनो। यह पहला और आख़िरी फ़ोन है मेरा। अगर अपने बेटे की जान बचाना चाहते हो तो यह शादी तोड़ दो।

अन्यथा मैं क्या कर सकता हूँ तुमने सोचा भी न होगा।"

"अगर शादी नहीं तोड़ोगे तो तुम्हारे बेटे का क्या हश्र होगा उसकी तुम कल्पना भी नहीं कर सकते।" कह उसने फ़ोन रख दिया।

वह तो अच्छा हुआ कि उस वक़्त वहाँ मेरे पास कोई नहीं था। नंबर पता करवाया तो पता चला वह भोपाल मुख्य स्टेशन के पास के एक एस टी डी पीसीओ का नंबर था। ऐसे में फ़ोन करने वाला अपराधी है या उसका मित्र, कुछ समझ नहीं आया। परंतु एकबारगी मैं डर गया। यह बात मैंने उस दिन घर पर नहीं बताई।

दूसरे दिन पत्नी को बताया और कहा इस फ़ोन का ज़िक्र बेटे से न करना। पत्नी भी चिंतित हो उठी।

"अब क्या करें?" पत्नी ने पूछा। मैंने कहा मैं सोचता हूँ।

मैंने सोच समझ कर प्लान बनाया कि हम सब कुछ दिनों के लिए भोपाल चलते हैं। शादी को मात्र तीन महीने बचे हैं तो शॉपिंग करनी है। उन्होंने लड़की के पिता को भी सूचित कर दिया।

समयानुसार हम सभी भोपाल पहुँच गए। दूसरे दिन से शॉपिंग शुरू हो गई। बेटा और उसकी माँ की तैयारी ज़ोर-शोर से चल रही थी।

जब तक यह लोग शॉपिंग करेंगे तब तक मैं लड़की के पिता से सच्चाई जानने की कोशिश करता हूँ।

"बैंक में फ़ोन आने की बात सुनकर लड़की के माँ- पिता ने कहा कि उनका कोई दुश्मन नहीं है। न ही उनकी लड़की का चाल चलन ख़राब है। उन्हें इस तरह के फ़ोन का सुन आश्चर्य हो रहा है।"

जोशी जी ने आगे बताया कि उन्होंने लड़की के पिता से कहा- "हम यह केस पुलिस में दे देते हैं।"

वह बेबसी से बोले- "इससे मेरी बेटी की बदनामी होगी।"

अलबत्ता लड़की के पिता ने एक सुझाव ज़रूर दिया कि आप कहें तो हम शादी जल्दी कर देते हैं।

जल्दी शादी का फ़ैसला मैं अकेले नहीं ले सकता। मुझे घर पर बात करनी होगी। कहकर मैं वहाँ से चला आया। पता नहीं क्यों मेरे मन में कुछ खटकने लगा था।

"क्या करूँ ?" अगर पुलिस में देता हूँ, और कुछ निकलता है तो शादी तोड़नी पड़ेगी। अगर नहीं तो बेकार में लड़की और उसके पिता की बदनामी होगी फिर लड़की के पिता के सामने मेरा मन हमेशा अपने को लज्जित महसूस करेगा।

अचानक से उन्हें याद आया। उनसे दो साल जूनियर प्रोबेशनरी ऑफ़िसर नीलिमा की शादी आईपीएस ऑफ़िसर से हुई थी। पता करता हूँ अभी कहाँ है वह और क्या मदद कर सकते हैं मेरी वे।

पता ढूँढ़ना कोई कठिन काम नहीं था। फ़ोन किया तो पता चला कि अभी भोपाल में पोस्टेड है। मैं समझ गया कि उसके पति की पोस्टिंग भी भोपाल में होगी। क्योंकि जहाँ-जहाँ उसके पति की पोस्टिंग होती है तुरंत वे ऊपर से नीलिमा की पोस्टिंग अपने साथ करवा लेते हैं।

शाम को उसके घर मैं खाने पर आमंत्रित था। सारी बातें सुन उसके पति ने मुझे आश्वस्त किया कि शादी अभी मत करिएगा। मैं पता करके जल्दी बताऊँगा आपको।

बगैर कुछ ज़ाहिर किये दूसरे दिन वे और पत्नी होने वाली बहू की पसंद की ज्वैलरी और कपड़े ले आए।

सगाई के बाद ही मैंने और बेटे ने अपना सूट सिलने डाल दिया था। उस दोपहर मुझे और बेटे को सूट का ट्रायल करने जाना था। तो हम दोनों तैयार होकर पहले न्यू मार्केट गए। फिर रिश्तेदारों को देने के लिए साड़ियाँ खरीदनी थी थोक में। तो बेटे को घर में छोड़ मैं और पत्नी बैरागढ़ जाने वाले थे। समय कम था और शादी का काम बहुत ज़्यादा। न्यू मार्केट से लौटने के बाद मुझे कुछ थकान अनुभव हो रही थी।

"आज बैरागढ़ का प्रोग्राम रहने दें?" मैंने पत्नी से कहा। सुनकर पत्नी का मूड उखड़ गया। उसने सुना दिया मुझे।

"काम इतना ज़्यादा है, सिर्फ साड़ियाँ ही नहीं खरीदनी है। उसकी पैकिंग भी करनी पड़ेगी। एक- एक दिन कीमती है।"

मैंने अपने मन को समझाया और पत्नी से कहा- "ठीक है, आधे घंटे बाद चलेंगे।" बेटा हमारी बात सुन रहा था। वह बोला, "पापा आप आराम करो। मम्मी को लेकर मैं चला जाऊँगा। वहाँ कम से कम दो तीन घंटे लग जाएँगे। बेकार में आप और थक जाओगे। आज आप आराम कीजिये।"

पत्नी की आवाज़ थी-"घर की एक चाभी रख ले, तेरे पापा को नींद आ गई तो उठाना मुश्किल होगा।" कह-सुन दोनों हँसते हुए बाहर निकल गए।

सुनकर वह भी मुस्करा उठा। कब नींद के आग़ोश में चला गया और कितनी देर सोया पता नहीं चला। लगातार मोबाइल की घंटी से उसकी नींद खुली।

देखा तो नीलिमा के पति का फ़ोन था। उन्होंने बताया कि तीन साल पहले लड़की के पिता ने पुलिस में रिपोर्ट दर्ज करायी थी कि दो लड़के उनकी बेटी का घर तक पीछा करते हैं, और छेड़ते हैं। एक बाइक चलाता है और दूसरा पीछे बैठा होता है। एक दिन उसने उनकी बेटी का दुपट्टा कॉलेज के बाहर सब के सामने खींच लिया था।

तब से बेटी डर गई और कॉलेज जाना बंद कर दिया। पुलिस ने कॉलेज के चारों ओर सुरक्षा व्यवस्था बढ़ा दी थी। कई मजनूं पकड़ाए। उनकी बेटी को गुंडे पहचानने के लिए थाने बुलाया गया पर पिता ने बताया वह बाहर पढ़ने लगी है। उसके फूफाजी सब इंस्पेक्टर हैं। आप इस केस को यहीं ख़त्म कर दीजिए। उसके बाद फ़ाइल बंद कर दी गई। अच्छा हुआ, उस समय बेटा और पत्नी घर पर नहीं थे।

लड़की का पिता होकर झूठ बोल रहा है। मन सुलगने लगा। जैसे ही पत्नी और बेटा लौटे। मैंने सारी बात पत्नी को बताई। उसका भी मत था कि सगाई तोड़ दीजिए।

"इस बार मैं बात करूँगा बेटे से।"

मैंने पत्नी को कहा-"मेरी पूरी बात सुनकर बेटे ने कहा कि पापा ! हम सब अभी उनके घर चलकर वहाँ सारी बात का खुलासा सबके

सामने करेंगे। अगर सच निकला तो मैं सगाई तोड़ दूँगा। जो भी सामान उन्होंने दिया है उसे भी लौटा देंगे।"

उसकी आवाज़ से मुझे ऐसा लगा कि भले ही उसने मेरा कहना मान लिया हो, पर उसके अंदर विश्वास की एक क्षीण रेखा अभी तक मौजूद है। वह मन से सगाई तोड़ने के लिए तैयार नहीं है।

"जवानी का जोश था या मोबाइल की दुनिया का प्रभाव। रोज़ घंटों बातें करने से लगाव होना स्वाभाविक ही था।"

हमें रात में अचानक आया देख लड़की के पिता थोड़े चिंतित दिखे। पर स्वर को संयत रख विनम्रतापूर्वक अभिवादन किया।

मैंने बगैर किसी भूमिका के तुरंत कहा आपने हमसे झूठ क्यों कहा? हम यह सगाई तोड़ने आए हैं। और पुलिस जाँच की सत्यता उन्हें बताई। सुनकर लड़की की माँ रोने लगी। लड़की के पिता ने बताया कि जब उनकी बेटी यहाँ कॉलेज में पढ़ रही थी तभी से यह बदमाश लड़के उसका पीछा करते थे। पुलिस में शिकायत दर्ज़ कराई तो उसके अपहरण की धमकी के फ़ोन मुझे मिलने लगे। मैंनें आनन-फानन उसे अपनी बहन के घर पटना भिजवा दिया। उसके पति पुलिस में सब इंस्पेक्टर थे।

बेटी ने आगे की पढ़ाई वहीं से की। जब एम .ए. फाइनल में थी तभी मेरी बहन और जीजाजी की सड़क दुर्घटना में मौत हो गई। गाड़ी उनका इकलौता बेटा चला रहा था। वह भी दो दिन अस्पताल में रहा पर डॉक्टर उसे बचा नहीं पाए। तब मेरे पास अपनी बेटी को वापिस लिवा लाने के अतिरिक्त कोई मार्ग शेष नहीं था। इसीलिए मैंने शादी की जल्दी की थी। उन्होंने यह भी बताया कि उन बदमाशों ने बेटी के बहुत ही गंदे फ़ोटो उन्हें भेजे थे। और इंटरनेट पर डालने की धमकी दे रहे थे।

"देखते हैं, उस से अब कौन शादी करेगा?" बदनामी के डर से मैं सब छुपा गया। सोचा था, इसकी शादी हो जाएगी तो सब झंझट ख़त्म। मेरी ग़लती की सज़ा जोशी जी आप मेरी बेटी को न दें। कह फूट-फूटकर रो पड़े थे वह। मेरे पैरों पर गिरकर न जाने कितनी बार उन्होंनें माफ़ी माँगी होगी।

"मुझसे माफ़ी माँगने के बजाए आप पुलिस में जाकर सुरक्षा माँगिए।" कह मैं उठ खड़ा हो गया। पीछे -पीछे पत्नी और बेटा भी आ गए।

रश्मि! पूरी रात सब का मूड ख़राब था। प्लान किया कि कल इंदौर जाकर अपनी बहन को भी बता दूँगा क्योंकि सगाई में वह भी आई थी। हो सकता है वहाँ जाकर सब का मूड थोड़ा ठीक हो जाए। फिर वहीं से मुंबई निकल जाएँगे।

सुबह जब मैं और पत्नी ड्राइंग रूम में बैठे चाय पी रहे थे, तभी लड़की के पिता का फ़ोन आया कि वह आ रहे हैं। उन्हें सामान लौटाना है।

बेटा अभी सो रहा था। मैंने पत्नी से कहा उसे नौ बजे तक उठा देना। तब तक तुम तैयार हो जाओ। लड़की के पिता आ रहे हैं तो मैं सामान ले लूँगा। सुनकर पत्नी अंदर चली गई।

मुझे बैठे दस मिनिट हुए होंगें कि डोरबेल बजी। मुझे लगा लड़की के पिता हैं। तुरंत दरवाज़ा खोला कि दो नकाबपोश पहने युवक सामने थे।

"बहुत समझाया था, तुझे और तेरे पिल्ले को। परंतु मेरी बात नहीं मानी तुम दोनों ने।"

"अब भुगतो।"

जब तक वह कुछ समझते उसी पल उन पर एसिड की बोतल फेंक भाग गए दोनों।

उन्हें लगा जैसे जलती हुई आग उन पर आ गिरी है। आँख, मुँह, चेहरा, गला, सीना, बाँह सब झुलस रहे थे। वे तुरंत गिर पड़े और छटपटाने लगे। आँखें झुलस रही थीं। न कुछ दिखाई दे रहा था न ही कुछ समझ आ रहा था। गला बंद हो गया था। आवाज़ देना चाह रहे थे, पर मुँह से कुछ नहीं निकला।

उन्हें जब होश आया तो दोनों आँखों पर पट्टी बँधी थी। कुछ दिख नहीं रहा था। सिर्फ कराह निकली। तभी दूर बेटे की आवाज़ सुनाई दी।

"डॉक्टर! पापा को होश आ रहा है।"

उसके बाद कुछ भी सुनाई नहीं दिया। सिर्फ अहसास हुआ कि वह ज़िंदा हैं।

जाने कितने दिनों बाद आँखों की पट्टी खुली। उन्हें कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। कितनी जाँच चली। जाने कितने ऑपरेशन की यातनाएँ सहीं। उनकी एक आँख नकली है और दूसरी आँख से बहुत साफ नहीं दिखता।

तकरीबन साल भर बाद वह बैंक सिर्फ ज्वाइन कर पाए। न जाने कितनी प्लास्टिक सर्जरी का दर्द उन्होंने भोगा है। बोलते हुए उनके चेहरे पर दर्द की रेखाएँ स्पष्ट दिख रही थीं। ट्रीटमेंट अभी तक चल रहा है।

रश्मि को अब समझ आया कि वह क्यों नहीं पहचान पाई सर को। क्योंकि उनके चेहरे के साथ- साथ उनकी आवाज़ भी बदल चुकी है।

पुलिस केस हुआ। पर वह बता नहीं पाए कि वह दोनों लड़के कौन थे। न ही वे पहचान सकते थे; क्योंकि उन्होंने नाक और चेहरे को कपड़े से बाँध रखा था।

वे दोनों अपराधी बाद में पकड़े गए। उत्तरप्रदेश के शातिर बदमाश थे और मध्यप्रदेश में छुपकर रह रहे थे।

"क्या आपने सीबीआई को यह केस सौंपा था ?"

"नहीं, रश्मि।"

"अभी बेटा कहाँ है सर आपका?"

"मुंबई में।"

"शादी हो गई उसकी ?"

"हाँ।"

"पाँच साल बाद, उसी लड़की से।"

"क्या...?" रश्मि चौंक गई।

"सर! जिस लड़की की वजह से आपको और आपके परिवार को यह सब तकलीफ उठानी पड़ी; उसी लड़की से आपने अपने बेटे की शादी कर दी?"

"तुमने सही पूछा, रश्मि।"

जिन अपराधियों की कोई शिनाख़्त करने का साहस नहीं कर पा रहा था। उनका इतना खौफ़ व्याप्त था लोगों में, कि सरकार द्वारा इनाम घोषित करने के बावजूद वे हाथ नहीं आ रहे थे पुलिस के।

ऐसे में सगाई टूटने और इस खौफ़नाक मंज़र के बाद वह लड़की बेख़ौफ़ हो गई थी।

"अब बचा क्या है पापा! मेरे जीवन में ?" कह उसी भीरु लड़की ने बहुत आत्मविश्वास के साथ हिम्मत दिखाते हुए अपने पापा के

साथ क्राइम ब्रांच से संपर्क कर उन अपराधियों की शिनाख़्त की। जिससे वह गिरफ्तार हुए। कोर्ट में उसने वह फ़ोटो दिखाए जो उन लोगों ने उसके घर भेजा था। और निडरता से गवाही दी। उसी के कारण उन बदमाशों को आजीवन कारावास की सज़ा हुई।

इस हादसे से हम सब उबरने की कोशिश कर रहे थे। सोच रहा था अब रिटायरमेंट को ज़्यादा समय नहीं है। ट्रांसफर लेकर भोपाल चला जाऊँ। जगह बदलने से मन बदल जाएगा।

अपने बदलाव के नाम पर बेटे की शादी ही एकमात्र राह थी, जो रास्ता रोक रही थी। पर बेटा तो "अंगद के पैर की तरह एक ही ब्रह्म वाक्य पर अडिग था। उसे शादी नहीं करनी।"

इस हादसे को चार साल हो चुके थे। एक बार मैं अपने कुछ कागज़ात ढूँढ़ रहा था। नहीं मिला तो सोचा कि कहीं बेटे के पास तो नहीं। उसकी फाइलों में सर खपा ही रहा था कि अचानक एक अंग्रेज़ी पेपर की कटिंग दिखी जिसमें मेरे साथ हुए हादसे के साथ-साथ उस समय मेरी होने वाली बहू की तारीफ़ लिखी थी। जिसने बड़ी हिम्मत से क्राइम ब्रांच की मदद से उन गुंडों की पहचान कर पकड़वाने में मदद की। गवाही देते समय वह किसी से भी नहीं डरी। क्योंकि उन बदमाशों का चेहरा सिर्फ उसी ने देखा था। साथ ही उसका वह फ़ोटो भी था, जिसे पसंद कर बेटे ने शादी के लिए अपनी मोहर लगाई थी। बेटा तो ऑफ़िस गया था, मैंने पत्नी से बात की।

फ़ोन कर पता किया तो मालूम हुआ कि उस लड़की की भी शादी नहीं हुई है। वह नौकरी कर रही है। इस हादसे ने उसके भी परिवार को तोड़कर रख दिया था।

सुनकर मन द्रवित हो गया। वह भी तो बच्ची ही है।

"जब तक हम दूसरों का दु:ख नहीं जानते, हमें हमारा ही दु:ख भारी लगता है।" पत्नी से चर्चा की। वो दुविधा में पड़ गई।

"आप टूर से लौट आइए, फिर बात करेंगें।" कह पत्नी ने बात टाल दी। जाते समय मैं हिदायत दे गया कि बेटे से कुछ ना कहना।

टूर से वापस आने के दो-तीन दिन बाद मैंने फिर पत्नी से बात की।

"क्या सोचा है तुमने? पत्नी तपाक से बोली। सोचना क्या ? मेरी तो न है।"

"लेकिन क्यों?"

"लोग क्या कहेंगे? आपने सोचा है? लड़कियों की कमी पड़ गई है क्या हमारे लड़के को? मैं किस-किस का मुँह बंद करूँगी। जिसके कारण यह दुर्घटना हुई हमने उसी घर से फिर रिश्ता जोड़ लिया। लोग कहेंगे कि हमने उनका पैसा देखकर शादी की।"

"न बाबा। मैं उस लड़की को अपनी बहू नहीं बना सकती।" पत्नी ने कसैले स्वर में कहा।

"क्या राग आलाप रही हो तुम? तुम्हें दुनिया की नहीं, अपने बेटे की परवाह करनी है।"

"तुम औरत नहीं एक माँ के नज़रिए से देखो और फिर बताओ मुझे।" मेरा स्वर भी तल्ख़ हो उठा था।

सुनकर पत्नी ने कहा जब आप के साथ यह हादसा हुआ था तो उसके पिता आपको देखने मुम्बई आए थे। बेटे ने उनसे बात नहीं की। मैंने समझाया भी कि सिर्फ नमस्ते कर लो। तब बड़ी मुश्किल से वह माना था।

"मैंने पत्नी से कहा- कि उस समय घाव ताज़ा था तो गुस्सा स्वाभाविक था। लेकिन तुम्हारे बेटे को अगर उस लड़की से नफ़रत होती तो सगाई तोड़ने के बाद भी उसकी फ़ोटो क्यों नहीं फाड़ कर फेंकी ? यह पेपर की कटिंग वह अब तक सँभाले क्यों रखा है?"

"जो भी हो मैं बेटे की मर्ज़ी जाने बगैर कुछ न करूँगी; क्योंकि जिस रात हम उसके पिता से बात करने जा रहे थे, मैंने उसकी आँखों के कोर भींगे देखे थे। उसके बाद कई दिनों तक उसका मोबाइल बजता रहता, देखकर भी वह नहीं उठाता था। बड़ी मुश्किल से उबर पाया है मेरा बेटा उस लड़की से। मुझे नहीं लगता अब वह मानेगा।"

"एक डर मेरे मन में और है।" वह भी आप सुन लो।

"क्या है ?" मैंने पत्नी की ओर देखते हुए कहा।

"अगर कभी वे अपराधी जेल से छूटकर बाहर आ गए तो क्या उस लड़की को वे लोग छोड़ेंगे ?"

मैंने पत्नी को समझाया कि यही एक केस नहीं है उन पर। दर्जनों हत्याएँ भी वह कर चुके हैं। कईयों को अगुआ कर चुके हैं। बहुत ही शातिर अपराधी हैं वे। बामुश्किल पुलिस के हत्थे चढ़ पाए हैं। अब बाहर आना आसान नहीं।

"हमारी होने वाली बहू बहुत बहादुर है। उस समय क्या होगा हम आज से बुरा क्यों सोचें। तुम्हारे हिसाब से किसी भी माँ- बाप को अपने लड़के को फौज में नहीं भेजना चाहिए। यह सोच कि कब युद्ध में जाना पड़ जाए और जान गँवानी पड़े तब..?तुम्हारी यही सोच है, तो ठीक है अब तुम रहने दो। मैं बेटे से स्वयं बात कर लूँगा।"

शाम को इस रिश्ते के लिए मैंनें बेटे से बात की पर वह तैयार नहीं हुआ।

"उसको मैं अपना नहीं सकता पापा।"

"क्यों?"

"आपके साथ जो हादसा हुआ है पापा, उसकी ज़िम्मेदार वही है।"

"नहीं बेटा !"

"तुम उसके पापा को दोषी ठहरा सकते हो। क्योंकि अगर वह पहले बता देते तो बात यहाँ तक न पहुँचती। इसमें उस लड़की की क्या ग़लती थी ? कोई ज़बरदस्ती एकतरफा प्यार करे तो...? उसने तो उन गुंडों से प्यार नहीं किया था? उनके भय से उसे अपना घर छोड़कर बुआ के यहाँ जाना पड़ा था। इसका दर्द एक भुक्तभोगी ही समझ सकता है। तुम हम नहीं समझ सकते। तुम्हारी माँ और मैंने तुमसे उस वक़्त सगाई तोड़ने को कहा था, पर तब तुम तैयार नहीं हुए थे? नहीं न। इसके लिए तुम भी कहीं दोषी हो। बेटा! जो हादसा तुम्हारे साथ होना था, वह मेरे साथ हुआ तो उसके लिए क्या मैं तुम्हें दोषी करार दूँ ?"

"प्लीज़ पापा! मुझे कुछ समय दीजिए ?"

"ठीक है,जितना समय चाहिए ले लो।"

अगर तुम लड़की से जानना चाहते हो तो

मैं बता दूँ। मैं उसके पिता से बात कर चुका हूँ। सोचा, कहीं लड़की की मर्ज़ी जाने बगैर यह रिश्ता मजबूरी में तो स्वीकार नहीं कर रहे वे। इसीलिए मैं लड़की से मिलने उसके ऑफ़िस गया था। मुझे देखते ही उसने मेरे पैर छुए और कहा।

"नमस्ते अंकल! कह खड़ी हो गई।"

"तुम ऑफ़िस से कब फ्री होती हो?"

समय जानकर मैंने कहा, "तो ठीक है बेटा! तुम अभी अपना काम करो,मैं तब आऊँगा।"

कहकर, मैं बाहर आ गया।

शाम को मुझे बाहर खड़ा देख वह सीधे मेरे पास आ गई।

"जी अंकल? "

"चलो कहीं बैठकर बातें करते हैं।" और मैं उसे अपने साथ पास की कॉफ़ी शॉप पर ले गया।

"मेरे आने का मकसद तो तुम जानती हो। लेकिन मुझे सिर्फ इतना जानना है कि इसमें तुम्हारी मर्ज़ी शामिल है कि नहीं? सच कहना बिटिया?"

"अंकल! जब आप लोगों ने सगाई तोड़ी थी, तो मैं बहुत अपमानित महसूस कर रही थी। लेकिन सगाई तोड़ने के बाद भी उन अपराधियों ने जो आपके साथ किया, वह मेरी बर्दाश्त के बाहर था। जो दुर्घटना हुई उसका कारण मैं थी। बस अंदर की इसी आग ने मुझमें उन अपराधियों के लिए प्रतिशोध की ज्वाला दहका दी थी। जब पापा आपको देखने मुंबई गए थे और वापिस आकर उन्होंने आपका जो हाल बताया था। उसके लिए मैं अपने को कभी माफ़ नहीं कर पाई थी। कैसे इसका प्रायश्चित करूँ? सूझता ही नहीं था। कैसे आपके पूरे परिवार को खुशी दे सकूँ, सबकी मुस्कराहट वापिस ला सकूँ, हमेशा सोचती थी। आज ईश्वर ने मेरी यह इच्छा भी पूरी कर दी।"

यह सब सुनकर मैं उठ गया। उसके सिर पर हाथ रखा तो देखा उसकी आँखों के कोर नम थे।

सब सुनकर बेटा निरुत्तर हो गया।

000

लघुकथा

क्वालिटी टाइम

डॉ. मधु संधु

आज वे काफी प्रसन्नचित्त और मोबाइल थे। उन्होंने सुबह-सुबह अपने कमरे में रूम फ्रैशनर का स्प्रे किया, भुजिए के छोटे पैकेट के साथ बैड टी ली और हाई वाल्यूम पर टी. वी. के यू ट्यूब से सिनेमाई गीत लगा लिए। ग्यारह बजते-बजते वे सपाट सिर पर फ्लैप वाली टोपी रख चल दिए।

बीते दो-तीन दिन से वे काफी एक्टिव हैं। उनके कमरे से उठापटक की आवाज़ें आती हैं। रोज़ बाज़ार से खरीददारी करके आते और शॉपिंग बैग्स अपनी गाड़ी में रख कर अंदर आ जाते। जब पत्नी ऊपर की मंज़िल पर हो, दोपहर की नैप ले रही हो, या लैपटॉप पर अतिरिक्त व्यस्त हो, वह चुपके-चुपके और दबे पाँव शॉपिंग बैग उठाकर अपने कमरे तक ले आते। पूरे ठाठ और संवेगातिरेक के साथ दिल्ली, मुंबई, कोलकाता क्वालिटी टाइम बिताना उन्हें अच्छा लगता।

पत्नी को पूर्वाभास हो जाता। यात्रा बोध उसके कमरे तक सरकने लगता। एक हाउसवाइफ- दूसरे दर्जे की हैसियत- दिन-रात एक ही बात-यह किया तो क्यों किया, यह नहीं किया तो क्यों नहीं किया? छुट्टी के दिन जैसा उल्लास रगों में दौड़ने लगता। साँसें तक उत्फुल्ल हो आती। पहले दिन पार्लर जाएगी तीन घंटे। दूसरे दिन शॉपिंग मॉल में समय बीतेगा। तीसरे दिन किसी सहेली को बुला क्वालिटी टाइम व्यतीत करना उसे बहुत-बहुत अच्छा लगता।

000

डॉ. मधु संधु

12, प्रीत विहार, द्वारा आर. एस. मिल्ल, निकट सिमरन हॉस्पिटल, जी.टी. रोड, अमृतसर- 143104, पंजाब

ईमेल- madhu_sd19@yahoo.co.in

बूढ़ा हो गया हुआ पौधा

सतीश सरदाना

अस्सी साल के पोपले मुँह वाले मौसा जी! मौसा जी को उनकी बहू रोटी दे गई थी। हल्का सा नमक और देसी घी डली रोटी की चूरी बहू दे गई थी, मुँह में रोटी के नरम कण चुभलाते हुए बोले थे,"तुम्हारी माँ मैथिली बड़ी होशियार लड़की थी। मेरी शादी के वक्त दस बरस की थी।"

1937 में पैदा हुए मौसा जी कई रिफ्यूज़ी कैम्पों में धक्के खाने के बाद दिल्ली मेरे नाना के पास पहुँचे थे। नाना के वे रिश्तेदार थे। क्या रिश्ता था मालूम नहीं। न किसी ने जानने की कोशिश की। बाद में वे उनके दामाद जो बन गए थे। उनकी सबसे बड़ी बेटी वैदेही के पति!

मौसा मुचुकुंद लाल दुबे लाहौर में पैदा हुए और काशी में पढ़ने भेजे गए। देश विभाजन की ख़बर पर लाहौर वापिस भेज दिए गए। जब लाहौर पहुँचे उनका घर जलकर राख हो चुका था। न कोई सगा उधर था न सबंधी!बस भागते हुए लोगों के हुजूम थे और दंगाइयों लुटेरों के लश्कर! धावा बोल दें तो इज़्ज़त, गहना सब लूट लें और छुरा घोंपकर फेंक दें।

1950 में नाना बाड़ा हिंदू राव के इलाके में किराए के घर में रहते थे। दो बेटियों और तीन बेटों के बड़े परिवार के साथ छोटी जगह में रहने की वजह से बड़ी तकलीफ़ में थे कि एक रिश्तेदार और आ धमका। घर ज़रूर छोटा था मगर दिल बड़ा था। परिवार से बिछड़ा बालक कहाँ जाता?उसकी दु:खभरी कहानी सुनकर मायूस हुए और उसे शरण दी। दिलासा दिया। गर्म भोजन और शीतल जल दिया!

नाना दूर की सोचते थे। साल भर का काशी-प्रवास और शिक्षा का खर्च पचास रुपये,तीसरे दर्जे का रेल टिकट और दो जोड़ी कुर्ता-धोती रुमाल और ज़रूरी सामान देने से पहले वैदेही मौसी का उससे सनातनी विवाह संपन्न करा दिया।

वैदेही मौसी ग्यारह बरस की थी और मेरी माँ मैथिली दस बरस की! तीनों मामा नौ, आठ और चार बरस के थे। नाना पोथी-पत्रा, भविष्य बाँचने के साथ-साथ परचून की छोटी सी दुकान भी चलाते थे। दुकान पर पेटेंट आयुर्वेदिक दवाएँ, शर्तिया लड़का होने के नुस्खे, नपुसंकता और भीषण स्त्री-रोगों की दवाएँ समेत जड़ी-बूटियाँ मिलती थी। परिचितों में वे बैद जी के नाम से प्रसिद्ध थे। बैद बाँके बिहारी शर्मा 'अग्रज'के नाम से वे छंदबद्ध कविता करते थे और भगवद्भक्ति में लीन रहते थे। कृष्ण कथा कहते-कहते भावविभोर होकर 'राधे-राधे'कह उठते थे। एक ही ऐब था उनमें! सप्ताह में एक बार गारस्टीन बास्टियन रोड का चक्कर लगाकर आते थे और उस दिन मदिरा-सेवन करके लौटते थे। नाना जिस पर लट्टू थे वह कोई शिया मुसलमान कोठेवाली थी और बहुत ही ज़हीन और ख़ूबसूरत थी।

मेरी नानी गुणसीता देवी भी कोई कम सुंदर नहीं थी। मगर अपने पति के इस कार्यक्रम पर कोई आपत्ति न उठाती थी। तब भी वह अपनी जिह्वा पर एक शब्द भी रंज का न लाती थी जब

सतीश सरदाना
103 टावर 3, सारे होम्स हाई राइज
अपार्टमेंट्स, सेक्टर 92,गुरुग्राम- 122001
मोबाइल- 9911956389
ईमेल- satishsardana976976@gmail.com

उनकी पड़ोसनें चुहल करने के मारे पूछ बैठती थी,"ऐ पंडिताइन!तुम्हारी वो मुसलमान सौत कैसी है? क्या वह बहुत सुंदर है!"

वह बस पीड़ा से मुस्करा भर रह जाती थी और घबराहट में ज़ोर-ज़ोर से सस्वर राधे-राधे रटा करती थी।

अब न तो नाना थे न नानी! न माँ थी न मौसी। केवल अस्सी साल के पोपले मुँह वाले मौसा जी थे और उनकी कहानियों के तजुर्बे थे।

"मैथिली सच में होशियार थी। यह बात मैं तुम्हें खुश करने के लिए नहीं कह रहा। वैसे तुम मेरे अज़ीज़ हो क्योंकि तुम्हारी शक़्ल में मैथिली की भाँवर पड़ती है और तुम्हारे चेहरे की तरफ देखना मुझे सुखद मालूम होता है। मैं उन दिनों को बड़ी आसानी से याद कर पाता हूँ जब मैं पहले-पहल तुम्हारे नाना के घर आया था। यह सन् 1950 था और मैं तेरह साल का था। तीन साल कैम्पों की खाक छानने के बाद भी मुझे मेरे परिवार के एक सदस्य का भी पता न चला तो मैंने समझ लिया कि वे दंगों की भेंट चढ़ गए। तुम्हारी मौसी से शादी होने के पश्चात जब मैं काशी पहुँचा तब मुझे वहाँ तीन साल पुराना पोस्ट किया हुआ कार्ड मिला जो बम्बई के किसी पते से पोस्ट किया गया था। मेरा पूरा परिवार वहीं था जिसे मैं दिल्ली और पंजाब के कैम्पों में पागलों की तरह ढूँढ़ता फिरा था।"

मौसा जी का भोजन सम्पन्न हो चुका था। भोजन के पश्चात् पचास-साठ कुल्ले करके वह अपने आसन पर आ विराजे।

मैं उनकी इंतज़ार में उनींदा सा हो गया था। इन पुराने लोगों को किसी भी काम में जल्दी करने की आदत नहीं है। दूरियाँ इनके ज़माने में दूरियाँ थी जो धैर्य के साथ हफ्तों,महीनों में तय की जाती थी। भोजन-स्नान करना हमारे लिए फटाफट निपटा लिए जाने वाला अप्रिय कार्य था उनके लिए यज्ञ जैसा पवित्र कर्म!

काशी-प्रवास तीन माह का हुआ। उसके बाद बम्बई जाना तय हुआ। इस आशय की चिट्ठी तुम्हारे नाना को लिख भेजी थी। लौटती डाक से उनका पत्र आया। पत्र का मजमून कुछ यूँ था, "आयुष्मान मुचुकुंद जी दुबे!

तुम्हें तुम्हारे श्वसुर और सास की तरफ़ से कोटि आशीर्वाद तथा बालकों की तरफ़ से चरण-वंदना!

जब से आप गए हैं आप की चिंता थीऔर कुशलता के समाचार के विषय मे उत्कंठा और चिंता थी। आज आपका पत्र मिला तो दिल को करार और आत्मा को संतोष मिला!

यह जानकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि आपका परिवार लाहौर से सकुशल निकल आया था और फिलहाल मुंबई में है। इस समाचार से आयुष्मती वैदेही अत्यन्त प्रसन्न और हर्षित है। भगवती माँ की असीम कृपा हुई। साथ ही आपको विश्वनाथ बाबा के दर्शन करते ही यह शुभ समाचार मिला इसके लिए मैं और मेरा समस्त परिवार देवादिदेव महादेव का हृदय से आभारी है और कृतज्ञ होकर साक्षात् दंडवत करता है।

इसके साथ ही यह भी सुझाव है और विनती भी है कि आप दिल्ली आकर यहाँ से आयुष्मती वैदेही को साथ लेकर ही अपने परिवार से मिलने बम्बई जाइयेगा। क्योंकि लड़की का शादी के बाद वास्तविक घर उसका ससुराल ही होता है और वह ससुराल के रहते हुए अपने पिता के घर रहे इससे अधिक विषाद और चिंता की बात उसके लिए कोई नहीं हो सकती।

आपसे पुन: निवेदन है। निवेदन क्या करबद्ध प्रार्थना है कि आप आयुष्मती वैदेही को साथ लिवा जाएँ। इससे एक तो मैं अपने कन्यादान के ऋण से मुक्त हो सकूँगा दूसरे आयुष्मती वैदेही भी अपनी ससुराल के तौर-तरीके सीख लेगी।

पुन: कोटि-कोटि आशीर्वाद

आपका अकिंचन

वैद बाँके बिहारी शर्मा 'अग्रज'

कविराज

"पत्र पढ़कर मैं चिंता में डूब गया। बूढ़ा हद से ज़्यादा चालू और चालाक था। हो भी क्यों न! दिल्ली का पानी पीते हुए इतने वर्ष हो गए। अब तक उत्तरांचल के भोले पूर्वजों की कितनी एक तासीर बची रहती। बूढ़े को ख़तरा था कि लड़के के परिवार वाले मिल गए हैं। क्या पता विपत्ति में किए गए इस संबंध को मंजूर करें या न करें। क्योंकि विपत्ति का क्या है?विपत्ति में पड़ा हुआ कुत्ता भी विष्ठा खाता है और विपत्ति में पड़ा हुआ मनुष्य गधे को बाप बनाता है।"

मुझे अपने प्रिय नाना जो अब स्वर्गीय थे, जो मुझे लाड़ से भारतेंदु (क्योंकि भारतेंदु हरिश्चंद्र उनके प्रिय कवि थे) बुलाते थे जबकि मेरी दादी ने मेरा नाम भारत रखा था, को मौसा द्वारा चालाक और चालू बूढ़ा बुलाना खला। वह भी तब जब उन्होंने इस निराश्रित बालक को, जो अब अस्सी साल का पोपले मुँह वाला फत-फत करता घृणित बूढ़ा हो गया था, शरण दी थी। अपनी संतान का शुभ कौन पिता न चाहेगा। नाना ने इन्हें अपनी पत्नी, यानी मेरी मौसी को विदा करवा के ले जाने को ही तो कहा था। इसमें क्या अनुचित था?

"मौसा!आप बुरा मानो या भला!आपको शरण देने वाले मेरे नाना के विषय में इस तरह हल्के शब्दों का प्रयोग करने का कोई अधिकार नहीं है। यह तो आपकी कृतघ्नता है।"

मैंने तल्खी से कहा तो मौसा हो-होकर हँसने लगे। जब हँसी रुकी तो होंठों तक आया हुआ थूक बाहर थूकने गए। जो खंखारे हैं जो पिनपिनाये हैं और जो सिनक-सिनक कर आवाज़ें निकाली हैं, उससे मेरे मन में उनके प्रति घृणा में दस गुणा इज़ाफ़ा हो गया था।

लौटकर बोले, "तुम्हारा इस तरह धिक्कारना मुझे अच्छा लगा।" वे देसी साबुन की छोटी चीचकि से हाथ साफ़ कर रहे थे, "इससे मुझे तुम्हारी माँ की याद आ गई। वह भी तुम्हारी तरह की क्रोधी और मुँहफट थी। लेकिन मस्तिष्क की बड़ी तेज़ थी। प्लास्टिक की निकर पहनकर दुकान पर तुम्हारे नाना का हाथ बँटाती थी। पुड़िया बाँधना और सौदा तौल कर देना। रोज़नामचे में साफ़-साफ़ हर्फ़ों में उधार दर्ज करना। लेकिन ज़ुबान की बड़ी तीखी थी। कोड़े जैसी फटकारती आवाज़ थी उसकी। कमज़ोर बंदे का तो पेशाब निकल जाए!"

पता नहीं मौसा ने माँ की तारीफ़ की थी या

बुराई! लेकिन उनके कथनों से मेरे सीने में आग सी लग गई थी।

मैं उनसे कोई कड़ी और चुभती बात कहना चाहता था जो उनके दिल को धक्के सी लगे। मगर वे वहाँ होते तो कहता। वे तो पेशाब निकलने की बात कहकर पेशाब करने चले गए थे। लौटे तो उसी चीचकि से रगड़-रगड़ कर हाथ धोने लगे।

"दुबे जी!चाय पिएँगे?" यह उनकी बहू आशा थी जो मौसा जी के पुत्र के निधन के बाद उनके साथ ही रहती थी। मौसा जी का पुत्र मेरा हमउम्र था लेकिन जल्दी ही गुज़र गया था। आशा तबसे अपने सास-ससुर के साथ थी।

"बना लो बिटिया!" कहकर उन्होंने गीले हाथों से आशा के गालों को छूने की कोशिश की।

आशा मुझे देखती हुई परे हट गई। मेरे मन में यूँ ही एक ख़याल आया कि अगर मैं नहीं होता तो क्या आशा मौसा को गाल छू लेने देती। फिर अपने ख़याल की क्षुद्रता ख़ुद ही शर्म आई।

आशा अब कोई जवान स्त्री नहीं थी। पचास पार कर चुकी थी।

मौसा जी चाय पीते हुए चुप रहे। लगता था किसी गहरी उधेड़बुन में थे। मैं भी उनके निकट बैठा चाय पीता रहा।

चाय पी के मौसा जी उठे। अपना और मेरा कप धो दिया। अंदर कप धरने गए और बहुत देर में लौटे।

मैं तब तक बैठा हुआ मौसा की कर्म-कहानी के बारे में सोचता रहा।

मौसा नाना के कहने के बावजूद मौसी को बम्बई न लेकर गए। बहुत दिन तक उनकी कोई ख़बर न लगी। दिन यूँ ही सरकते रहे।

दिल्ली शरणार्थियों से भर गई थी। चौड़े-चौड़े फुटपाथ शरणार्थियों की तहबाज़ारी का बाज़ार बन गए थे। नाना की दुकान पर हर समय भीड़ लगी रहती। नाना का हाथ बँटाने के लिए मेरी माँ यानी मैथिली नाना की छोटी बेटी पूरा दिन दुकान पर रहती। दुकान पर एक शरणार्थी युवक रोज़ आता। लोग उसे मास्टर जी कहते। रोज़ आने की वजह जाहिरा तौर पर तो कविता-कर्म थी अंदरूनी वजह दूसरी थी। यह तो नाना को बहुत बाद में पता चली। नाना एक समस्या पूर्ति के लिए देते जिस पर वह आशु कवि छंदबद्ध कविता प्रस्तुत कर देता। माँ मुस्कराती हुई सामान तोलती रहती और दो कवियों के मध्य वार्तालाप और कविता रचने की प्रक्रिया की साक्षी बनती। छंदबद्ध कविता में एक नायिका होती जिसका नख-शिख वर्णन करते हुए नाना कोठेवाली सहेली के अंग-अंग निहारने पहुँच जाते। वह युवक,जो कालांतर में मेरा पिता बना मेरी माँ के रूप का वर्णन करने लगता।

"दिन एक पूरी रात रुक-रुक कर चलने वाले मीठे स्वपन की भाँति बीत रहे थे तभी मौसा की एक चिट्ठी ने वज्रपात सा कर दिया।" माँ बताती थी। चिट्ठी डाकिया देकर गया था। व्यापारियों और औषधि कंपनियों की चिट्ठियों के बीच वह एक रूटीन चिट्ठी की तरह मैंने खोली थी और उसे पढ़ने लगी थी,"आदरणीय शर्मा जी,

मेरी तरफ से आपको और सासू जी को चरण-वंदना। शेष परिवार जनों को यथा-योग्य अभिवादन! दो महीने पहले मैं सकुशल बम्बई पहुँच गया था।

यह पत्र मैं आपको अचानक आ पड़ी समस्या से अवगत कराने के लिए और आपकी अमूल्य राय लेने के लिए लिख रहा हूँ। आशा है कि आप जैसा विद्वान व गुणी व्यक्ति जो धर्मशास्त्र और न्यायशास्त्र में निष्णात है साथ ही साथ करुणा, दया और सामाजिक कर्तव्य-बोध से ओत-प्रोत है ही मुझे इस दुविधा से छुटकारा दिला सकता है।

बम्बई पहुँचने के पश्चात्, मैंने अपने माता-पिता और परिवार के दूसरे बड़ों को अपने विवाह से अवगत कराया। मैंने सोचा तो यह था कि इतने विद्वान और गुणी व्यक्ति की पुत्री से संबंध जुड़ने पर वे कृतज्ञता और अनुकंपा से गद्-गद् होंगे और स्वयं मेरे साथ अपनी बहू को ससम्मान विदा करवा लेने के लिए उतावले हो जाएँगे।" माँ एक क्षण के लिए रुकी थी।

इसके बाद शायद दुकान पर कोई ग्राहक आ गया था उसका सामान देने और पैसा लेने में व्यस्त हो गई थी इसलिए चिट्ठी को आगे पढ़ने का समय ही नहीं मिला।

नाना के पास आने वाला रोज़ का कवि-शिष्य आ पहुँचा था। उसके लिए ठंडाई बनवा लाने के लिए उन्होंने माँ को घर भेज दिया।

रात को नौ बजे दुकान बंद करने का समय था। भाई-बहन सब सो गए थे। दुकान का हिसाब रोज़नामचे से बही में चढ़ाती हुई मेरी माँ बैठी हुई थी। यह उनका रोज़ का रूटीन था।

पिता ने मेहनती बेटी के सिर पर स्नेह का हाथ फेरा और छत पर जा लेटे। नानी पानी लेकर उनके पास पहुँची और पानी देकर उनके पैर दबाने लगी थी।

"वैदिही की माँ!मैं तेरा अपराधी हूँ। मुझे क्षमा कर दे!" नाना उदास होकर बोले थे, "मैंने तेरे साथ बहुत अन्याय किया है। तूने मेरी वजह से अनेक दुख झेले हैं। संत्रास और पीड़ा के क्षणों में तुमने जाने-अनजाने में जो श्राप दिए हैं वह मेरी बेटियों पर फलीभूत हो रहे हैं! मुझे क्षमा कर दे!" कहकर नाना बालकों की तरह रोने लगे थे। उनका रोना इतना तीव्र और हृदयविदारक था कि नानी ने घबराकर दोनों बेटियों को आवाज़ लगाई थी।

छोटी बेटी ने बड़ी बहन को नींद से जगाया और दोनों बहनें रोते हुए पिता के पास पहुँची थी।

"क्या हुआ? क्या हुआ?" बड़ी बेटी वैदेही ने माँ से पूछा था, "माँ तुम ने कुछ कहा क्या?"

"न !" माँ ने आँचल मुँह में दबाते हुए मुश्किल से रुलाई रोकी थी, "कोई बहुत ही बुरा समाचार मिला है। नहीं तो पक्के मन के तुम्हारे पिता ऐसे बच्चों की तरह बिलख-बिलख न रोते!"

छोटी बेटी मैथिली ने पिता को अपने आँचल में ऐसे छुपा लिया मानों पिता न होकर उसका अपना शिशु हो! पिता अपनी बेटी के मानस पुत्र होकर उससे लिपट गए थे।

"बेटी वैदेही! मैं तेरा अपराधी हूँ क्षण-भर के लालच ने मेरी बुद्धि हर ली थी। मुचुकुंद को अपने दरवाज़े पर दीन-हीन आश्रयहीन देखकर मैं उसका भाग्य-विधाता बन बैठा था।

मैंने अपनी सुशीला गऊ सी बेटी को उससे ब्याह करके सोचा था मानों मैंने युद्ध का मैदान मार लिया है। न दान-दहेज़ देना पड़ा न बारात-स्वागत का खर्च ही ज़िम्मे पड़ा," नाना अब सुबक रहे थे, "भूल गया था कि मैं भाग्य-विधाता नहीं भाग्य लिखने वाला तो कोई और है!"

पिता की बात मैथिली को कुछ-कुछ समझ आने लगी थी। जहाँ तक उसने चिट्ठी पढ़ी थी उसे लग रहा था कि आगे कुछ अशुभ समाचार ही लिखा होगा। लेकिन व्यस्तता में वह पूरी चिट्ठी पढ़ ही न पाई थी। अब पिता के दुःख से कातर होकर रोने से लग रहा था कि समाचार उसकी कल्पना से भी अधिक बुरा था।

"हुआ क्या है पिताजी! आप रोईए मत! आपकी बेटियाँ हर बुरा समाचार कलेजे पर पत्थर रखकर सुन लेंगी। लेकिन आपका रोना देखकर हमारा कलेजा दहल रहा है।" वैदिही मौसी ने कहा तो नाना उसे गले लगाकर रोने लगे थे।

"तुम्हारा पति वह नीच मुचुकुंद पहले से ही विवाहित निकला! मुझसे बड़ी भूल हुई बेटी! बड़ी भूल हुई! तुम्हारी माँग में सिंदूर की जगह मैंने अंगारे भरवा दिए उसके हाथों हाय!" माँ ने मुझे बताया था उस रात यह अशुभ समाचार हमने धड़कते दिल से सुना था। परिवार की तीनों औरतों पर वज्रपात हो गया था। इससे भी अशुभ संसार में कुछ होता है क्या? माँ ने कहा था।

मौसा लौटे तो मुझे पुकारा! मैं पुराने ढंग के सोफे की सख्त शीशम की पुश्त पर सिर टिकाए हुए ऊँघ रहा था।

"सो गए क्या भारत!" मौसा ने मुझे हिलाकर जगाया था।

"नहीं! सो नहीं रहा था। जाग रहा था! कुछ सोचते हुए आँखें बंद कर ली थी मैंने!"

मौसा ने नज़र का चश्मा लगा लिया था। उनके हाथ में एक क़िताब थी। क़िताब काफ़ी पुरानी थी। उसके पन्ने पीले पड़ चुके थे।

फिर भी उस पर छपे हुए अक्षर पढ़े जा सकते थे। पुस्तक का नाम 'कविता-संगम' बड़े काले अक्षरों में लिखा था। नीचे छोटे अक्षरों में कवि-द्वय वैद बाँके बिहारी शर्मा 'अग्रज' और उनके सुयोग्य शिष्य चिरंजीव मुरलीधर व्यास 'आशुकवि' लिखा था।

मुरलीधर व्यास मेरे पिता थे। दोनों ससुर-दामाद ने मिलकर यह पुस्तक छपवाई थी और मुफ़्त वितरित की थी। इस इकलौती पुस्तक की बदौलत मेरे पिता को सरकारी नौकरी मिल सकी थी जहाँ से वह मोटी पेंशन लेकर रिटायर हुए थे। इसके अलावा उन्हें जीवनभर कवि-सम्मेलनों से निमंत्रण मिलते रहे। कवि-सम्मेलनों में ओढ़ाई गई शालों और मिले हुए प्रशस्ति-पत्रों से घर भर गया था। माँ जब तक जीवित रही उनमें उनके प्राण बसते थे। सब चीज़ों की सही कीमत और स्थान वही जानती थी। मौसा को भी उनका स्थान मेरी माँ ने ही दिखाया था।

इसलिए मौसा माँ का नाम बड़ी ही कटुता से लेते थे।

"मौसा! आपकी उस चिट्ठी के बारे में अलग-अलग लोगों से अलग-अलग बातें सुनता रहा हूँ जीवन भर! आप उस चिट्ठी के लेखक थे क्या लिखा था आपने उसमें ऐसा कि मेरे नाना के घर भूचाल आ गया था।"

मौसा ने अपना चश्मा उतारकर रख दिया था। वह आँखें बंद करके सोचने लगे थे।

"मैंने लिखा था जब मैं नासमझ था तब मेरी शादी हो गई थी यह बात मुझे तब पता चली जब मैंने तुम्हारी मौसी से हुए विवाह के बारे में बंम्बई पहुँचकर बताया। मेरी वह ससुराल लाहौर में हमारे घर के पड़ोस में थी। बंम्बई में भी वे लोग मेरे परिवार के साथ आ निकले थे।"

मौसा इस तरह बोल रहे थे मानो थक गए हों और कभी भी सो सकते हों। उनकी थकान नींद में जाने का बहाना थी ताकि वे ज़िंदगी के उस सवाल के रू-ब-रू होने से बच सकें जिससे वह उम्र भर बचते आए थे।

वह दीवान पर अधलेटे हो गए थे। मैंने सोफे पर पड़ा हुआ तकिया उनके हवाले किया और बोला, "मौसा! तकिया ले लो!"

"अहाँ! मेरी उस तथाकथित पत्नी की एक आँख चेचक में जाती रही थी। चेहरे समेत पूरे शरीर पर भी चेचक के दाग थे। मैं उस लड़की से पीछा छुड़ाकर तुम्हारी मौसी को घर लाना चाहता था। मुझे चार हज़ार रुपयों की दरकार थी उस बेमेल शादी से छुटकारे के लिए। बिरादरी ने यही फैसला दिया था।"

"चार हज़ार रुपये सन् पचास-इक्यावन में बहुत बड़ी रक़म थी। मैंने सुना है उस रक़म में से दो हज़ार मेरे पिता ने दिए थे।" मेरे इस कथन पर मौसा ने तुरंत आँखें खोली और तमककर बोले, "क्या मुफ़्त में उठाकर दे दिए थे तेरे पिता ने दो हज़ार रुपये। तेरे नाना की चली चलाई दुकान खरीदी थी उसने। तेरे नाना उसी दुकान पर मालिक से नौकर हो गए थे। हुंह!"

नफ़रत से कही गई मौसा की इस बात से मुझे क्रोध आना चाहिए था। आख़िर तोहमत मेरे पिता पर लग रही थी, पिता इस दुनिया में नहीं थे। बेटा तो था।

मगर में शांत बैठा था। क्रोध तो दूर, मुझे एतराज़ उठाना भी सही नहीं लगा था। जिस दुकान में मेरे नाना ने अपना जीवन और ऊर्जा होम कर दी थी वह दुकान क्या सिर्फ दो हज़ार की थी। तरस खाकर उस दुकान को मेरे पिता ने नाना के ही हवाले कर दिया था। बीस रुपये महीना मासिक वेतन पर नाना उसी दुकान को सँभालते रहे थे जब तक जीवित रहे। माँ उस दुकान की अवैतनिक कर्मचारी थी पहले नाना की तरफ से। शादी के बाद पति की तरफ़ से। उनका वेतन किसी ने भी देना ज़रूरी न समझा। उसके बावजूद नाना मेरे पिता को महान् व्यक्ति समझते और उनके गुण गाते न थकते। पिता ने यह महानता इस तरह से ओढ़ ली थी जैसे उन्होंने नाना से सीखी हुई कविताई कवि-सम्मेलनों में गा-गाकर बहुत सी शालें ओढ़ ली थी जो अब मेरे घर के स्टोर रूम के किसी पुराने ट्रंक में ज्यों की त्यों धरी थी।

चार हज़ार में से दो हज़ार मेरे पिता ने दिए थे। बचे हुए दो हज़ार जैसे आए थे उस बात का ज़िक्र कोई दबी ज़ुबान से भी न करता था। मानों अलादीन का कोई जादुई चिराग़ हाथ लगा था जिसका राज़ खुल जाने पर चिराग़ चोरी हो जाने का ख़तरा हो।

"मौसा! वैसे मुझे पता है फिर भी आपके मुँह से सुनना चाहता हूँ कि बाकी के दो हज़ार

किधर से आए थे।" मैंने कहा तो मौसा ने मेरी तरफ मुँह भी न किया। मैंने सोचा मौसा सो गए हैं।

"तुम्हारी मौसी ने इस बात पर बहुत दिन तक चुप्पी साधे रखी थी। तुम्हारे पिता के दो हज़ार रुपए देने का ज़िक्र बाक़ायदा ढोल बजाकर करने वाली तुम्हारी मौसी दूसरे दो हज़ार के बारे में चुप्पी साध जाती थी।" मौसा बग़ैर मुँह मेरी तरफ़ घुमाए हुए बोले।

"फिर आपको पता कैसे चला?"

"पत्नी पति के साथ हज़ारों रातें अकेले गुज़ारती है। इन रातों में नेह,प्यार और विश्वास की फसल भी पैदा होती है खाली बच्चे ही पैदा नहीं होते। ऐसी ही किसी भावना के वशीभूत होकर तुम्हारी मौसी ने किसी कमज़ोर क्षण में यह राज़ खोल दिया था। वे दो हज़ार तुम्हारे नाना की उस शिया मुसलमान रखैल ने दिये थे जो परिवार के लिए बदनामी और दुख का कारण समझी जाती थी।"

कहकर मौसा ने मेरी तरफ मुँह किया। मौसा की आँखों में आँसू थे।

"मौसा! क्या स्वर्गीय मौसी की याद आ गई?"

"नहीं! मुझे अपनी नीचता और कृतघ्नता कई बार कचोटती है। तुम्हारी मौसी ने मुझे वह राज़ भी विश्वास के एक कमज़ोर क्षण में बता दिया जो वह जी-जान से छुपा कर रखना चाहती थी। मगर मैंने अपना राज़ उसे नहीं बताया। कैसा राक्षस मनोवृति का व्यक्ति था मैं!"

"चुप हो जाओ मौसा! वह राज अगर दुनिया में किसी व्यक्ति को मालूम था तो वह मेरी माँ थी। क्योंकि वह एक साधारण स्त्री होने की बजाय हिसाब-किताब रखने वाली मुनीम थी। कहाँ से पैसा आया और कहाँ गया यह जान लेना उनके लिए आसान सा काम था। इसलिए वह आपका राज़ जानती थी जिसने आपने बड़ी कोशिश से मौसी से छिपाकर रखा।"

"हाँ! मुझे तुम्हारी माँ से बहुत डर लगता था। वह जीवन भर मुझे इतनी हिक़ारत और नफ़रत से देखती थी। जब भी मुझसे बात करती उसका स्वर भर्त्सना-पूर्ण होता। वह सबके सामने कह देती थी,"दुबे अगर तू मेरी बहन का पति न होता तो तुझे जेल की चक्की पिसवा देती! मैंने तुझ जैसा नीच व्यक्ति नहीं देखा।"

मुझसे जवाब न बनता। मेरी ससुराल के लोग इसे साली-जीजा के बीच की नोकझोंक समझ कर टाल देते।

"वे चार हज़ार रुपये जो तुम्हारे नाना ने अपनी दुकान बेचकर और अपना सम्मान तजकर उस कोठेवाली से लेकर इकठ्ठा किए! उनकी ज़रूरत ही न रही थी। मेरी उस पहली ससुराल का राज़ मुझ पर अचानक किसी ने खोल दिया था। मेरी वह पत्नी तो बचपन में ही गुज़र गई थी। वह चेचकरु कानी लड़की जिसके नाम के चार हज़ार रुपये का दंड मैं भरने के लिए तैयार हो रहा था वह तो मेरी साली थी।"

"फिर भी आपने वे चार हज़ार रुपये नाना को वापिस न किये थे।" मैंने माँ की जन्म भर की हिक़ारत और नफ़रत अपनी आवाज़ में भरने की कोशिश की। मगर मेरी आवाज़ में तरस था।

"चार हज़ार रुपये उस समय बहुत बड़ी रकम होती थी। मेरे मन में लालच आ गया था। तुम्हारे नाना ने अपनी बेटी का वैवाहिक जीवन निष्कंटक रखने के लिए जो त्याग किया था उस वैवाहिक जीवन की नींव मैंने धोखे और लालच पर रखी थी।" मौसा का गला भर्रा आया था।

"मुझे एक बात समझ नहीं आई थी। मेरी माँ को कैसे पता चला कि आपने वे चार हज़ार रुपये उनको नहीं दिए? जबकि मौसी को पता नहीं चला जो दिन-रात आपके साथ रहती थी।" मैंने सवाल किया था।

"तुम्हारी मौसी एक भोली औरत थी। विश्वास करके चलती थी। ईश्वर उसे स्वर्गों में स्थान दे। तुम्हारी माँ चालाक थी। मेरे बैंक खाते में चार हज़ार रुपये ज्यों का त्यों पड़े थे। मैंने उन रुपयों को बहुत साल तक हाथ नहीं लगाया। फिर चीज़ों के दाम बढ़ने लगे। मुझे लगा कि बाज़ार में इन रुपयों की कुछ भी कीमत न रहेगी। मैंने हिसार जिले में पंद्रह एकड़ ज़मीन खरीद ली थी। बहाना यह बनाया कि मैंने बम्बई में अपने हिस्से की जायदाद बेच दी है। जबकि ऐसी कोई जायदाद थी ही नहीं। लेकिन यह बात तेरी माँ की पारखी नज़रों से छुपी नहीं रही। मेरा बैंक खाता कनॉट प्लेस के पंजाब नेशनल बैंक में था। तेरे नाना की दुकान का करंट एकाउंट भी उसी बैंक में था। तुम्हारी माँ ही उसमें लेन-देन करने जाती थी। उसने मेरे एकाउंट का लेज़र चेक कर लिया था। चार हज़ार की रकम उसी तारीख़ की जमा मेरे एकाउंट में यूँ की यूँ पड़ी थी! उस पर ब्याज और जुड़ गया था। वही रकम मैंने ज़मीन की खरीद में इस्तेमाल की थी। बम्बई की जायदाद बेची होती तो कोई ताज़ा एँट्री बैंक खाते में आती!"

मौसा ने बताया था। यह राज़ बताकर वे कुछ हल्के हो गए थे। मगर इस बात का ज़िक्र मेरी माँ ने मुझसे बहुत साल पहले कर दिया था।

"मगर वह धोखाधड़ी मेरे कुछ काम नहीं आई! मेरे बेटे ने वह जायदाद मेरे झूठे दस्तखत करके बेच दी और सारी रकम जुए और शराब में उड़ा दी। जब मुझ पर यह बात खुली तो मेरे बेटे ने मेरा सामना करने की बजाय ख़ुदकुशी कर ली। जैसा मैंने किया वैसा अंजाम मैंने भुगत लिया। मगर तुम्हारी मौसी की क्या ग़लती थी। उसने अपना बेटा क्यों खोया?" मौसा फिर से रोने लगे थे।

उनकी बहू आशा ने उनको आकर डाँट कर चुप कराया,"दुबे जी! चुप कर जाओ भगवान् के वास्ते! सासू माँ के दुख का ख़याल आया आपको। मेरा नहीं आया। मैंने किस नाम का रंडापा काटा। हुंह! रहने दो फरेब! करे कोई भरे कोई!"

बहू की डाँट सुनकर मौसा आँखें पोंछकर हँसने लगे थे,"ह!ह!!मेरी बेटी नाराज़ हो गई थी। यूँ ही थोड़ा दिल भर आया था।"

मुझे बेबसी से हँसते हुए पोपले मुँह वाले अस्सी वर्षीय मौसा बड़े वीभत्स और घृणास्पद लगे। शाम घिर रही थी। मैं उठकर चला आया। आशा भाभी पुकारती रह गई,"भैया!खाना बन गया है। खाकर चले जाते!" लेकिन मैं रुका नहीं।

000

सुख विदाई का

शेफालिका सिन्हा

श्यामाचरण बाबू आज अपनी नौकरी से रिटायर हो गए पर इससे उनके जीवन में कोई ख़ास अंतर नहीं होने वाला। वह जानते हैं, अपनी सेवा से निवृत्त हुए हैं,अपने काम से नहीं। वह गणित के इतने अच्छे विद्वान और जानकार प्रोफ़ेसर हैं कि उनसे ट्यूशन पढ़ने के लिए छात्र लाइन लगाते हैं। शहर के दो इंजीनियरिंग कोचिंग संस्थान वाले तो पहले से ही चक्कर लगा रहे हैं कि वे उनके संस्थान से जुड़ जाएँ। अब श्यामाचरण बाबू को न कमाने की चाहत है और ना ही ज़रूरत। पारिवारिक ज़िम्मेदारी सब पूरी कर चुके हैं, दो बेटे हैं, दोनों ही व्यवस्थित हैं। अपने पति-पत्नी के लिए पेंशन बहुत होगी। फिर भी उनकी पूरी ज़िंदगी तो पठन-पाठन से ही जुड़ी रही है, इसके बिना वह नहीं रह सकते। उनकी पुरानी योजना है, छात्रों के लिए एक उपयोगी किताब लिखने की, जिसे वे अब पूरा करेंगे।

उनकी इच्छा है कि उनका रूटीन भंग न हो और वह पठन-पाठन से जुड़े रहें, लेकिन अभी परिवार में सबका ऐसा दबाव है कि एक महीने का आराम उनकी लाचारी हो गई है। हालाँकि वे जानते हैं कि उन्हें काम करने से,पढ़ाने से जितना आराम मिलेगा, उतना बैठने से नहीं, पर वह कैसे समझाएँ?

उनकी पत्नी उमा खुश है कि ज़िंदगी में पहली बार उनके पति ने उनकी बात पर ध्यान दिया है। अभी तक तो उनका ध्यान हमेशा कागज़ किताबों पर ही रहता आया है। अपने छोटे बेटे और बहू के साथ रहने की उनकी ख़्वाहिश पूरी होने वाली है। इस बार वे लोग वहाँ पूरा एक महीना साथ रहेंगे, अपने छोटे बेटे के साथ। वह बेंगलुरु में नौकरी करता है, वर्ष में एक बार सपरिवार अपने घर रांची आता है।

छोटा बेटा प्रभाकर जब रांची से जाने लगता है तो अपनी माँ से ज़रूर शिकायत करता है कि वे लोग अब उसे बेटा नहीं मानते, इसीलिए कभी साथ आकर नहीं रहते। छोटी बहू तो जाते समय इतनी भावुक हो जाती है कि उसके आँसू निकल पड़ते हैं। वह भी अपनी सास से ज़रूर कहती है, "अम्मा जी, कितने वर्षों से हम लोग आपका इंतज़ार कर रहे हैं, देखिए आप कब आते हैं? प्रशांत और निशांत भी तो आप लोगों के साथ रहना चाहते हैं, अपने दादा- दादी का प्यार चाहते हैं।"

इसलिए कई महीने पहले से ही यह प्रोग्राम बना है कि रिटायरमेंट के बाद वे दोनों अपने छोटे बेटे-बहू के पास बेंगलुरु जाएँगे। फ्लाइट का रिज़र्वेशन तो एक महीना पहले ही हो चुका है। हालाँकि उनकी दिली इच्छा है कि अभी भी प्रोग्राम कैंसिल हो जाए। यहाँ इनके मित्र हैं, पढ़ाई-लिखाई का एक माहौल है, जिसके वे अभ्यस्त हो चुके हैं। वे चाहते हैं कि कोई उनके पक्ष में कह दे कि वह कहीं नहीं जाएँगे। वे जानते हैं, उमा के तो नहीं कहने का सवाल ही नहीं।

बड़ा बेटा सुधाकर और बड़ी बहू रागिनी जो यहाँ उनके साथ रहते हैं, दौड़-दौड़ कर उनके जाने का इंतज़ाम कर रहे हैं। चप्पल, धोती, तौलिया सब ज़रूरत की चीज़ों को वे जमा कर रहे हैं। वे तो ऐसी तैयारी कर रहे हैं, जैसे साज़ो-सामान के साथ बेटी को ससुराल विदा करना हो। ऐसी बात नहीं कि उनको समझ नहीं आ रहा, फिर भी पत्नी को लगता है कि वह कुछ नहीं समझते। वह उनसे बार-बार कुछ ऐसा कह रही है ताकि वे अपनी बात से मुकर न जाएँ-

"देखिए इस बार न मत कीजिएगा, देख रहे हैं सुधाकर और रागिनी कितने खुश हैं। उन्हें भी तो अपने बाल- बच्चों के साथ आज़ादी से रहने का हक़ है।"

इन सब बातों से उन्हें बहुत चिढ़ होती है, जैसे वही सबकी आज़ादी का हनन कर रहे हों।

उनका अपना मकान है यहाँ, वे किसी के साथ नहीं रह रहे। बेटे की नौकरी यहाँ है, इसलिए वह अपने परिवार के साथ यहाँ रह रहा है। वे अपना ही नहीं बाकी लोगों की भी ज़रूरत पूरी कर रहे हैं। साथ रहने से तो बड़े बेटा का ही बैंक बैलेंस बढ़ रहा है। उसके बाद भी समय से चाय,

शेफालिका सिन्हा
फ्लैट नं. 5 सी, फ़ेज 3, शुभाश्री अपार्टमेंट,
बरियातु, रांची-834009 (झारखंड)
मोबाइल- 9955346566
ईमेल- shefalikaa.sinhaa@gmail.com

नाश्ता और खाना देना इन्हें भारी लग रहा है?

उनकी पत्नी जानती है कि यही सच्चाई है, बेटा-बहू, पोता-पोती सब को उनकी दखलअंदाज़ी पसंद नहीं। कोई भी प्रेम-स्नेह से उनके प्रति अपना काम नहीं करता। इधर के कुछ वर्षों में तो किसी तरह समय पर नाश्ता-खाना देकर ड्यूटी निभाने वाली बात हो गई है। वे अपनी छोटी बहू के साथ अकेले कभी नहीं रही हैं, पर उन्हें लगता है कि वह बहुत संस्कारी और सुशील है। यहाँ आती है तो 'अम्मा जी, अम्मा जी' कहते नहीं थकती। एकदम प्यार की भूखी लगती है। जब से उसके पास जाने की बात हुई है तब से उमा को और अधिक उस पर प्यार उमड़ रहा है। इस बड़ी बहू रागिनी से जो पन्द्रह वर्षों से उनके साथ है, आजकल उसके दोष ही नज़र आ रहे हैं।

रागिनी ऊपर से तो कुछ कह नहीं रही है, निर्लिप्त भाव से अपना रूटीन पूरा कर रही है पर भीतर ही भीतर उनके जाने के बाद की व्यवस्था सोच कर खुश हो रही है। एक बार सुबह नाश्ता-खाना सब बना कर रख देगी और दिन भर ख़ूब घूमेगी। एक ही सब्ज़ी बनाकर तीनों टाइम सबको खिलाएगी। अभी तो तीनों टाइम अलग-अलग चीज़ें बनानी पड़ती हैं। सबसे कष्ट तो उसे होता है जब गर्म रोटी सेंक कर खिलाना पड़ता है। मन ही मन सोच-सोच कर खुश होती है कि वहाँ जाकर अम्मा जी देखें तो दिमाग़ ठिकाने लग जाएगा।

आश्चर्य की बात है कि अमृत और अनु अपने दादा-दादी से बहुत जुड़े हुए हैं और दादा- दादी चिंतित भी हैं कि उनके यहाँ नहीं रहने से वे कैसे रहेंगे? उनकी पढ़ाई कौन देखेगा?

वही अमृत और अनु अपने दादा- दादी के नहीं रहने पर, क्या-क्या करेंगे, मन ही मन उसकी लिस्ट बना रहे हैं। कौन से सीरियल पूरा देखना है, कौन से सिनेमा को मल्टीप्लेक्स में जाकर देखना है। अमृत एक संडे अपने दोस्तों के साथ पिकनिक ज़रूर मनाएगा। अनु अपनी सहेलियों को घर पर बुलाएगी।

दादा-दादी किसी बात के लिए मना नहीं करते, लेकिन दादा बहुत अनुशासन में देखना चाहते हैं। बात-बात पर यहाँ तक कि दोस्तों के सामने भी टोक देते हैं। वे दसवीं और बारहवीं में पढ़ते हैं, दादा समझते हैं कि वे छोटे बच्चे हैं। यही बात अमृत और अनु को पसंद नहीं। श्यामाचरण बाबू के रिटायर होने और बेंगलुरु जाने के प्रोग्राम से यहाँ सभी खुश हैं। अब तो उनके जाने में दो ही दिन बचे हैं। उमा भी अपने छोटे बेटे-बहू, उनके बच्चों के लिए उपहार और कपड़े खरीदने में लगी है, खाली हाथ जाएगी क्या? उसे तो मन है कि गुझिया और मठरी कम से कम बनाकर ले जाए, लेकिन बड़ी बहू से बनाने के लिए कहने में संकोच हो रहा है। सोचती है वहीं बनाकर अपने बेटे को खिला देगी। उसे ये सब चीज़ें बहुत पसंद हैं। पता नहीं छोटी बहू स्मृति बनाती है या नहीं।

आज रांची एयरपोर्ट पर सुधाकर, रागिनी, अमृत और अनु आए हैं उन्हें छोड़ने। लौटते समय सुधाकर अपने बेटे की फरमाइश पर एक मॉल में घूमते हैं और फिर अंबर होटल में दिन का खाना खाकर घर लौटते हैं। जितनी देर में वे घर पहुँचते हैं, उतने ही समय में फ्लाइट बेंगलुरु पहुँच जाती है।

यहाँ एयरपोर्ट शहर से बहुत दूर है, फिर भी छोटा बेटा प्रभाकर आया है, अपनी अम्मा बाबूजी को रिसीव करने। रास्ते भर माँ सोचती आ रही है, घर पहुँचते ही अपनी बहू के गले लग जाएगी, ख़ूब प्यार करेगी। दोनों पोते प्रशांत और निशांत ज़रूर उन्हें देखते ही चिपक जाएँगे।

अपने सामान के साथ वे लिफ्ट से ऊपर चढ़ते हैं। प्रभाकर दोनों हाथों का सामान रखकर बाहर के दरवाज़े में लगे ताले में चाबी लगाता है तो उमा चौक पड़ती है,

"क्यों कोई नहीं है? स्मृति कहाँ है?"

"अरे अम्मा वहाँ के हाल-चाल पूछने में मैं यह बताना भूल ही गया, एक महीना हुए स्मृति ने स्कूल में पढ़ाना शुरू किया है, बहुत अच्छी सैलरी है। प्रशांत और निशांत भी बड़े हो गए हैं। वह चाहती थी कि कुछ करे तो वही उसने ज्वाइन कर लिया है।"

अपने अम्मा बाबूजी के दो बड़े सूटकेस, एक बैग सबको जगह पर सेट करता जा रहा है और बोलता भी जा रहा है,

"लेकिन वह दो बजे तक आ जाएगी। आप नहा धोकर फ्रेश हो जाइए, डाइनिंग टेबल पर नाश्ता रखा हुआ है। मैं अभी नहीं रुक सकता, अभी फैक्ट्री जा रहा हूँ बस आप लोगों को लेने के लिए आया था। बच्चे भी तीन बजे तक आ जाएँगे।"

प्रभाकर को इतनी हड़बड़ी थी कि उनकी बातों को सुनने का भी समय नहीं था। वह जल्दी से उन्हें समझा कर निकल गया। प्रभाकर के जाते ही श्यामाचरण बाबू ने अपनी पत्नी उमा पर व्यंग्य किया,"तो श्रीमती जी छोटे बेटे-बहू के फ्लैट पर आपका स्वागत है, इतने वर्षों के बाद यह अवसर मिला है, आप खुश तो हैं ?"

पति के इस व्यंग्यबाण ने उमा की दुखती रग को छेड़ दिया। फ्लैट में घुसते ही एक अजीब सी उदासी ने उसे घेर लिया है, जिसे वह अपने पति के सामने प्रकट नहीं करना चाह रही, इसलिए वह चुप रही। वह सोचने लगी जब एक दो महीने पहले से ही यहाँ आने का प्रोग्राम था तो स्मृति ने अभी स्कूल क्यों ज्वाइन किया? वह दो महीने बाद भी कर सकती थी। उसने अपनी सोचने की दिशा बदली और अपने पति से पूछा, "आपको नाश्ता दे दूँ या आप नहा कर करेंगे ?"

"नहीं आता हूँ नहाकर, बहुत गर्मी लग रही है।"

वे नहाने चले गए तो उसने कैसरोल खोल कर देखा, आलू की सब्ज़ी। मन में सोचा कि आलू की सब्ज़ी तो ये खाते नहीं, सबको पता है।

दूसरे में परवल की भुजिया और तीसरे में सूखी रोटियाँ, तो यही है उनके आने की खुशी में बना खाना। वहाँ रांची में रागिनी को न भी बनाने का मन हो तो कम से कम दाल भरी हुई पूरी और खीर तो ज़रूर बनाती है, किसी के आने पर। फिर सोचने लगी कि वहाँ टेबल पर रखा खाना अपने से निकाल कर खाना उसे अपमान लगता था। उसकी आँखें नम हो गईं।

श्यामाचरण बाबू टेबल पर आकर बैठे और फिर जड़ दिया-"तो बहू ने अपनी सास

के स्वागत में क्या बनाया है, ज़रा हमें भी खिलाओ।"

उमा के चेहरे का रंग उड़ गया, चेहरे पर उदासी छा गई। और दिन होता तो वह कभी चुप नहीं रहती। उसने कैसरोल से नाश्ता निकाल कर रख दिया, नाश्ता देखकर श्यामाचरण बाबू भी अचकचा गए, वे तो सचमुच मज़ाक कर रहे थे, उन्हें ऐसे नाश्ते की उम्मीद नहीं थी। अब वे चुप हो गए, बस उमा से इतना ही पूछ पाए, "तुम नहीं करोगी?"

आप कीजिए, मैं भी आती हूँ नहा कर। श्यामाचरण बाबू नाश्ता कर यह सोचने लगे कि कहाँ आराम करें ? बेटा तो इतनी हड़बड़ी में था कि उसने तो कुछ बताया ही नहीं। एक कमरा तो बेटे बहू का ही है, वहाँ तो कोई सवाल ही नहीं है। लिविंग स्पेस में सोफा दीवान सब लगे हैं, पर यहाँ लेटना ठीक रहेगा या नहीं। तब तो बस वही एक कमरा बचता है। यह दोनों पोतों का लग रहा। उसमें दोनों तरफ दो पलंग लगे हुए हैं। वे वहीं पर जाकर लेट जाते हैं। उमा भी नाश्ता करके उसी कमरे में दूसरे पलंग पर लेट जाती है। फ्लैट में पति-पत्नी के बीच भी एक मौन छा जाता है। कभी दिन में नहीं सोने वाले दोनों प्राणी आज सो जाते हैं।

कॉल बेल की आवाज़ पर उमा दरवाज़ा खोलती है, बहू स्मृति उन्हें पैर छूकर प्रणाम करती अंदर घुसती है,

"कोई दिक्कत तो नहीं हुई अम्मा जी, आप लोगों ने नाश्ता तो कर लिया?"

शायद बाहर से आने के कारण स्मृति के वाणी की मिठास भी कम हो गई है, ऐसा उमा को लगा। वह कपड़े बदल कर आई और गैस पर दोनों तरफ उसने दो कुकर चढ़ा दिया। उमा के पूछने पर उसने सफाई दी कि दाल और चावल हैं, पहले से ही डाल कर जाती है और टेबल पर सब्ज़ी भुजिया तो बची हुई है ही। उमा समझ गई कि फिर वही सब्ज़ी खाना पड़ेगा। उमा को समझ नहीं आया की स्मृति को कैसे याद नहीं कि उसके बाबू जी उसी सब्ज़ी को दोबारा नहीं खाते। वह भी आलू की सब्ज़ी या फिर वह याद न होने का नाटक कर रही है। मन तो हुआ कि वह उसे कुछ कहे, लेकिन उसने अपने ऊपर कंट्रोल किया।

प्रशांत निशांत के आने के बाद सब ने मिलकर खाना खाया। स्मृति अपने कमरे में आराम करने चली गई, प्रशांत, निशांत वीडियो गेम्स खेलने लगे। उमा कभी सोफे पर तो कभी दीवान पर बैठकर समय काटने लगी। मन में यही सोच रही थी कि शाम को ऑफ़िस से बेटे के आने पर बातें होंगी। पर पाँच बजे बेटे का फ़ोन आया, उसने कहा कि शाम को बॉस के यहाँ पार्टी है, स्मृति को बोल दीजिएगा, वह तैयार रहेगी।

बेटा आया, स्मृति तैयार थी। उसने अपनी सास से कहा, "अम्मा जी बड़ी हड़बड़ी हो गई, जो मन होगा आप अपने और बाबूजी के लिए रात का खाना बना लीजिएगा। प्रशांत, निशांत तो अपने से बना कर मैगी भी खा लेते हैं।"

ऐसे स्वागत से आठ घंटे में ही श्यामाचरण बाबू और उमा उबने लगे। कम से कम घर खुला हो, आँगन हो, लोग बाग दिखते हों तो थकान कुछ वैसे ही कम हो जाती। पर चार तल्ले फ्लैट में बैठे-बैठे उनका दम घुटने लगा। उन्होंने साफ मना कर दिया कि रात को खाना नहीं खाएँगे। उमा अपने लिए क्या बनाती, स्मृति जो मैगी के पैकेट रखकर गई थी उसे उन्होंने बनाकर दोनों पोतों को दे दिया।

दो-चार दिनों में ही पता चल गया कि शाम को पार्टी क्लब में जाना रोज़ की बात है, वीकेंड पर बच्चे भी जाते हैं। स्मृति स्कूल जाने के पहले सब्ज़ी, नाश्ते, खाने का इंतज़ाम कर टेबल पर रख जाती है, रात तक वही चलता रहता है। पर यह अधिक समय तक नहीं चला क्योंकि श्यामाचरण बाबू की जीभ उसे बर्दाश्त नहीं कर पा रही थी। उमा को स्मृति से रसोई की ज़िम्मेदारी लेनी पड़ी। स्मृति को अब और आराम हो गया, फरमाइश करके ख़ुद निकल जाती।

अब उमा रसोई में और श्यामाचरण बाबू जो अपनी किताबें लेकर आए थे, उसी में डूब गए। सुबह शाम पार्क में जाकर बैठते, दोनों पोतों को तो अपने दादा-दादी से कोई ख़ास मतलब नहीं था। बच्चों का भी क्या दोष, जन्म से ही उन्होंने अपने मम्मी-पापा के अलावा किसी तीसरे को यहाँ देखा ही नहीं। वे तो अपने आप में ही व्यस्त रहते हैं, खेलते हैं, लड़ते हैं, पढ़ते हैं। उन्हें किसी तीसरे की ज़रूरत नहीं महसूस होती। समझदार भी हो गए हैं, प्रशांत आठवीं में और निशांत छठी क्लास में है। इसलिए दो दिनों में ही दादा-दादी के लाड़ प्यार से संतुष्ट हो गए और वे अपनी दुनिया में खो गए।

उमा की इच्छा थी कि इतनी दूर आई है, इतना नाम सुना है शहर का, वह घूम लेगी, लेकिन बेटे को फुर्सत हो तब न। आजकल तो संडे को भी ऑफ़िस जाता है। श्यामाचरण बाबू को मैसूर का वृंदावन गार्डन और मैसूर महल को देखने का मन था, पर मन की बातें मन में ही रह गई; क्योंकि आज अपने आने के सोलहवें दिन ही वे लौट रहे हैं। उनका मन आराम करते-करते उचट गया है।

उनका बेटा प्रभाकर आँखें चुराते हुए अपने पिता से कहता है, "बाबूजी आप तो एकदम घबरा गए, इतनी जल्दी क्यों जा रहे हैं? आप लोगों का तो एक महीने का प्रोग्राम था, इसलिए मैं भी निश्चिंत था, कहीं आपको घुमा भी नहीं पाया।" श्यामाचरण बाबू ने अपने को नार्मल रखने की कोशिश करते हुए कहा, "रांची से ब्राईट कोचिंग वाले वर्मा जी रोज़ फ़ोन कर रहे हैं कि आ जाइए, नए सेशन को शुरू करना है। वैसे भी अब मैं रिटायर हो ही गया हूँ, जब मन होगा फिर आ जाऊँगा।"

इधर उमा जब से आई है, अपनी बहू स्मृति की मीठी आवाज़ के लिए तरस गई है। आज उसी बहू की मिश्री घुली आवाज़ सुनाई पड़ती है,

"अम्मा जी आप अचानक क्यों जाने लगे, बिल्कुल रहा जैसा नहीं लग रहा, इतने दिनों पर आईं, अब पता नहीं कब आइएगा।" और आँखों से आँसू झलक पड़े।

आँखों से आँसू निकले या आवाज़ से शहद, उमा को इतना तो समझ आ रहा है कि आज बेटा बहू के चेहरे खिले हुए हैं। आज सब फुर्सत में भी हैं, सबके पास समय है, सब एयरपोर्ट चल रहे हैं, उन्हें विदा देने।

000

अगोचर

हरि प्रकाश राठी

एडवोकेट सतीश शर्मा को अजमेर शहर में कौन नहीं जानता। न्याय के क्षेत्र में वे एक जाना-माना नाम हैं। जो भी उनके संपर्क में आता है, चाहे वह जज हो अथवा मुवक्किल, पुलिस अधिकारी हो अथवा अन्य साथी एडवोकेट, सभी उनकी प्रतिभा का लोहा मानते हैं। मुवक्किल शर्मा जी को केस देकर ही आधी जीत मान लेते हैं। एक अन्य विशिष्ट बात जिसके लिए भी शहर में उनका गुणगान होता है, वह यह कि वे न्याय की गुहार में खड़े ग़रीब आदमी से पैसा नहीं लेते। इतना ही नहीं उसे न्याय दिलाने का भरसक प्रयत्न करते हैं। परोपकार की सुगंध परफ्यूम की तरह फैलती है। प्रेक्टिस करते बारह वर्ष होने को आए, उनके कैरियर में जीत की जड़ी लगी है।

उर्स के मेले पर अजमेर में ख़्वाजा मोईनुद्दीन चिश्ती की दरगाह पर दुआ माँगने हज़ारों लोग आते हैं। कहते हैं वे एक सूफ़ी फ़कीर थे। क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, हर फिरके के लोग यहाँ आकर उस फ़कीर की क़ब्र के आगे अपनी इच्छाओं का आँचल फैलाते हैं, जिसके स्वयं के पास ख़ुदाए नूर के सिवा कुछ न था। इच्छाओं के असंख्य धागे दरगाह की दीवारों से बँधे हुए दिख जाते हैं। कितने अरमान यहाँ मरघट हो गए, पर अनंत आकाश की तरह मनुष्य की आरज़ुओं का कोई अन्त नहीं है। दाता हज़ार हाथों से लुटाता है, फिर भी लाखों मनुष्य हर दिन हाथ पसारे खड़े मिलते हैं। इंसान सदियों से इच्छाओं के अनंत नागपाश में जकड़ा है। सारा का सारा संसार जैसे एक फ़कीर के दरबार में आकर खड़ा हो जाता है। कहते हैं, यहाँ जो मुराद माँगो, पूरी होती है। उर्स के दिनों में शहर एक अजीब चहल-पहल, शोर-शराबे से भर जाता है।

सतीश शर्मा आज रेलवे स्टेशन पर अपने पुराने सहपाठी नंदकिशोर उपाध्याय के साथ खड़े हैं। उम्र में दोनों चालीस पार हैं। नंदकिशोर ख़्वाजा के भक्त हैं एवं हर साल अजमेर आते हैं। स्टेशन पर सतीश की पत्नी उषा एवं चार वर्षीय पुत्र मयंक भी साथ आए हैं। नंदकिशोर कोटा में सीनियर मजिस्ट्रेट हैं। दोनों दोस्तों ने जयपुर से कानून की डिग्री साथ-साथ पन्द्रह वर्ष पहले पास की थी, एक का न्यायिक परीक्षा में चयन हो गया। शर्माजी ने अपने ही शहर अजमेर आकर वकालात करना उचित समझा। दोनों की शादी हुए भी बारह वर्ष होने को आए। नंदकिशोर के एक पुत्र है एवं इस बार उसकी परीक्षा होने के कारण वह अकेले अजमेर आए हैं। सतीश को पुत्र रत्न शादी के कई साल बाद मिला है। मुश्किल से मिले धन को जैसे साहूकार सँभाल कर सेता है, वैसे ही मियाँ बीबी मयंक को रखते हैं। मयंक दोनों की आँखों का तारा है। इस बार नंदकिशोर डिस्ट्रिक्ट जज बनने का सपना लेकर ख़्वाजा के दरबार में आए हैं।

रेलवे स्टेशन पर अजीब-सा कोलाहाल है। कोटा की गाड़ी प्लेटफार्म पर अभी-अभी आकर खड़ी हुई है। स्टाल वाले, फेरी वाले ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहे हैं। कोई रिज़र्वेशन चार्ट में अपनों का नाम देखकर ज़ोर से कह रहा है, सभी इधर से आ जाओ। किसी को अपना नाम नहीं मिल रहा है तो वह टीटी के इर्द-गिर्द अर्थपूर्ण मुस्कराहट के साथ घूम रहा है। कुली सामान लादे

हरि प्रकाश राठी
सी-136 प्रथम विस्तार, कमला नेहरू नगर,
जोधपुर (राज)
मोबाइल- 9414132483
ईमेल- hariprakashrathi@yahoo.co.in

यात्रियों की परवाह किये बगैर धक्का-मुक्की कर इधर-उधर घुस रहे हैं। सतीश एवं नंदकिशोर कॉलेज के दिनों को रह-रह कर याद कर रहे हैं। वे अल्हड़पन की बातें, वे उमंगें, वे सपनों के दिनों की बातें करते दोनों नहीं थक रहे हैं। प्राध्यापकों का मखौल उड़ाना, क्लासें छोड़-छोड़ कर केन्टीन में घंटों बैठे रहना, मिस कृष्णा के आगे-पीछे घूमना और ऐसे ही कई वाक़ये याद कर-करके दोनों मित्रों का हँसी से बुरा हाल हो रहा है। सतीश की पत्नी उषा भी इन्हीं बातों का लुत्फ़ ले रही है। देखते ही देखते गाड़ी ने सीटी दी, ट्रेन में हलचल और भी बढ़ गई। कोई अपनों से मिलन की उमंग में उन्मत्त है, कोई अपनों से विदा के ग़म में ग़मगीन है। पल भर में नंदकिशोर गाड़ी में चढ़ गए एवं अब गाड़ी ने रुख़सत ले ली है। सबके हाथ उपर उठे हैं। बारात के आने के पहले एवं ट्रेन के जाने के समय एक अजीब-सा माहौल बन जाता है।

गाड़ी अब प्लेटफार्म छोड़ चुकी है, लेकिन यह क्या? सतीश एवं उषा एकदम भौचक्के हैं, मयंक कहाँ गया? सतीश ने कहा, "यहीं कहीं होगा।" स्टेशन पर इधर-उधर छानबीन की, फिर पूरा स्टेशन बेतहाशा ढूँढ़ा पर मयंक का पता नहीं चला। अगले स्टेशन पर स्टेशन मास्टर को फ़ोन कर नंदकिशोर के मार्फत सारी गाड़ी रुकवाकर चेक की गई, पर मयंक उसमें भी नहीं था। सारे शहर की पुलिस को इत्तला दी गई, जगह-जगह नाकेबंदी की गई, पर मयंक का कहीं पता नहीं चला। हताश शर्मा दंपति अपने घर आ गए।

रात दोनों की आँखों से नींद ओझल थी। दोनों कटे वृक्ष की तरह निर्जीव-से पड़े थे, जैसे किसी के सारे जीवन की पूँजी, चोर चुरा ले गया हो। उषा रो-रो कर बेहाल हो चुकी थी, मानों कोई निर्दयी, गाय से उसका बछड़ा छीन ले गया हो। सतीश भी हताश होकर पत्थर बनी आँखों से खिड़की से आसमान में झाँक रहा था, जैसे आकाश ही उसका एकमात्र अवलंब हो। उसे कुछ भी नहीं सूझ रहा था। हाय! मेरा मयंक कहाँ होगा? उसने दूध पीया होगा या भूखा ही होगा, किसी ने उसके खाने की सुधि ली होगी या नहीं? उल्टे विचार उसके दिमाग़ में पहले आ रहे थे। कहीं उसे कोई भीख माँगने वाला तो नहीं उठा ले गया? कहते हैं ये लोग बच्चों को अपंग बनाकर भीख मँगवाते हैं। कहीं कोई उसे डाकू तो नहीं ले गया? मेरे मयंक के साथ क्या होगा विधाता ? सारी ज़िंदगी उन्होंने ईश्वर की भक्ति की, कभी दान-पुण्य में कमी नहीं की, हमेशा दीन-दु:खियों की मदद की, उसका यह प्रतिफल? अपने बच्चे की दुर्दशा के बारे में सोचते-सोचते वे ईश्वर के प्रति विद्रोह से भर उठे। उनकी दशा चेतनाशून्य हो गई। यह कैसा ईश्वर है? सुख दिखाकर उसने मुझे दु:ख क्यों दिया? जन्नत दिखाकर मुझे दोज़ख़ में क्यों डाल दिया? मैंने तो कभी किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा। ईश्वर अपने भक्तों को इतना दु:ख क्यों देता है? यह संसार किसी ईश्वर की सृष्टि नहीं हो सकती। जिस संसार में इतनी घृणा, अपहरण, चोरी, बेईमानी है, उसका कैसा ईश्वर? इसका सृजक तो कोई शैतान ही हो सकता है। इंद्रजाल का यह मायावी कोई बहुत शातिर ठग है। चाहे जीसस हो या सुकरात, मीरा हो या नानक, संसार से इन्हें घृणा एवं नफ़रत ही मिली। किसी को सूली पर लटका दिया, किसी को ज़हर दे दिया। सिर्फ भय से लोग ईश्वर को पुकारते हैं। ऐसा विधाता मेरा ईश्वर नहीं हो सकता। उनके स्वच्छ चैतन्य पर विद्रोह एवं घृणा की धूल चढ़ गई। उन्होंने प्रण कर लिया, अब वे ऐसे ईश्वर को कभी नहीं पुकारेंगे। दूसरे दिन से ही उन्होंने पूजा-पाठ छोड़ दिया। उनके भीतर दया का स्रोत सूख गया, अब वे किसी पर रहम नहीं करते थे। चादर, अहंकार एवं प्रतिशोध के बवंडर में गिर गई।

समय का मरहम हर घाव को भरने लगता है। इस बात को अब एक वर्ष होने को आया। आज शाम कोर्ट से आकर शर्माजी अपने बरामदे में बैठे विश्राम कर रहे थे। तब से अब तक वे बहुत गंभीर हो गए थे। मयंक की स्मृतियाँ उनके मन को कुरेदने लगीं। जैसे शांत एवं स्थिर पानी में किसी ने कंकरी डाल दी हो। पुत्र-विरह की वेदना से मन विकल हो उठा। न जाने वह कहाँ एवं किस हाल में होगा? क्या ज़िंदा है या मर गया? यह ख़याल आते ही उनका कलेजा काँप गया। ईश्वर के प्रति उनका मन विद्रोह से भरा था परंतु न जाने कहाँ से पुराने संस्कार आज फिर जागृत हो गए। सूर्य बादलों की ओट से फिर बाहर आया, मन एक विचित्र आत्म-आलोक से भर गया, उनकी पलकें सजल हो गई, वे विह्वल होकर बोल उठे, "हे प्रभु! यह मेरे किन पापों का फल है?" ज्वार की तरह एक पुकार उनके हृदय से उठी। अनायास उनके दोनों हाथ आसमान की तरफ उठ गए। आत्म-विस्मृति, आत्म-जागृति में बदल गई, शीशे से अहंकार एवं विद्वेष की धूल हट गई। भरी आँखों से उन्होंने दुआ माँगी, "हे प्रभु! मुझे मेरे पापों की कठोर से कठोर सज़ा दे पर मेरे पुत्र की दुर्गत मत करना। हे दीनदयाल! उस निष्पाप पर रहम कर।" शुद्ध हृदय से शरणागत हो गए वे। भावावेश में उन्हें कुछ भी ध्यान नहीं रहा। जब कोई पुकारने वाला सच्चे दिल से ख़ुदाई को पुकारता है तो ख़ुदाई उसकी पुकार के साथ ही खड़ी हो जाती है। अपने भक्तों के रंग में एकरस हो जाता है ईश्वर।

उनकी विह्वलता तभी हटी जब सामने घर पर काम करने वाली महरी आकर खड़ी हो गई, "बाबूजी, अन्दर आने दीजिए, आज काम करके जल्दी जाना है, मेरे बेटे की वर्षगाँठ है।" वे तुरंत वहाँ से हटे। महरी के दो पुत्र थे, एक का निधन चार वर्ष पूर्व तपेदिक की बीमारी से हो गया था। यकायक शर्माजी को कुछ याद आया। उस दिन कैसी निरीह-सी हमारे घर पर यह इलाज के हज़ार रुपये माँगने आई थी। मैं और उषा दोनों किसी बारात में जाने की जल्दी में थे। मेरे पास रुपये थे भी, मेरा मन भी हुआ, पर उषा ने महरी को झिड़क दिया, "आज चार रोज़ से आई हो और वो भी रुपये माँगने? कभी बच्चा बीमार है, कभी ये कभी वो।" उषा का चार दिन का दबा ग़ुस्सा निकला। उसके विरोध के आगे मैंने महरी को कुछ भी देना उचित नहीं समझा। मजबूर महरी तकती रह गई। हमारा घर उसकी आशा का अन्तिम छोर था। दरिद्रता संसार का सबसे बड़ा अभिशाप है। दरिद्र सबकी ओर देखता है पर उसकी ओर कोई नहीं देखता। महरी ने

बहुत विनती की पर उस दिन हम दोनों निष्ठुर हो गए। वह चुपचाप चली गई। उसके पन्द्रह रोज़ बाद तक नहीं आई। बाद में पता चला कि उसके पुत्र का निधन हो गया। दरिद्रता एवं निष्ठुरता के राक्षस ने उसके बच्चे को लील लिया।

पुरानी बात स्मरण करते-करते शर्मा जी की अंतश्चेतना ने दस्तक दी, हो न हो यह इसी ग़रीब की हाय है। निर्धन की हाय ईश्वर के दरबार में तुरंत पहुँचती है, तभी तो वह रहीम कहलाता है।

सतीश शर्मा के हृदय में बिजली-सी कड़की। महरी काम करके निकल गई। उस निराश्रित विधवा का कोई सहारा न था। पति दो बच्चों को छोड़कर शादी के पाँच वर्ष बाद ही परलोक सिधार गया। यहाँ वहाँ एक-दो घरों में झाड़ू, बर्तन कर अपना एवं बच्चों का गुज़ारा करती थी। शर्मा दंपति उसके एकमात्र अवलम्ब थे।

शर्माजी ने अन्दर आकर अपनी तिजोरी खोली एवं बैग नोटों से भर लिया। कितने थे उन्हें ख़ुद नहीं मालूम। चेतना के प्रकाश में गणित विस्मृत हो गई। वे तुरन्त महरी के घर को चले। आज उन्हें कोई नहीं रोक सकता था। प्रायश्चित का एक तेज पुंज उनके मन पर सवार था। वे सीधे महरी के घर गए। सभी चौंक उठे। महरी एवं बच्चे ऐसे तकने लगे जैसे उनके घर साक्षात् नारायण आए हों। सच में आज दरिद्र-नारायण हो गए थे वे। प्यार से उन्होंने बच्चे के सिर पर हाथ फेरा एवं थैला उसके हाथ में दे दिया, "अब तुम्हें आगे पढ़ने में कहीं कोई दिक्कत नहीं आएगी। इसमें इतना धन है कि तुम्हें अपना कैरियर बनाने में कोई तकलीफ़ नहीं होगी।" महरी ने सतीश जी के पाँव पकड़ लिए, "बाबूजी, आप भगवान् है, ईश्वर आपकी सब मुरादें पूरी करें। हमारा मयंक भी एक दिन लौट आए।" आज उसके हृदय और परमात्मा के बीच कोई फासला नहीं था। अनन्त के विस्तार ने उसकी दुआ को अपने आग़ोश में ले लिया। नेकी वह फसल है जिसके एक बीज से हज़ारों बालें फूटती हैं, बदी खड़ी फसल भी चौपट कर देती है।

इस बात को भी एक वर्ष बीत गया। परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। यहाँ कुछ भी नहीं ठहरता। समय-चक्र निर्बाध गतिमान है। ऋतुओं ने अपने रंग बदले। इंसान का जीवन भी ऋतुचक्र जैसा ही है। कभी गर्मी की भीषण तपन, कभी सर्दी का कठोर कंपन एवं कभी बंसत की सुरभि। शर्मा जी सुबह-सुबह रोज़ की तरह मोर्निंग वॉक के लिए बाहर आए तो देखकर हैरान रह गए। उनकी ख़ुशी का पारावार नहीं रहा। मयंक घर के बाहर खड़ा था एवं उसके हाथ में एक लिफाफा था। कुछ बड़ा ज़रूर हो गया था पर खून ने खून को पहचानने में कोई ग़लती नहीं की। उसके साथ एक आदमी खड़ा था पर इसके पहले कि वह कुछ कहते वह तुरंत वहाँ से भाग गया। उन्होंने आश्चर्य से उषा को पुकारा, "देखो, मयंक लौट आया है।" जैसे गाय खूँटे से छूटकर आए बछड़े से मिलती है, यही दशा उषा की थी। दोनों के हृदय आनन्द से पुलकित हो रहे थे।

शर्माजी ने पत्र खोला और विस्मय से पढ़ने लगे।

आदरणीय शर्माजी,

आपका पुत्र मयंक आपको लौटा रहा हूँ। आज से दो वर्ष पूर्व अजमेर रेलवे स्टेशन से मैंने ही आपका बच्चा उड़ाया था। इस दरम्यान बच्चे को मैंने कलेजे के टुकड़े की तरह पाला है। आपको एवं मयंक की माँ को हुई पीड़ा के लिये क्षमाप्रार्थी हूँ। विधि-विधान को शायद यही मंज़ूर था।

पुन: अपने अपराध के लिये आपसे क्षमा चाहता हूँ।

आपका

विशंभर

शर्मा जी ने पत्र खोला। पत्र से अनुमान लगाना मुश्किल था कि पत्र किसने लिखा है। दरअसल पत्र लिखने वाला देहरादून का एक टैक्सी चालक 'विशंभर' था। शादी के बीस वर्ष बाद भी उसके बच्चा नहीं हुआ। उसकी पत्नी 'वीणा' को एक पंडित ने कह दिया था कि अगर किसी भले घर के बच्चे को अपने बच्चे की तरह पालोगे तो शायद तुम्हें भी बच्चा नसीब हो। वीणा ने यह बात विशंभर से कही। पत्नी दिन-रात उसको बच्चा लाने के लिए टोका करती थी, तरह-तरह के ताने भी देती रहती थी। पत्नी की बातें सुन-सुनकर उसके कान पक गए। वह तंग आ चुका था। विशंभर, अजमेर, ख़्वाजा की दरगाह पर पुत्र कामना से ही आया था। शाम स्टेशन पर घूम रहा था। एकाएक मयंक पर उसकी नज़र पड़ी एवं न जाने किस कुत्सित वृत्ति ने उसे घेर लिया। हिम्मत कर वह अंदर गया एवं गाड़ी चलने के कुछ समय पूर्व जब शर्माजी, उषा व नंदकिशोर बातों में मशगूल थे, बच्चे को ले उड़ा। सबकी नज़र बचाकर मुस्तैदी से देहरादून ले आया। बाद में अख़बार में छपी ख़बरों से उसे पता भी चल गया कि बच्चा रामगंज अजमेर में रहने वाले शर्माजी का बेटा मयंक है। अपने पड़ोसियों को उसने यही बताया कि वह अपने दूर के रिश्तेदार के बच्चे को गोद ले आया है। बच्चा विशंभर और उसकी पत्नी दोनों के मन को भा गया। दोनों लाड़-प्यार से उसका लालन-पालन करने लगे। थोड़े दिन तो बच्चा रोया पर बच्चे का दिमाग़ तो कच्ची मिट्टी होता है। समय बीतने के साथ वह उन्हीं का होकर रह गया। दोनों को बच्चे से इतना प्यार हो गया कि उन्हें अपने बच्चा न होने का अहसास ही नहीं रहा। वीणा की ममता के तार झंकृत हो गए, उसका वात्सल्य जाग उठा। संयोग से एक सुखद आश्चर्य घटित हुआ। कुछ दिन पूर्व उनके घर एक नई किलकारी गूँजी। अपना पुत्र होने के बाद उन्हें पता चला कि इंसान अपने बच्चे से कितना प्यार करता है, उसके लिए कैसे तड़फता है, विशंभर ने चुपचाप मयंक को शर्माजी को लौटाने की सोच ली।

शर्माजी ने पत्र पढ़ा एवं न जाने क्या सोचकर उसे फाड़ दिया। बसंत की ठण्डी बयार उनके मन को नई उमंग एवं स्फूर्ति से भर रही थी। उनकी सजल आँखें एवं आभार भरे हाथ उस न्यायाधिपति की तरफ उठे थे जो करुणा का सागर है, जो प्रतिपल हर आत्मा को बोध देता है। हज़ार आँखों से सबको देखता है लेकिन वह नहीं दिखता। उस प्राणपति, 'अगोचर' को कौन समझ सकता है?

000

तुम आओगे न

सन्दीप तोमर

वह जानती है वह सब प्रेम तो कतई नहीं था, लेकिन वह प्रेम से इतर उस सब में कुछ और चाह कर भी तलाश नहीं पाती। उसका आलिंगन करना, कीमती उपहार लाकर देना, लुभावन बातें करना और बात-बात में सखी-ओ-सखी कहना, कितना शातिर लगता था उसका हर व्यवहार, एकदम बनावटी व्यक्ति, कितने उपक्रम करता था वह मेरा प्रेम पाने के लिए, कितने पुख्ता तरीके से जताता था- 'सुजाता तुमसे बेइंतहा मोहब्बत है।'

सुजाता ने अपना बासठवाँ साल पूरा किया है। वह, यानी राजशेखर उससे पूरे आठ साल बड़ा था। "अरे, आज चौबीस अक्तूबर है यानी राज का जन्मदिन, सत्तर बरस का हो गया आज। ओह उसे रिटायर हुए भी दस साल हो गए।"- वह मन ही मन बुदबुदाई। उसकी आँखें डबडबा आई, राज का चेहरा आँखों के सामने तैरने लगा।

हनीमून पर उदास ही रही थी सुजाता। ओली गए थे वे। राज को ओली ऑफ़िस की तरफ से जाना था, पहाड़ों पर पली-बढ़ी सुजाता को पहाड़ बिलकुल भी आकर्षित नहीं करते थे। बर्फ गिरते देखना उसके बचपन के खेल सरीखे थे। मैदानी लड़के से शादी- वह भी तो तंग आ गई थी पहाड़ के कठोर जीवन से, बर्फीले इलाके में होकर भी पानी की समस्या, दूर-दूर पानी के सोते, सिर पर मटकी रख पानी लेकर आना, घर तक क्या, गाँव में भी पाइप लाइन नहीं आई थी। सोचा था- शादी के बाद केरल के जंगल घूमूँगी या फिर गोवा बीच, और वहीं होगा हनीमून। ओली का नाम सुनते ही उसके दिमाग़ का पारा चढ़ गया था।

जनवरी का दूसरा सप्ताह, जब ओली में ख़ूब बर्फ गिरती है। राज खुश था, सुजाता का उखड़ा मूड उसे अजीब लगा था लेकिन वह कारण नहीं समझ पाया था।

होटल में ही राज की सहकर्मी स्वाति मिल गई। मल्टीनेशनल कंपनी में जॉब करते हुए राज काफी कुछ आधुनिक था, ऑफ़िस का कल्चर ही था कि लड़का-लड़की का कोई फ़र्क उनके दिमाग़ में नहीं था। स्वाति से हाथ मिलाना सुजाता को नाग़वार गुज़रा लेकिन वह कुछ कहने की स्थिति में नहीं थी।

राज को नए रिक्रूटमेंट के लिए इंटरव्यू लेने थे, बिज़ी शेड्युल के चलते उसने स्वाति को सुजाता के साथ शॉपिंग पर जाने को बोला तो उसकी त्योरियाँ चढ़ गईं-जनाब हनीमून पर आए हैं और अपनी सहेली के साथ शॉपिंग पर जाने को बोल रहे हैं। हालाँकि स्वाति ने तुरंत सहमति जता दी थी। शॉपिंग करते हुए सुजाता ने बार-बार स्वाति को टटोलने की कोशिश की- कहीं दोनों के बीच दोस्ती और नौकरी से ज़्यादा तो कुछ नहीं है, लेकिन उसे निराशा ही हाथ लगी।

छह दिन उसने छह जन्मों की तरह काटे। उखड़े मूड में ही वापिस लौटने की पैकिंग की। वापसी में राज ने सोचा- "सुजाता से उसे अभी बहुत सी बातें करनी है, हनीमून और ऑफ़िस के काम के बीच सामन्जस्य बैठाकर भी वह सुजाता को अधिक समय नहीं दे पाया। हनीमून का

सन्दीप तोमर
डी 2/1, जीवन पार्क, उत्तम नगर, नई दिल्ली- 110059
मोबाइल- 837787 5009
ईमेल- gangdhari.sandy@gmail.com

मतलब ही एक-दूसरे को ज़्यादा से ज़्यादा जानना है।"

टूर की थकान की बात कह उसने ऑफ़िस से दो दिन का ऑफ ले लिया। ओली से कोटद्वार प्राइवेट टैक्सी लेकर आया। वहाँ से लेंसडाउन के लिए दूसरी टैक्सी हायर की। रास्ते में तिराहे पर रुक थोड़ा आराम करने की गरज से टैक्सी रुकवाई। टैक्सी ड्राईवर ने अपने अनुभव से पहचान लिया कि यह नव-विवाहित जोड़ा है। गाड़ी रोक उसने सीधा किचन का रुख़ किया। राज और सुजाता बड़े छाते की एक टेबल पर आमने-सामने कुर्सी पर बैठ गए।

बैरा चाय टेबल पर रख गया। राज ने कुछ स्नेक्स लाने का बोल बैरे को भेज दिया था।

राज ने कमीज़ की जेब से मार्लबोरो सिगरेट का पैकेट निकाला। एक सिगरेट निकाल होठों में दबाई। लाइटर निकाला ज़रूर था लेकिन बिना सुलगाए सिगरेट एक हाथ में पकड़ दूसरे हाथ की अँगुलियाँ उस पर फिराता रहा। ऐसा वह तब करता है जब तनाव उस पर ज़्यादा हावी हो जाता है। वेटर चाय रख गया था, उसने सिगरेट को वापिस पैकेट में रख चाय का कप बाँए हाथ में पकड़ा।

"क्या-क्या बातें हुई स्वाति से?"-सिप लेते हुए राज ने पूछा।

"क्या बातें करती, हम क्या एक-दूसरे को जानते हैं?"- उसने माथे पर गिर गई लट को सँभालते हुए जवाब दिया।

"तुम्हारी ड्रेस सेन्स को लेकर, तुम्हारी क्रिस्टियन घड़ी, तुम्हारी इम्पोर्टेड ज्वेलरी को लेकर तो कुछ बातें हुई ही होंगी, ऑफ्टर आल शी इज़ माय कुलीग।"

"कुछ ख़ास नहीं, बस वही सब कॉमन बातें जो एक न्यूली मैरिड से कोई भी जान-पहचान वाला या वाली करता है।"-सुजाता बात को टालना चाहती थी।

"तुम इतना नपा-तुला जवाब क्यों देती हो हर बात का? पता है घर में इकलौता होने और बचपन में ही पिताजी के चल बसने के चलते मैं घर में बात करने को तरसता था, तुम भी यूँ चुप्पी साधोगी या इतना कम बोलोगी तो कैसे चलेगा?"

"सिर्फ चलाना है?"-सुजाता तुनक गई।

"मेरा मतलब वह नहीं था, देखो हम नई गृहस्थी शुरू कर रहे हैं, बस मुझे तुम्हारा साथ चाहिए और कुछ भी नहीं। मैं घंटों तुम्हारे साथ बतियाना चाहता हूँ। हम साथ बैठकर बिना किसी टॉपिक के बेवजह भी बातें कर सकते हैं। हमें एक-दूसरे से ज़रा भी कोफ़्त नहीं होनी चाहिए।"

चाय ख़त्म करते हुए कप को सामने की मेज़ पर रखते हुए सुजाता उसी मिजाज़ में बोली-"तभी काम के साथ हनीमून ट्रिप बनाया, वह भी इन पहाड़ियों में?"

"पहाड़ियों में तुम्हारा बचपन बीता, तुम्हें तो खुश होना चाहिए, प्राकृतिक छटाओं को देखकर।"

"बचपन से इन्हीं छटाओं को ही तो देख रही हूँ, क्या मेरे जीवन में कुछ भी नया नहीं होना? और अब यह लेंसडाउन?"

"ओह, तो उखड़े मिजाज़ की यह कहानी है, पहले बोल देते तो कुछ और कार्यक्रम बना लेते, अच्छा सुनो, पता है कल मेरा जन्मदिन है, 24 अक्टूबर, यहाँ लेंसडाउन की फिज़ाओं में जन्मदिन मनाएँगे, ख़ूब मस्ती करेंगे।"

चालीस साल पुरानी यादों से बाहर आ सुजाता के चेहरे पर एक हल्की ग़म की मुस्कान उभर आई। मानों वह ख़ुद से बतियाने लगी थी- "बहुत प्यार जताता था वह मुझ पर। दिखाता कि बहुत ख़याल रखता है मेरा। बहुत घुमाया उसने, लगभग हर ऑफ़िशियल टूर पर साथ ले जाता, एक ऐसा प्यार हम दोनों के बीच था जो मानसिक दूरी बनाता गया, मगर वह सब प्यार ही नहीं था, शादी के बाद कभी बैठकर तसल्ली से बातें नहीं की।"

वह कच्चा-पक्का सा कॉटेज था, तकरीबन पन्द्रह सालों से सुजाता इसी कॉटेज में रहती है- टिहरी डैम, झील और हाल ही में बने लंबे पुल का आनन्द उठाने आए सैलानियों को कॉटेज का एक हिस्सा बतौर पेइंग गेस्ट देकर वह अपनी गुज़र-बसर कर रही है। अँधेरा हो चला था, सुजाता ने खाना बनाने की सोच अन्दर का रुख़ किया, तभी कॉटेज के गेट पर आहट हुई। "इस वक्त कौन हो सकता है?"- सुजाता मन ही मन सोचती है। उसने कभी किसी रिश्ते-नाते वाले को यहाँ का पता नहीं दिया। माँ कब की चल बसी है, परिवार में चचेरे भाइयों ने उसका गाँव में रहना स्वीकार नहीं किया। डूब-क्षेत्र से उसके पिता की जो ज़मीन बची- उसमें उसने कॉटेज बनवाया और गुज़र करने लगी। आहट सुन वह बाहर आई। उसी का हमउम्र कोई सैलानी है। रहने की शर्तें तय होने के बाद वह सैलानी को अन्दर ले आई। हल्के अँधेरे के चलते उसने सैलानी का चेहरा ठीक से नहीं देखा। चाय का पानी चढ़ा वह साथ-साथ खाना बनाने की तैयारी में भी जुट गई।

चाय तैयार हुई तो कप ट्रे में रख वह आगंतुक के कमरे की ओर बढ़ी, बाहर से आवाज़ दी- "साहब, जब तक खाना तैयार होता है आप चाय पी लीजिए।"

जलते इलेक्ट्रिक लैंप से कमरा जगमगाया है, आगंतुक आराम-कुर्सी पर बैठा सुस्ता रहा है। चेहरे से वह भी पहाड़ी लगता था, हालाँकि शहरीकरण के चलते अब किसी को वेशभूषा से तो नहीं पहचाना जा सकता लेकिन चेहरे से काफी कुछ अंदाज़ा हो ही जाता है। उसने तिपाई मेज़ पर चाय का कप रखा, अचानक आगन्तुक बोल उठा-"सु...जा...ता..?"

"आ..प....?"- अजनबी तुम मुझे जाने-पहचाने से लगते हैं.. उसके मस्तिष्क में अचानक ये पक्तियाँ गूँज उठी।

"सुजाता, तुमने मुझे नहीं पहचाना, मैं... दिवाकर भंडारी.. याद है हम बारहवीं कक्षा में साथ पढ़ते थे। तुम दुबली-पतली सी.. बीच में माँग निकाल बालों को एकदम माथे पर दोनों तरफ करके कसकर चोटी बाँधती थीं.. लेकिन भाला फेंकने में तुमसे किसी का मुकाबला न था। तुम वही सुजाता हो न..?"

"ओह, हाँ दिवाकर... तुम तो बारहवीं करते ही दुबई चले गए थे?"

"बारहवीं भी कहाँ की थी, फेल हो गया था मैं।" -कहकर दिवाकर ने एक ठहाका लगाया।

" लेकिन दिवाकर तुमने मुझे ख़ूब पहचाना।"- सुजाता ने उत्सुकता से कहा।

"हाँ, सुजाता! कुछ ख़ास लोग होते हैं जो भुलाये नहीं भूलते।" -दिवाकर ने सामने लगे

आदमकद शीशे में अपने बालों की सफेदी को देखते हुए हौले से कहा और एक लंबी साँस छोड़ी, जिसकी आवाज़ सुनसान जगह बने कॉटेज के उस कमरे में गूँज गई, जहाँ वह आरामकुर्सी पर बैठा था और सुजाता पास की तिपाई के करीब खड़ी थी। दिवाकर ने उसे बैठने का इशारा किया- मानों वह बहुत से रहस्य जानने को उत्सुक है।

"दिवाकर तुम हाथ-मुँह धोकर तैयार हो जाओ मैं खाना बनाती हूँ।" -कहकर सुजाता चलने को हुई।

"जानती हो सुजाता, दुबई में बरसों कुक का काम किया, खाना बनाना मैं अच्छे से जानता हूँ। किचन का रास्ता दिखाओ, खाना मैं बनाता हूँ।"

"नहीं, आज तुम मेरे मेहमान हो, आज भर मुझे ही बनाने दो, फिर जितने दिन इधर रहना है रोज़ मेरा, अपना और सैलानियों का तुम ही बनाना। मैं भी पंद्रह बरस खाना बनाते हुए थक गई हूँ।"

सुजाता खाना बनाने चली गई, दिवाकर तैयार होकर छोटे से डायनिंग हॉल में आया तो वह खाना टेबल पर लगा चुकी थी।

साज-सजावट देख दिवाकर ने कहा- "बहुत अच्छे से सजाया है तुमने पूरा कॉटेज।"

"यह न हो तो सैलानी यहाँ रहना पसन्द नहीं करेंगे।"-खाने की दो थाली लगाते हुए उसने कहा।

"अच्छा, आज कोई सैलानी नहीं है?"

"दशहरा और दीवाली के बीच के समय सैलानी कम हो जाते हैं, उसके बाद झील का आनन्द लेने वालों की भीड़ बढ़ती है तो कॉटेज में भी ठहरने वाले आते हैं।"

खाना खाते हुए दोनों कभी हालात पर तो कभी पुराने दिनों की बातें कर रहे हैं। खाने का आख़िरी कोर खाते हुए दिवाकर ने पूछा- "बुरा न मानों तो एक बात पूछूँ?"

"दिवाकर एक तुम ही तो थे जो स्कूल में मेरे सबसे करीबी दोस्त थे, जिससे बिना कुछ कहे भी आँखों में सब कुछ कह जाती थी, शायद तुम यही पूछना चाहते हो कि मैं यहाँ इस हाल में कैसे?" -सुजाता ने धारा-प्रवाह में वह सब भी कह दिया जो वह बरसों पहले न कह पायी। दिवाकर उसकी आँखों की नमी में दूर तैरते सपनों को तलाशने की कोशिश करने लगा।

सुजाता का मन कहता था कि राज ज़रूर आएगा। उसकी आँखें झील देखने आए सैलानियों में उसे तलाशती थी। लेकिन यह क्या संयोग था कि राज की बजाय आज इतने अरसे बाद दिवाकर उसके पास था, वही दिवाकर जिसके लिए उसने कितने ही सपने सजाए थे, जिसे वह अपने जीवनसाथी के रूप में अपने यौवन के दिनों में ही देखने लगी थी और दिवाकर एक दिन चुपचाप दुबई चला गया था।

दिवाकर हौले से बुदबुदाया- "कहाँ यादों के भंवर में खो गई?" संशय और आश्चर्य का मिश्रित भाव उसके चेहरे पर उभर आया।

सुजाता ने गहरी नि:श्वास छोड़ते हुए कहा- "कहाँ खोना दिवाकर, अब तो यह कॉटेज ही मेरी दुनिया है और इंतज़ार ही मेरी मंज़िल।"

"इंतज़ार ! किसका इंतज़ार?" -वह और अधिक विस्मित हो गया।

अक्टूबर की मध्यम रात्रि में सर्द मौसम में भी उसे इतनी तपिश महसूस हुई कि वह असहज हो गई। एक फीकी हँसी हँसते हुए उसने कहा- "मेरी कहानी जानना चाहते हो, सुनो! यह एक लंबी कहानी है।"

दिवाकर सामने टँगी हुई सुजाता की मुस्कराती तस्वीर देखता है जिसमें एक अजीब सा तेज लिए पुरुष का चेहरा भी है, उसे लगा कि हो न हो यही वही व्यक्ति है जिसके साथ सुजाता ने शादी की हो, उसे वह तस्वीर और वे दोनों बहुत ही मोहक लगे, मानों वे एक-दूसरे के पूरक हों।

गुज़री ज़िंदगी के पन्ने दिवाकर की स्मृतियों में आकर फड़फड़ाने लगे। सुजाता उसके बचपन के उन दिनों की दोस्त थी जब वह हँसने और लतीफ़े सुनाने को ही ज़िंदगी समझता था। दोनों एक-दूसरे के संग गाँव से स्कूल तक का सफ़र रोज़ तय किया करते थे, यह साथ इतना खुशनुमा था कि कभी दोनों को अहसास ही नहीं हुआ कि कैसे बिछुड़कर अकेला रहा जा सकता है? अपने पढ़ाई के दिनों को आनंद से गुज़ारते रहे। बारहवीं की परीक्षा से चन्द दिनों पहले ही उसके पिताजी का देहांत हुआ तो परीक्षा ख़त्म होते ही परिवार के खर्च के बोझ के चलते वह दुबई चला गया, दुबई से वह पैसे ज़रूर भेजता रहा लेकिन वक़्त और अधिक कमाने की चाहत ने उसे वापिस न आने दिया।

सुजाता ने देखा- उसकी कहानी जानने की इच्छा जताने वाला दिवाकर ख़ुद एक अबूझ कहानी है, जो कहीं खो गया है, उसने कहा- "जनाब, अगर विचारों से बाहर आओ तो मैं सुनाऊँ अपनी दास्ताँ?"

दिवाकर को अपनी ग़लती का अहसास हुआ, वह सुजाता को कुछ अन्यमनस्क होकर देखने लगा।

सुजाता ने कहना शुरू किया- "मेरी कहानी तुम से शुरू होती है दिवाकर और अब ज़िंदगी के इस पड़ाव पर तुम्हारा मिलना यह कहता है कि इसे ख़त्म भी तुम पर ही हो जाना है, जब तुम अचानक मेरी दुनिया से ग़ायब हो गए तो मुझे लगा- चाहतों को जाहिर होने के पलों से पहले ही मेरी दुनिया वीरान हो गई। मेरी दुनिया बसने से पहले ही उजड़ गई। ज़िंदगी को सपनों की दुनिया से बाहर निकालकर वास्तविकता के समतल पर बसर करना था।

इधर पिताजी के शिकार खेलने के शौक के चलते बंदूक के झाड़ियों में फँसने से उनके गले में गोली धँसी तो उन्हें बचाने में घर की सब संपत्ति स्वाह हो गई। पिताजी अब एक तरह से अपाहिज हो चुके थे। माँ ने मेरी जन्मपत्री को शादी के लिए भेजना शुरू कर दिया, मैं तो यह कहने तक की स्थिति में भी नहीं थी कि मुझे दिवाकर का इंतज़ार करना है, प्रेम के अहसास को मैंने मन में सहेज लिया। समय अपनी मंथर गति से निरंतर चलता रहा। जहाँ भी मेरी कुंडली भेजी जाती वहीं से वापिस लौटा दी जाती। दोष था मेरी कुंडली में, फिर मेरा साँवला रंग भी कुंडली के साथ-साथ पहुँच जाता जो शादी ठीक न हो पाने की वजह बनता। एक वजह घर में भाई का न होना भी था, जहाँ भी रिश्ते की बात होती, वहाँ यह बात भी पहुँच जाती- किसी ने कहा- वहाँ रिश्तेदारी

कैसे बनेगी, भाई तो है नहीं लड़की का, किसी ने कहा कि उनके पास तो लड़की के अलावा कुछ है नहीं देने को। एक जगह बात पक्की हुई भी लेकिन हमारी तरफ से ही मना कर दिया गया, सिर्फ कुंडली ही भेजी थी, लड़का देखने आया, हमने मना कर दिया तो उन्होंने मेरे ऊपर देवता लगा दिया।"

"अरे, इस ज़माने में ये क्या देवता लगाने की बात कर रही हो?"

"मैं सच कह रही हूँ फिर यह आज के ज़माने कि नहीं तब की बात है, और यह सब मैं न भी मानती अगर मेरे साथ न हुआ होता।"

"मैं नहीं मानता यह सब।"

"तुम ख़ुद गढ़वाली होकर कह रहे हो कि मैं नहीं मानता, फिर किसी के मानने न मानने से सच तो नहीं बदल जाता। अच्छा सुनो, फिर मेरा रिश्ता कौसल हुआ, तब तक हमें भी नहीं पता था कि पहले रिश्ते वालों ने हम पर देवता लगा दिया है, मैं काफी बीमार हुई, देवता का पता चला तो वह रिश्ता भी टूट गया, कौसल वालों ने भी मना कर दिया।"

"कौसल और जौनपुर गाँव के लोगों में इस तरह के अंधविश्वास अधिक हैं।"

"लेकिन वह लड़का तो कुमरादा का था जिन्होंने देवता लगाया, सालों ने मेरी ज़िंदगी को कैसा मोड़ दिया, कैसा रंग दिया?"

"तुम किसी को गाली कैसे दे सकती हो?"

"मतलब जिन्होंने यह सब किया, उन्हें गाली भी न दूँ?"

"हाँ, शायद ज़िंदगी सिखाने के लिए ही बनती है।"

"टीखोन भी जुड़ गई थी कुंडली, पिताजी देखने गए, वहाँ भी किसी ने देवता लगने की बात पहुँचा दी।"

"क्यों याद कर रही हो यह सब?"

"भूलने की भी तो कोई वजह नहीं है, आज सब कुछ फिर याद हो आया। कहाँ-कहाँ से वापिस नहीं आई मेरी जन्मपत्री।"

"लेकिन मैंने तो सुना था कि दिल्ली में किसी लड़के से तुम्हारी शादी हुई और लड़का भी बहुत आदर्शवादी था, जिसने दहेज और बारात दोनों के लिए ख़ुद से मना किया था?"- दिवाकर मानों किसी अवसाद से बाहर आना चाहता हो।

"हाँ, यह सही बात है कि राज बहुत ही आदर्शवादी थे, मुझे भी सुनकर अच्छा लगा था- पिताजी को तो सब समस्याओं से मुक्ति ही मिल गई थी यह सब सुनकर कि लड़का बहुत ही सामान्य तरीके से शादी करना चाहता है। सभी तो खुश थे, बस एक मैं ही थी जिसके मन की थाह लेने की किसी ने नहीं सोची।"

"तुम्हें इस सब से दिक्कत थी?"- दिवाकर ने जानना चाहा।

"मुझे पछतावा सिर्फ इस चीज़ का है कि हम बड़े तो हो जाते हैं पर उस समय कितना बचपना रहता है, अपने ख़ुद के फैसले नहीं ले पाते हम, जबकि हमें पूरा हक होता है अपने जीवन के फैसले लेने का। जब हम बड़े होते हैं तब तक ये सब बातें बहुत पीछे चली जाती हैं।"

"हाँ, पर कभी-कभी उल्टा भी होता है।"

"दिवाकर, मैं सिर्फ अपनी ही बात नहीं कर रही हूँ, उस समय की सभी लड़कियों की बात कर रही हूँ। हम शादी जैसे बड़े फैसलों को घर वालों पर छोड़ देते हैं, अपने आप कुछ नहीं बोलते हैं जबकि आज के समय को देखो लड़कियाँ कितना आगे तक निकल गई हैं।"

"बात तो ठीक है लेकिन इन सब बातों से तुम्हारी शादी का क्या ताल्लुक है, यह बात मेरी समझ से बाहर है।"

"वहाँ देखने में यूँ तो सब कुछ व्यवस्थित और सामान्य था, पर कहीं न कहीं जीवन से वह उमंग अनुपस्थित थी जो एक नए परिवार के वर्तमान को मादक और भविष्य को आशावान बनाए रखती है। कोई अदृश्य सा कुहासा था जो छँट नहीं रहा था। राज की आदर्शवादी बातें और उसका अपने साथ जॉब करने वाली लड़कियों के साथ इतना दोस्ताना व्यवहार मुझे क्या किसी भी नवविवाहिता को गवारा नहीं होता। ख़ैर छोड़ो ये सब, रात बहुत गहरा गई है, तुम अब आराम करो, मैं भी जाकर सोती हूँ, बाकी बातें सुबह नाश्ते की टेबल पर होंगी।" कहकर सुजाता उठकर अपने कमरे को ओर मुड़ गई।

नींद आज उसकी आँखों से कोसों दूर थी। सुजाता सोच रही है- जब कभी वह मायके जाती, उसके स्वभाव में एक अलग उल्लास और रौनक आ जाती। जबकि राज के साथ रहते हुए वह घुटन महसूस करती, उन दिनों कभी जब वह मायके होती राज न ही कोई संपर्क करता, न ही उसे लेने ही आता। शादी के बाद से कभी राज ससुराल गया हो ऐसा कोई दिन उसे याद नहीं आया। इस बात पर सोचकर उसे बड़ा आश्चर्य होता। एक अलग तरह की खीज लिए उसका चेहरा ख़ुद के लिए भी नितान्त अजनबी सा होता। जब भी उसने इस बारे में बात करने की कोशिश की तो राज से सहयोग नहीं मिला। उसका उदासीन व्यवहार देखकर वह भी धीरे-धीरे अभ्यस्त सी होती गई। उसे यह एहसास हो चला था कि रिश्तों की डोरी अब इतनी उलझ चुकी है कि सुलझाने के फेर में और उलझती जाएगी। कहते हैं- बहुत सी गाँठें सिर्फ़ समय ही सुलझाता है, लेकिन वह जानती है कि वह समय अब शायद ही उसकी ज़िंदगी में आए।

सुजाता के जीवनसाथी के रूप में राज सरल स्नेहिल स्वभाव के बावजूद कोई छाप न छोड़ सका। उनकी परस्पर बातचीत हमेशा ही झगड़े में बदल जाती, और सुख-दु:ख में भी दोनों के व्यवहार में तनाव झलकने लगा। राज का दर्शन इतना समृद्ध था कि हर व्यक्ति उसका कायल हो जाता, किसी भी व्यक्ति को वह आसानी से नसीहतें दे दिया करता। किसी भी कठिन से कठिन परिस्थिति में अथवा किसी समस्या का समाधान उपलब्ध न होने पर, सामने वाले को दिलासा देने के लिए उसके पास बहुत कुछ होता। उसने न जाने कितनी ही बार सुजाता को भी समझाना चाहा लेकिन हर बार वह समझने को तैयार ही नहीं होती।

वे जब कभी घूमने भी जाते तो पुरानी बातों को याद करके उलझ जाते, आज इतने वर्षों बाद पुरानी बातों को नई टीस के साथ याद करके वह पुन: व्यथित हो गई। आँखों में ही रात कटी, वहीं दिवाकर ख़ुद को तरोताज़ा महसूस कर रहा है। सुजाता ने चूल्हे पर चाय चढ़ा दी, दिवाकर भी सीधे रसोई में ही चला आया। भाव यह था कि सदियों से सुनसान

रास्ते पर चलता रहा दिवाकर सुजाता के मन के अँधेरे को प्रकाश देने का सोच से प्रफुल्लित है। उसे सोते समय लगा कि इस अँधेरे को दोनों उजाले से ख़त्म कर सकते हैं। पर उसे इस बात का भी इल्म है कि जिस हँसती-खिलखिलाती लड़की के कलेजे में सदियों पुराना दर्द समाया हुआ है, उसे इतनी आसानी से दूर भी नहीं किया जा सकता।

"सुजाता, अब तो पूरी ज़िंदगी तकलीफ़ दूँगा तुमको।" अचानक दिवाकर ने कहा। सुनकर सुजाता अचकचा गई।

"मैं तुम्हारा आशय नहीं समझी?" सुजाता की आवाज़ कुछ धीमी थी, मानों वह कहीं खोई हुई है और अचानक दिवाकर ने कुछ कहकर उसे अवचेन से अपनी दुनिया में खींचना चाहा हो।

"तुमको तकलीफ़ नहीं दूँगा... बस इन वादियों में अब फिर से जीने की तमन्ना है, दुबई की ज़िंदगी से थक जो गया हूँ।" वह उत्साह में है।

सुजाता ने कोई जवाब नहीं दिया। बस वह मौन हो गई।

"ज़रा भी तकलीफ़ नहीं सुजाता, जो भी तुम बनाओगी, बस खा लूँगा, अब इच्छाएँ भी तो हमारी तरह ही बूढ़ी हो चली हैं।"

सुजाता कुछ असहज अवश्य हुई, पर कुछ ख़ास नाराज़ नहीं लग रही है इस बचपन के साथी से। चाय छान, दो कप में डाल वह रसोई से बाहर आ गई। दिवकर भी पीछे-पीछे चला आया। दोनों के हाथों में चाय के कप हैं।

कुछ देर दोनों के बीच मौन रहा, दिवाकर ने ही चुप्पी को तोड़ा- "अच्छा सुजाता, रात की अधूरी कहानी पूरी करो, जानना चाहता हूँ कि क्या कुछ गुज़रा तुम्हारी तन्हा ज़िंदगी में?"

"दिवाकर, आज मैं जहाँ खड़ी हूँ वहाँ से मेरे मन में जो ख़याल आते हैं उनसे मुझे लगता है कि मैंने जीवन भर बस खोया ही खोया है पाया कुछ भी नहीं, आज मुझे एक अपराध-बोध होता है, बहुत ग्लानि होती है, आज मैं ख़ुद से कनफेस करना चाहती हूँ, अपने सब गुनाहों को क़ुबूल कर लेना चाहती हूँ, लेकिन अफसोस! यह सब सुनने के लिए राज यहाँ नहीं है, काश एक बार राज से मुलाक़ात हो तो मैं अपने सब गुनाह क़ुबूल कर उससे माफी माँग लूँ।"

दिवाकर सुनकर आश्चर्यचकित हुआ, उसने कल्पना भी नहीं की होगी कि जीवन की कहानी सुनाते-सुनाते वह गुनाह, माफी जैसी बातें करने लगेगी, उसे लगा कि सुजाता की मानसिक स्थिति सही नहीं है।

उसने सुजाता से कहा- "सुजी, अगर तुम्हें लगता है कि वाक़ई तुम्हें ग्लानि है और तुम राज से माफी माँगना चाहती हो तो या तो तुम्हें राज के पास लौट जाना चाहिए या फिर चिट्ठी लिख उसे यहाँ बुला लेना चाहिए। लेकिन मेरे सवाल का जवाब तुमने अभी भी नहीं दिया।"

"दिवाकर! मैंने अपने जीवन में जो भूलें की हैं, तुम्हें सब बताती हूँ। आज याद आता है कि कितनी स्वार्थी हो चली थी मैं। उसके हर काम, हर व्यवहार को मैंने शक की निगाह से देखा।" सुजाता ने स्वर में अप्रसन्नता घोलने का भरसक प्रयास किया।

सुजाता ने दिवाकर को बताया- "दिवाकर तुम्हें याद होगा, हमारे साथ मेरे ही पड़ोस का लड़का राजेंद्र पढ़ता था, तुम्हारे जाने के बाद जब मैं बहुत टूट गई, तब राजेंद्र ने मुझे सहारा दिया, शाम को छत पर आ जाता और मैं घंटों उसके कंधे पर सिर रखकर बैठ जाती, हम दोनों एक-दूसरे से प्रेम करने लगे, शादी के कुछ ही दिन हुए थे कि राजेंद्र ने मिलने की ज़िद्द की, मैं वहाँ के रास्तों और जगहों के बारे में ज़्यादा नहीं जानती थी। राज घर पर नहीं थे तो मैंने उसे घर पर ही बुला लिया, राज ऐन वक़्त पर टूर से आ गए थे, राज को देख मैं और राजेंद्र दोनों घबरा गए, राज बिना कुछ कहे टॉयलेट रूम चले गए, राजेंद्र चुपचाप वहाँ से चला गया लेकिन न जाने राज ने इस बात को कैसे लिया, मैं कई दिनों तक इस बात से असहज रही, मैंने ग़लती यह की कि राज से अपने उसका परिचय नहीं कराया। राज के अधिकांश टूर पर रहने के चलते मैं सोशल मीडिया पर सक्रिय रहने लगी थी। तभी एक फौजी से मेरा संपर्क हुआ, इत्तेफाकन उसकी पत्नी की मौत हो चुकी थी, बातचीत के बाद पता चला कि वह हमारी ही कॉलोनी में रहता है, पता ही नहीं चला कि कब बातचीत प्रेम में बदल गई, हाँ, दिवाकर! उस फौजी से हुआ स्नेह प्रेम में परिणत हो चुका था, उसने कई बार राज को छोड़ उसके पास चले आने का आग्रह किया। मैं कई बार उसके फ्लैट पर भी गई। लेकिन जल्दी ही अपनी ग़लती का अहसास हुआ, लेकिन शायद तब तक देर हो चुकी थी, किसी दिन फौजी के फ्लैट से निकलते हुए राज मुझे से टकरा गया था। राज ने कभी कुछ नहीं कहा लेकिन अब हमारे बीच अबोला बढ़ गया।"

अपने और राज के बीच घटे लगभग हर प्रसंग को सुनाकर सुजाता ने कहा– "राज की सरलता या अपनापन, पता नहीं क्यों मुझे अरुचिकर लगता, वह क्या था जिससे वह मुझे पराया सा लगने लगा। जब तक मैं उस घर में रही, एक अव्यक्त झुँझलाहट हम महसूस करते रहे। यह झुँझलाहट गर्मी की रातों में अलाव तापने जैसी लगती। राज को छोड़ आने के बाद फिर सम्पर्क नहीं किया। मैंने अपनी ओर से कभी कोई पहल भी नहीं की राज से संपर्क करने की लेकिन उसने भी तो कभी मेरी सुध नहीं ली।" सुजाता अनायास ही स्मृतियों के जाले साफ करने की चेष्टा करने लगी।

"अब पुरानी बातों को याद करने से कोई लाभ नहीं है, सुजाता।" -दिवाकर ने आगे कहा- "समय से काफी पहले ही तुम उसका साथ छोड़ चुकी हो, ऐसे देवतुल्य जीवनसाथी का मिलना एक संयोग से कम नहीं होता, एक बात सुखद है- आज तुमने ख़ुद से अपनी ग़लतियों को न सिर्फ माना बल्कि तुम्हें आत्मग्लानि भी हुई, मैं दुआ करूँगा कि राज एक दिन तुम्हें खोजते हुए यहाँ तक ज़रूर पहुँचे।"

दिन बोझिल हो रहा था और वे दोनों आशा भरी नज़रों से एक-दूसरे को देख रहे थे। दोनों ही चुप हो गए थे, परंतु नज़रों में एक अव्यक्त तलाश हर क्षण दोबाला होती जा रही थी। दिवाकर अपने चेहरे पर फीकी हँसी लाने का प्रयास कर रहा है। सुजाता का चेहरा नम हो गया है, वह दिवाकर से परे शून्य में देख रही है।

000

मजबूर

डॉ. चुम्मन प्रसाद श्रीवास्तव

डॉ. चुम्मन प्रसाद श्रीवास्तव
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, भवंस मेहता महाविद्यालय, भरवारी, कौशाम्बी, यूपी - 212201
मोबाइल- 7972465770, 7767031429
ईमेल– chummanp2@gmail.com

"रश्मि ! लो आ गया हेड-क्वार्टर्स से अल्टीमेटम। 21 मार्च को शिप रवाना होगा। अफ्रीका, दक्षिण अमेरिका, उत्तरी अमेरिका, कनाडा होते हुए ब्रिटेन, फ्रांस आदि यूरोपीय देशों का चक्कर लगा कर 26 सितम्बर को मुंबई आएगा।" रविकांत ने मोबाइल के व्हाट्सएप पर आए मैसेज को पढ़कर कहा।

"चलो इस बार थोड़ा कम दिन का ट्रिप है। पिछली बार तो सात महीने का था।" रश्मि ने लंबी साँस छोड़ते हुए कहा।

"ऐसा करते है इस बार होली घर पर मनाते हैं। वहाँ से आकर अमित का एल.के.जी. में एडमिशन करा देंगे। तुम्हारा भी तो इंटरव्यू अच्छा हुआ है। यही है कि थोड़ा दूर है कॉलेज। पहले हो तो जाए। तुम्हारे भारी- भरकम पढ़ाई का कुछ उपयोग तो हो।" रविकांत के स्वर में आशा का भाव था।

यूँ तो रवि को जब अकेले आना होता था तो बक्सर स्टेशन उतरने के बाद बस से ही 30 किलोमीटर अपने गाँव के बाज़ार तक आता, जहाँ उसके पिता खड़े मिलते थे। इस बार सपरिवार आ रहा था। उसने फ़ोन कर बता दिया था कि वह बक्सर से ही जीप या बुलेरो लेकर घर आ जाएगा। बुलेरो दरवाज़े पर पहुँची। राघव लाल जी दरवाज़े पर कुर्सी लगाए बैठे दिखाई दिए मानों राह देख रहे हों। रवि, रश्मि और अमित ने पिता जी के पाँव छुए। घर में प्रवेश करने के बाद दोनों चाचियों के चरण-स्पर्श किए। आधे घण्टे बाद मँझले चाचा रत्नेश लाल भी आ गए

थे। रश्मि दोनों चाचियों से बातों में मशग़ूल हो गई और अमित रवि के छोटे चाचा रूपेश लाल के इकलौते बेटे प्रदीप के साथ खेलने में मग्न हो गया।

फागुन का महीना। गर्मी पड़नी शुरू हो गई थी, लेकिन रात को पतला कम्बल या मोटा सूती चादर ओढ़ना ही पड़ता था। रात को अमित दूध पीकर सो गया था।

"रश्मि ! तुमने जिस कॉलेज में अप्लाई किया था वहाँ के प्रिंसिपल का फ़ोन आया था। तुम्हें टी.जी.टी. (सोशल साइंस) के पद पर रख लिया गया है। छठीं से लेकर दसवीं तक के बच्चों को पढ़ाना है। महीने के पच्चीस हज़ार मिलेंगे।" बगल में लेटी रश्मि को अपने बाँहों में भरते हुए रवि ने कहा।

"यह सब तुम्हारी ही दौड़-धूप का असर है, माई डियर।" रवि की बाँहों में समाती हुई रश्मि बोली।

दस बजे के करीब रवि अपने अज़ीज़ मित्र अरुण प्रकाश से मिलने के लिए पड़ोस के गाँव जाने के लिए जूते पहन रहा था। गाँव में नाश्ता न होकर सीधे भरपेट भोजन ही दस - ग्यारह बजे के आस-पास होता है। राघव लाल जी द्वार पर ही खाना खा रहे थे। खाने में भात, अरहर की दाल और करैला की कलौंजी थी। उन्होंने प्रदीप को आवाज लगाया "बेटा ! एक और कलौंजी हो तो लाना साथ में थोड़ा भात और दाल भी लेते आना।"

प्रदीप उठकर भीतर गया। पाँच मिनट तक वह नहीं आया तो राघव लाल जी थाली में ही हाथ धो पड़ोस के बैठका में गप-शप करने चले गए। रवि ने यह सब देखा लेकिन कुछ बोल नहीं सका।

रात को सोते समय रवि ने रश्मि से कहा "ऐसा करते हैं पिताजी को भी अपने साथ ले चलते हैं। वहाँ तो मैं चला जाऊँगा शिप पर, तुम चली जाओगी अपने कॉलेज। आख़िर अमित को कॉन्वेंट से ले आने और तुम्हारे आने तक ध्यान रखने वाला भी तो चाहिए। वैसे भी मुंबई में जहाँ हम लोग हैं कामवाली बाई या आया कहाँ मिलती है ?"

"वाकई तुम दूर की सोचते हो, रवि।" मुस्कराते हुए रश्मि ने अपना दाहिना हाथ रवि के कमर पर रख दिया।

होली के सातवें दिन रवि का मुंबई वापसी का रिजर्वेशन था। उसने एजेंट के माध्यम से पिता जी के लिए भी एक कंफर्म स्लीपर टिकट की व्यवस्था की। मुम्बई से आते वक्त भी बड़ी मुश्किल से स्लीपर टिकट का ही जुगाड़ हो पाया था। वापसी का भी रिजर्वेशन उसने मुंबई में ही करा लिया था।

अगले दिन सुबह दस बजे की ट्रेन थी। रात में लगभग दस बजे रवि सोने के लिए अपने कमरे में जा रहा था कि मँझली चाची के कमरे से छोटी चाची की आवाज़ सुनाई दी "अच्छा है, बुढ़वा जा रहा है मुंबई। बोझ टला।" रवि कसमसा कर रह गया।

मुंबई चलने की बात पर राघव लाल जी ने कोई हर्ष-विषाद प्रकट नहीं किया। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि उनका सारा हर्ष-विषाद रवि के माँ के साथ ही चला गया हो। रवि के शादी के सात महीने बाद ही वह सर्प-दंश से चल बसी थी। तब से वे वीतराग-सा जीवन जीने लगे थे। लेकिन इस वीतराग को पोते अमित ने तोड़ दिया था। अमित अपने दादा जी से इतना जुड़ गया था कि पूरे दिन दादा जी के साथ रहता केवल रात को सोते समय ही रश्मि के पास जाता था।

मुंबई पहुँचने के चौथे दिन रवि ने अमित का नाम पास के कॉन्वेन्ट 'बाल विकास मंदिर' में एल.के.जी. में लिखवा दिया था। 'बाल विकास मंदिर' क्वाटर्स से मात्र 300-350 मीटर की दूरी पर था। पहली अप्रैल से रश्मि को भी कॉलेज ज्वाइन करना था।

पिता जी सुबह साढ़े आठ बजे अमित को कॉन्वेंट छोड़ आएँगे फिर एक बजे जाकर ले आएँगे। रश्मि भी अपने कॉलेज से तीन साढ़े तीन बजे तक आ ही जाएगी। रवि पिता जी के आने से निश्चिंत हो गया था।

शुरू-शुरू में दो-तीन दिन तो अमित को स्कूल छोड़ जब राघव लाल आने लगते तो रोता था फिर धीरे-धीरे सब ठीक हो गया। रश्मि सुबह-सुबह उठकर नाश्ता और खाना बना लेती है। अमित को कॉन्वेंट के लिए तैयार करती है। फिर स्कूटी से सात किलोमीटर दूर कॉलेज के लिए निकलती।

रश्मि ने जिस कॉलेज को ज्वाइन किया था वह इस क्षेत्र का सबसे प्रतिष्ठित इंटर कॉलेज था। वर्तमान प्रबंधक श्री रमेशचंद्र मेहता के पिता श्री शैलचंद्र मेहता जी इसे बनवाया था। शैलचंद्र जी इस क्षेत्र के सबसे बड़े दाल व्यापारी थे। उनकी एक चटकल फैक्ट्री कलकत्ता में और दो सूती साड़ी की मीलें मुंबई में थीं। उनका सिक्का चलता था पूरे क्षेत्र में। अब वो रुआब तो नहीं लेकिन शान में कोई कमी नहीं आई है। रमेशचंद्र जी भी अस्सी पार कर चुके हैं। अब कभी-कभी ही कॉलेज आते हैं। इसालिए सारी व्यवस्था उनके इकलौते पुत्र रूपेशचंद्र यानी बबुआ जी सँभालते हैं। सब लोग उन्हें बबुआ जी के नाम से ही पुकारते हैं।

रश्मि के कॉलेज ज्वाइन करने के एक महीना बाद ही रमेशचंद्र जी चल बसे थे। अब सम्पूर्ण भार बबुआ जी के कंधे पर आ गया था। कॉलेज में धीरे-धीरे रश्मि का प्रभाव जमने लगा था। रश्मि के पढ़ाने का अंदाज़ बच्चों को बहुत भाता था। प्रिंसिपल के पास बच्चों की रिपोर्ट पहुँचती रहती थी। प्रिंसिपल से प्रबंधक बबुआ जी को भी फीडबैक मिलता रहता था।

कॉलेज में वार्षिक क्रीड़ा महोत्सव का आयोजन था। एंकरिंग का दायित्व अंग्रेज़ी में इंग्लिश टीचर भुवन सर को एवं हिन्दी में मिसेज़ रश्मि को मिला है। मुख्य अतिथि हैं कॉलेज के प्रबंधक बबुआ जी। रश्मि के मन में एंकरिंग को लेकर अजीब-सी घबराहट हो रही है, हालाँकि उसने अपने कॉलेज के वार्षिकोत्सव में ऐंकरिंग किया था। लेकिन एक शिक्षिका के रूप में उसका यह पहला अवसर था। क्रीड़ा महोत्सव के दिन सुबह आठ बजे जब वह कॉलेज पहुँची तो नीले रंग की साड़ी और मैच करता हुआ सैंडल पहने बिल्कुल हीरोइन लग रही थी। रवि द्वारा पेरिस से लाया गया विदेशी स्प्रे उसके पास आने वालो को भीनी-भीनी सुगंध से सराबोर कर रहा था।

कॉलेज के बच्चे क्रीड़ा-परेड के लिए कतारबद्ध खड़े थे। मंच पर भी सारी तैयारी हो चुकी थी। बबुआ जी की कार आते ही एंकर रश्मि ने अपने मधुर झंकारयुक्त स्वर में उनका

स्वागत किया। एकाएक बबुआ जी का ध्यान एंकर की ओर खिंच गया। सत्ताइस साल का युवा दिल नील परिधान में सजे मोहक सौंदर्य को देखते ही ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा। रश्मि ने भी पहली बार बबुआ जी को देखा था। क्या बाँकपन है ? कोई भी युवती देखे तो बार-बार देखना चाहे। सफेद चूड़ीदार पाजामा, क्रीम कलर का चिकनवाला कुर्ता। उसी रंग का रेशमी अंगोछा। सजीली मूँछें। ताँबे-सा दमकता गोरा रंग। रश्मि भी उन्हें बरबस देखते रह गई। कार्यक्रम चलता रहा। बबुआ जी किसी न किसी बहाने उधर ज़रूर देख लेते थे जिधर रश्मि बैठी एंकरिंग कर रही थी। रश्मि का खनकता मधुर स्वर ऐसा लग रहा था कि जैसे कोई बाँसुरी बजाकर उनको मदहोश किए जा रहा हो। कॉलेज के बेस्ट खिलाड़ी का अवार्ड देते समय प्रिंसिपल के साथ-साथ रश्मि भी खड़ी थी। रश्मि ने ट्रॉफी उठाकर बबुआ जी को थमाई। अचानक बबुआ जी की उँगली ने उसकी उँगली को स्पर्श कर लिया था। फूल को किसी सजीले भँवरे ने छू दिया था।

रश्मि रात भर बबुआ जी के बारे में सोचती रही। अपने मन को उधर से हटाने का जितना ही वह प्रयास करती उतना ही ख़यालों में खोती जाती। नहीं... नहीं...

वह रवि की पत्नी है फिर उसके मन में किसी और के प्रति ऐसा ख़याल क्यूँ ? दिल को बार-बार समझाती-दबाती लेकिन कोई वश नहीं चल रहा था। आकर्षण की आँच से तप रहे शरीर को संयम के ठंडे झोकों से वह शांत करने का प्रयास कर रही थी लेकिन बबुआ जी हवा का झोंका बन कर उस दबी आग को सुलगा दे रहे थे। उधेड़-बुन में पड़ी वह दोराहे पर खड़ी थी।

कॉलेज में सोशल साइंस एग्ज़ीबिशन की तैयारी चल रही थी। रश्मि को स्किट कराना है। वह सोच रही थी कि साम्प्रदायिक सद्भाव पर स्किट तैयार करवाए। वह प्रिंसिपल मैम से इस विषय पर बात करने के लिए गई। प्रिंसीपल मैम नहीं थीं। सामने सोफे पर बबुआ जी बैठे कुछ सोच रहे थे। रश्मि ने दोनों हाथ जोड़ कर नमस्कार किया। देखते ही बबुआ जी खड़े हो गए।

"बैठिए-बैठिए रश्मि जी ! क्या आवाज़ है आपकी ? बहुत ही दमदार एंकरिंग करती हैं भई। आपने तो मेरा दिल जीत लिया।" मुस्कराते हुए बबुआ जी बोले।

"थैक यू सर ! आपको पसंद आया, मेरे लिए बड़ी बात है।" रश्मि ने सकुचाते हुए कहा।

"आप यहाँ पाँच महीने से हैं ?"

"हाँ सर !"

"किस पोस्ट पर ?"

"टी.जी.टी. (सोशल साइंस)"

"आपका क्वालिफिकेशन तो एम. ए. (हिस्ट्री), बी.एड. है।"

"हाँ सर !"

तब तक प्रिंसिपल भी आ गई। उन्होंने हाथ जोड़कर बबुआ जी का अभिवादन किया।

"अगले सत्र से रश्मि जी को पी.जी.टी. (हिस्ट्री) के पद पर रख लीजिए। अपने यहाँ एक पी.जी.टी. (हिस्ट्री) का पद रिक्त है न।" प्रिंसिपल की ओर देखते हुए बबुआ जी ने कहा।

"हाँ, है तो लेकिन मिसेज़ स्नेहलता, टी.जी.टी. (सोशल साइंस) ग्यारहवीं और बारहवीं का क्लास ले लेती हैं। काम चल जाता है।"

"काम चल जाता है नहीं। अगले सत्र से ये रहेंगी पी.जी.टी. (हिस्ट्री)।" बबुआ जी के स्वर में आदेश था।

"हाँ, ठीक रहेगा। रश्मि मैडम की बच्चे भी बहुत प्रशंसा करते हैं।" प्रिंसिपल ने हाँ में हाँ मिलाते हुए कहा।

"मैम, ऐसा कीजिए इनका नौवीं वाला क्लास स्नेहलता मैम को दे दीजिए और इन्हें स्नेहलता वाला बारहवीं का क्लास दीजिए। मैं बारहवीं के लिए यंग एनर्जेटिक टीचर चाहता हूँ। वैसे भी स्नेहलता मैडम का दो साल बाद रिटायरमेंट भी है।" बबुआ जी अपने रौ में थे।

"बहुत सही और दूर की सोचते हैं आप सर।" प्रिंसिपल के स्वर में खुशामद का भाव झलक रहा था।

रश्मि चुपचाप हो रही बातों को सुन रही थी।

"मैम ! मैं सोच रही हूँ कि इस बार सोशल साइंस एग्ज़ीबिशन के लिए साम्प्रदायिक सद्भाव पर स्किट करवाऊँ। आपका क्या विचार है ?" प्रिंसिपल की ओर मुखातिब हो रश्मि ने कहा।

"ठीक रहेगा।"

"रश्मि जी ! हमें भी आपका स्किट देखना है।" बबुआ जी ने रश्मि की तरफ देखते हुए मुस्करा कर कहा।

"हाँ सर ! ज़रूर।"

रश्मि दोनों का अभिवादन कर ऑफ़िस से बाहर आ गई।

दबी हुई आग अब सुलगने लगी थी। कॉलेज से आने के बाद खाना खाकर, अमित को सुला वह ख़ुद आराम कर रही थी। शाम को लगभग पाँच बजे मोबाइल बजा। नया नम्बर था।

"नमस्ते रश्मि जी ! कैसी हैं ?"

"मैंने पहचाना नहीं।" रश्मि बोली।

"मैं आपके कॉलेज का प्रबंधक बबुआ जी बोल रहा हूँ।" स्नेहिल स्वर था।

"हाँ सर ! हाँ सर ! नमस्ते, नमस्ते...।" रश्मि के स्वर में घबराहट थी।

"अरे ! आप तो घबरा रही हैं। कॉलेज के लिए प्रबंधक हूँ, मैनेजर हूँ, आपके लिए तो सिर्फ रूपेश हूँ रूपेश....।" बहुत ही मुलायम स्वर उभरा।

"क्या मैं आपसे कुछ अनुरोध कर सकता हूँ।" अनुनय भरा स्वर था।

"हाँ... हाँ, कहिए।" रश्मि ने घबराहट को सँभालते हुए कहा।

"परसों रविवार को आप हमारे साथ होटल एलफिंस्टन में लंच करें तो यह मेरी खुशनसीबी होगी।"

"न... न.... ह... ह... हाँ... हाँ... ठीक... ठीक है, सर सोचती हूँ।" घबराहट के कारण हकलाते हुए रश्मि ने धीरे से कहा।

"रूपेश, आपका रूपेश पलक पाँवड़े बिछाए हुए आपका इंतज़ार करेगा। ज़रूर आइएगा।" बबुआ जी के स्वर में प्रणय-याचना थी।

दबी आग जो धीरे-धीरे सुलग रही थी, हवा के तेज़ झोंके से प्रज्वलित हो उठी।

रविवार सुबह उठते ही रश्मि ने अपने चेहरे का ब्लिचिंग किया। तंबई रंग दमकने लगा। अमित को नाश्ता कराकर सुला दिया। फिरोज़ी रंग के सलवार सूट में वह पूरी तितली लग रही थी। दुपट्टा डालते हुए राघव जी से बोली "पिता जी ! कॉलेज में आज मीटिंग है। आते-आते 6-7 बज जाएगा। अमित सोकर उठेगा तो उसे खाना खिला दीजिएगा और आप भी खाना खा लीजिएगा।"

सजा-सजीला भँवरा बार-बार फूल को छू रहा था। फूल ने आख़िर अपनी पंखुरियाँ खोल दी। भँवरा फूल का रस लेने लगा। पंखुरियाँ खिलखिला उठी।

अमित डेढ़ बजे जगा। मम्मी ! मम्मी ! की आवाज़ सुनकर राघव लाल जी ने उसे गोद में उठा लिया।

"दादा जी ! दादा जी ! मम्मी कहाँ है ?"

"मम्मी कॉलेज गई है, बाबू, ज़रूरी मीटिंग है।" राघव जी उसे अपने सीने से चिपकाते हुए कहा।

अमित और राघव जी दोनों ने साथ-साथ खाना खाया। खाना खाने के बाद दोनों ड्रॉइंग रूम में टी. वी. देखने लगे। अमित अपना कार्टून चैनल पर 'डोरेमॉन' देखने में मग्न हो गया। 'डोरेमॉन' ख़त्म होने के बाद अमित कुरकुरे के लिए ज़िद करने लगा।

शाम के साढ़े चार बज रहे थे। राघव जी अमित को साथ लिए पास के शॉपिंग कॉम्प्लेक्स चल पड़े। रास्ते में रश्मि के ही कॉलेज के पी.जी.टी. (फिजिक्स) रमन श्रीवास्तव जी मिल गए। रमन श्रीवास्तव ने राघव लाल जी को नमस्कार किया।

"अरे ! आप नहीं गए कॉलेज, आज ज़रूरी मीटिंग है न आपके कॉलेज में।" राघव जी का प्रश्न था।

"नहीं-नहीं, कोई मीटिंग नहीं है।" रमन जी ने सफाई पेश करते हुए कहा।

"लेकिन बहू तो गई है। बता रही थी ज़रूरी मीटिंग है।" राघव जी के स्वर में दृढ़ता थी।

"नहीं-नहीं अंकल ! मैं तो कल देर तक रुका था कॉलेज में। प्रिंसिपल मैडम से आते समय बात भी हुई थी। नहीं, कोई मीटिंग नहीं है... पक्का।" रमन जी ने पूरे विश्वास से कहा।

"हो सकता है बहू को विशेष काम के लिए बुलाया गया हो।" राघव जी ने सुरक्षात्मक लहज़े में कहा।

कुरकुरे दिलाकर आते समय राघव जी के पाँव बहुत ही धीरे-धीरे बढ़ रहे थे। उनकी बूढ़ी आँखों में रश्मि का चेहरा धुँधला-धुँधला–सा लगने लगा था।

रश्मि को घर आते-आते सात बज गए थे। आते ही उसने अमित को अमूल डेयरी का बड़ा-सा चॉकलेट थमा दिया। अमित ग़ुस्से में था लेकिन चॉकलेट पाकर सब भूल गया। वेनिटी बैग अपने कमरे में रख रश्मि टॉवेल ले बाथ रूम में चली गई। रात का खाना बनाने के बाद टी. वी. देख रहे अमित और राघव जी को उसने खाना खाने के लिए बुलाया।

रश्मि ने अभी खाने का प्लेट डाइनिंग टेबल पर रखा ही था कि राघव जी बोले "बहू! शॉपिंग कॉम्प्लेस में रमन जी मिले थे। वे बोल रहे थे कि आज कोई मीटिंग नहीं थी तुम्हारे कॉलेज में।"

"पापा ! उनको नहीं बुलाया गया था। कुछ ख़ास टीचरों को ही बुलाया गया था।" किचेन से पानी का ग्लास लाते हुए रश्मि बड़े ही साफ़गोई से कहा।

राघव जी ने चुपचाप खाया और हाथ धोकर दाँतों में नीम का खरिका करने लगे। रश्मि को आभास हो गया था कि बूढ़े राघव लाल की अनुभवी आँखें सब ताड़ गई हैं। उसे रात में नींद नहीं आ रही थी। दस बजे रात को वह सोने के लिए बिछावन पर आई थी। बाकी दिनों उसे बिछावन पर आते ही नींद आ जाती थी। लेकिन आज बार-बार उसके मन में 'रमन जी ने कहा था कि आज कोई मीटिंग नहीं है' ससुर जी द्वारा कही गई बात घुमड़ रही थी। वह कभी बाँए तो कभी दाँए करवट सोने का प्रयास कर रही थी। रात के साढ़े ग्यारह बज गए। शाम को छ: बजे रवि का फ़ोन आया था कि वह 26 सितंबर को आ रहा है। आज 7 सितंबर है। उन्नीस दिनों के बाद वह आ जाएगा। कहीं बूढ़े ने सब बता दिया तो ? क्या करे कुछ समझ में नहीं आ रहा था ? पसीना-पसीना हो गई वह।

एकाएक उसके मन में आया कि रवि को यदि ऐसा बताया जाए तो सब ठीक हो जाएगा। बाँस को ही हटा दिया जाए, न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी।

सुबह उठी तो आठ बज चुके थे। वह घबरा गई। जल्दी-जल्दी अमित को तैयार किया और नाश्ता करा उसका टिफ़िन पैक किया। जल्दी- जल्दी सूट पहना। तब-तक साढ़े आठ हो चुके थे। अमित के पीठ पर बैग टाँगते हुए बोली "पापा ! अमित को कॉन्वेंट छोड़ने के बाद चावल–दाल बना लीजिएगा, भुजिया बनी हुई है।" इसके साथ ही अपना बैग झपट कर उठाया और स्कूटी स्टार्ट कर तेज़ी से निकल गई।

रश्मि भागी-भागी कॉलेज पहुँची। ख़ैर, मॉर्निंग असेम्बली अभी शुरू नहीं हुई थी। स्टॉफ रूम में जा बाल ठीक करने के लिए कंघी निकालने के लिए बैग खोला तो याद आया कि मोबाइल तो घर में डेसिंग टेबुल पर ही छूट गया।

रिसेस की घण्टी बजी, वह स्टॉफ रूम में जा रही थी कि प्रिंसिपल मैम ऑफ़िस के सामने मिल गईं।

"आप प्रबंधक सर के यहाँ जाइए। उनके बुआ की बेटी आई है। उसे प्रचीन इतिहास में कुछ जानना है। अभी-अभी सर का फ़ोन आया था।"

"ठीक है मैम !" रश्मि ने मुस्कराते हुए कहा। उसके चेहरे पर आई चमक बता रही थी कि वह तितली की भाँति उड़ने को आतुर है।

खाना खाने के बाद राघव जी लेटे ही थे कि अमित मोबाइल लिए आ गया।

"दादू ! दादू ! देखो न मेरा विडियो गेम नहीं मिल रहा है, कल ही मैंने डाउनलोड किया था।" अमित मोबाइल दादा जी को देते हुए कहा।

"लाओ देखते है। बेटा यह तो तुम्हारे मम्मी का मोबाइल है।" राघव जी ने मोबाइल हाथ में लेते हुए कहा।

"हाँ ! हाँ ! दादू मम्मी का ही है, इसी में ही मैंने लोड किया था।" अमित ने अपनी उँगली मोबाइल पर रखते हुए कहा।

मोबाइल लेकर राघव जी देखने लगे कि कहीं गैलरी में तो नहीं गया। गैलरी खोल कर देख ही रहे थे कि एक व्हाट्सएप इमेज दिख पड़ा। एक मैसेज था "जानू ! आज का दिन मेरे जीवन का सबसे ख़ूबसूरत दिन रहा। फिर कब इनायत होगी।" उसके नीचे एक फ़ोटो थी, जिसमें रश्मि उस व्यक्ति के साथ बिल्कुल चिपकी हुई थी। राघव जी ने कुछ और पोस्ट पढ़ने की कोशिश की लेकिन ज़्यादा पढ़ नहीं पाए। 'जानू', 'डार्लिंग', 'जानेमन' के सम्बोधनों से भरा था सारा पोस्ट। उनका सिर चकराने लगा। उन्होंने मोबाइल अमित को दे दिया और सिर पकड़ कर बैठ गए।

रवि 26 सितंबर की शाम को आ गया था। पिताजी का पाँव छूने के बाद उसने अमित को गोद में उठा लिया। अमित भी अपने पापा को पुच्ची लेने लगा। रश्मि वहीं खड़ी थी। वह अपने कमरे में चली गई। पीछे-पीछे रवि भी कमरे में आ गया। अमित पापा के लाए चॉकलेट खाने में मग्न था। रवि ने रश्मि को आग़ोश में भर लिया। रश्मि भी उससे लिपट गई थी, लेकिन इस बार रवि को पहले जैसी तड़प रश्मि में नहीं दिखाई पड़ रही था।

सुबह-सुबह रवि राघव जी से बातों में मशग़ूल हो गया। अलग-अलग देशों की अलग-अलग कहानियाँ थी। एक बड़ी दिलचस्प कहानी थी जिसे वह सुनाना चाहता था।

"पापा ! पिछली बार जब मैं लंदन गया था तो एक दंपति से जुड़ाव हो गया था, क्योंकि उस दंपति में पत्नी भारतीय मूल की थी। इस बार गया तो वह भारतीय महिला नहीं मिली केवल बिट्रिश पति मिला। बातचीत के दरम्याँ पता चला कि उस महिला ने एक धनाढ्य अमेरिकन से शादी कर ली और अमेरिका चली गई। क्या बताऊँ पापा ! वहाँ यह आम बात है। इस मामले में अपना भारत बहुत अच्छा है।"

"हाँ, लेकिन यह बुराई अब यहाँ भी धीरे-धीरे पैर पसार रही है। खुल कर नहीं तो छुप-छुप कर ऐसा हो ही रहा है, बेटा।" गहरी साँस लेते हुए राघव जी ने कहा। उन्होंने एक असहाय की भाँति रवि को देखा। उनकी आँखों में गहन पीड़ा थी। रवि कुछ बदला-बदला-सा महसूस कर रहा था। रात को सोते समय रश्मि अपना मोबाइल बंद कर देती थी। दिन में जब भी घंटी बजती वह दौड़कर मोबाइल उठाती। रात में बेड पर भी पहले जैसा आकर्षण नहीं था। जैसे कोई रूटीन वर्क किया जा रहा हो ऐसा लगता।

वह पहले वाली रश्मि नहीं थी। रवि को आए हुए सात दिन हो गए थे। रात को ग्यारह बज रहे थे। अमित गहरी नींद में सोया था। रश्मि रवि के बाँहों में सिमटती हुई बोली "रवि! कॉलेज ज्वाइन करते समय ही मैंने प्रिंसिपल मैम को आया के लिए कहा था। आज मैम कह रही थी कि कब से आया चाहिए ?"

"चलो, अच्छा हुआ। आया मिल जाएगी तो बढ़िया रहेगा।" रवि ने निश्चिंतता प्रकट की।

"रवि ! पिताजी को आए हुए सात महीने हो गए हैं। गाँव को हमेशा याद करते रहते हैं। उन्हें घर भेज दो। अच्छा रहेगा। आया के मिल जाने से अब अमित को सँभालने का तो झंझट है नहीं और तुम भी तो चार महीने के बाद ही ट्रिप पर जाओगे।" रश्मि ने रवि के छाती के बालों में अपनी उँगलियाँ फेरते हुए कहा।

"चलो, तुम कहती हो तो देखते हैं।" रवि ने साँस भरते हुए कहा।

रश्मि के कॉलेज जाने के बाद रवि राघव जी से बातों के सिलसिले में गाँव जाने का ज़िक्र किया तो वे बोले "बेटा ! मेरा भी मन गाँव जाने को कर रहा है लेकिन वहाँ भी मुझे तुम्हारी चिंता रहेगी।"

"कोई बात नहीं पापा ! यहाँ सब सँभल जाएगा।" रवि ने आहिस्ते से कहा। नौ दिन बाद का रिज़र्वेशन मिला था। रात साढ़े आठ बजे की ट्रेन थी। प्लेटफॉर्म सात पर ट्रेन लगी थी। नीचे वाला बर्थ था। रवि ने सारा सामान सीट के नीचे लगा दिया। पानी का दो बोतल खरीद लाया। रात और कल दिन के लिए रश्मि ने सत्तू-पराठा और आलू की भुजिया बनाकर रख दिया था। मूँगफली और चिउरा भी तेल में भून कर रख दिया था रश्मि ने रास्ते के लिए। आठ बजकर पच्चीस मिनट हुआ था।

'चलो, चलते हैं, अब ट्रेन सीटी दे रही है।" कहते हुए रश्मि ट्रेन से उतर गई। डिब्बे के सामने प्लेटफॉर्म पर खड़ी वह मोबाइल से बातें करने लगी।

रवि अपने पिता के आँखों में झलक रही अथाह पीड़ा को देख रहा था, लेकिन कारण नहीं समझ पा रहा था। ट्रेन धीरे-धीरे सरकने लगी। उसने पिताजी के चरणों में सिर रखकर प्रणाम किया। राघव जी ने उसे अपने सीने से चिपका लिया। दो बूँद आँसू उसके कंधे पर गिर पड़े थे। वह जल्दी से अलग हो ट्रेन से उतर गया।

घर आते-आते साढ़े नौ बज गए। उसने पिता जी को रिंग किया।

"हैलो ! कैसे हैं पापा ?"

"मैं ठीक हूँ, बेटा ! तुम अपना ख़याल रखना।" भर्राया हुआ स्वर था।

"यह क्या पापा ! आप रो रहे हैं ?" रवि ने आँखों में उमड़ रहे आँसुओं को पोंछते हुए कहा।

"नहीं रे ! ट्रेन में हूँ इसलिए ऐसा लग रहा होगा।" राघव जी ने उमड़ आए आँसुओं के सैलाब को रोकते हुए कहा।

"पापा ! मैं आपको अपने से अलग नहीं करना चाहता लेकिन पापा.... मैं... मजबूर हूँ... पापा... पापा।" रवि का स्वर हिचकियों से भरा था।

"बेटा ! एक पिता की मजबूरी क्या होती है तुझे क्या बताऊँ? बस इतना ही कि सच को सामने रख कर मैं तुम्हें और दुखी नहीं देखना चाहता। भगवान् तुम्हारे पारिवारिक जीवन को बनाए रखें। अब रखो बेटा, रखो।" राघव जी फूट पड़े।

उन्होंने मोबाइल काट दिया था।

रवि के बहते आँसुओं ने सब कुछ साफ कर दिया था। रश्मि का खिंचा-खिंचा रहना, आया के इंतज़ाम होने की बात, अगले सत्र से पी.जी.टी. होने की बात, रात में मोबाइल को ऑफ कर देना, बेड पर रस्म अदायगी, सब कुछ उसकी आँखों के सामने फिल्म की तरह गुज़र रहे थे।

000

दूसरा हादसा

उर्दू कहानी

मूल लेखक : तारिक छतारी

अनुवादक: पंकज पराशर

तारिक छतारी
प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष, उर्दू विभाग,
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यायल,
अलीगढ़- उप्र 202002
मोबाइल- 9358257145

पंकज पराशर
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी
विभाग,अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यायल,
अलीगढ़, उप्र- 202002
मोबाइल- 9634282886
ईमेल- pkjppster@gmail.com

शहर के बाहर चुंगी वाले पेट्रोल पंप के क़रीब दयालु जाट एक पंजाबी ढाबे में बैठकर अपने कुछ ड्राइवर दोस्तों के साथ चाय की चुस्कियाँ ले रहा था। ढाबे के मालिक सरदार जी कुछ कहना चाह रहे थे कि इसी बीच ड्राइवरों के बीच नेता के रूप में मशहूर रामदास ने नेताओं वाले अंदाज़ में कहा, 'सरदार जी कुछ जोड़ी हुई रकम ढाबे में लगा दो। यह दो पल्लू छप्पर कमर झुकी हुई बुढ़िया की तरह मुँह बाए हुए खड़ा है।'

सरदार जी ने मुस्करा दिया और करछे से भट्ठी में जल चुके कोयले की राख बाहर खींचने लगे। राख में अपने ऊपर भूरी परत चढ़ाए हुए अभी कुछ ऐसे दम तोड़ते अंगारे भी थे, जो पूरी तरह राख बनने से रह गए थे-जैसे अपने बूढ़े वजूद को छिपाने की कोशिश कर रहे हों। दयालु जाट ने ढाबे में काम करने वाले छोकरे को पुकारा, 'ओए लौंडे, ला एक चम्मच चीनी और डाल, और देख एक चाय उधर मंगलुआ को दे आ। ट्रक धो रहा होगा।' हालाँकि उसे शहर आए हुए तकरीबन पाँच साल हो गए थे, मगर था अब भी वही देहाती जाट। ड्राइवरी के धंधे ने ज़्यादा पत्ती की कड़क चाय पीना तो सिखा दिया, मगर चीनी अब भी साढ़े तीन चम्मच ही डालता था। मिज़ाज में देहाती अल्हड़पन, बुद्धि ऐसी मोटी कि हर किसी से बिगाड़ खाता और दयालु भी ऐसा कि अगर किसी पर दया आ जाए, तो अपना सब कुछ न्योछावर कर दे। शायद इसीलिए लोगों ने दयाप्रसाद के बजाय उसका नाम दयालु जाट रख दिया था। छोकरा गिलास में एक चम्मच चीनी

डाल कर घोलने लगा कि बाहर एक बूढ़ी औरत की चीख़ के साथ ही 'पकड़ो, पकड़ो, भाग गया। नंबर देख लो। काली कार है, काली,' की आवाज़ गूँजने लगी। उसके साथी दौड़कर बाहर पहुँच गए, मगर वह चुपचाप बैठा चाय पीता रहा।

'दयालु जाट, तू यहाँ बैठा है! बाहर एक बुढ़िया की कार से टक्कर हो गई!' उसने बेपरवाही से चाय का घूँट लेते हुए कहा, 'जाने दो, अंधी-धुंधी बुढ़िया को किसने कहा कि सड़क पर चले।' इतने में ढाबे का छोकरा पास आया, 'दयालु काका, डुकरिया (बुढ़िया) की सब अँतड़ियाँ बाहर आ गईं। मर गई बेचारी।' उसने चाय का गिलास तिपाई पर रखा और भीड़ को चीरता हुआ सड़क पर पड़ी बूढ़ी औरत की लाश के क़रीब जाकर खड़ा हो गया। औरत बहुत बूढ़ी थी। उसने झुककर देखा, पेट के ऊपर से पहिया गुज़र गया था।

'अब क्या धरा है इसमें! मौत आनी थी सो आ गई। कोई ड्राइवर ने जान के थोड़े मारा होगा। तुम सब खड़े क्या कर रहे हो। सिपाही को बुलाओ और चीरघर भेज दो। सवेरे-सवेरे डुकरिया ने सारा सगुन बिगाड़ दिया।'

'दयालु काका, धुलाई हो गई।' मंगलुआ ने पीछे से आकर कहा।

'हाँ-हाँ, इतनी जल्दी काहे की है, चाय तो पी लूँ।' यह कहता हुआ अंदर आया और तिपायी से गिलास उठाकर बची हुई चाय पीने लगा। चाय ठंडी हो चुकी थी और बड़ी मुश्किल से घूँट हलक के नीचे उतर रहे थे।

'यह बुढ़िया तो कुछ-कुछ अम्मा की शकल है!' उसने बाहर झाँक कर देखा, भीड़ छँटती जा रही थी।

'इस बिचारी का तो कोई रोने वाला भी नहीं है। क्रिया-कर्म कौन करेगा। कोई तो होगा-बेटा नहीं तो बेटी। दुखियारी बहुत बूढ़ी थी। नाती-पोते भी होंगे। अम्मा भी अब बहुत बूढ़ी हो गई है। पंसारियों की मिर्ची कूटते-कूटते दिखाई भी कम देने लगा है। बाबा तो मुझे अम्मा के पेट में ही छोड़कर मर गए थे। अम्मा ने खेतों में नलाईयाँ कीं। बोहरों के चौका-बासन किये। ईख के ठूँठ उखाड़-उखाड़ कर ईंधन इकट्ठा किया। घर-घर चक्की पीसकर दो चुटकी आटा लायी। खेतों में बचे-खुचे आलू बीने। तब जाकर मुझे पाला-पोसा। पाठशाला भेजा, फिर मेरा ब्याह रचाया और पूरी गृहस्थी लेकर यहाँ शहर में आन बसी। मुझे लाला रघुवीर के ट्रक पर क्लीनर की जगह मिल गई। कई साल तक ट्रक के पहिये उतारे और चढ़ाये। बाल्टियों में पानी भर-भर कर ट्रक धोए। फिर भगवान् की दया से चलाना भी सीख लिया।

लाइसेंस भी बन गया और ड्राइवरी भी मिल गई। अब तो अम्मा बहुत सुखी है। अपनी बहू को कितना प्यार करे है और पोते को तो हर समय कलेजे से चिपकाए रहवे है। चलते समय कितने प्यार से बोली थी, 'अरे दयालु, आज तो तेरा ठेला मथुरा जाएगा। मैंने कटोरदान में परांठे और अचार की फाँक रख दी है। देख समय से खा लियो और कृष्ण भगवान् से प्रार्थना करियो कि मुझे चलते हाथ-पाँव उठा लें। मेरा क्रिया-कर्म अच्छे ढंग से करियो। कहे देती हूँ।' मैंने अम्मा के पोपले मुँह पर हाथ रख दिया था। 'अरी अम्मा, तू कैसी बातें कर रही है! अभी तो भले दिन आए हैं।'

फिर अम्मा ने कटोरदान देते हुए कहा था, 'ला तेरे पास कुछ पैसे हों तो देता जा। तेरा बालक दो दिन से जाड़े-बुखार में पड़ा है। सड़क पार वाले डागडर बाबू से दवा लाऊँगी। तुझे तो फिकर है न।' सरदार जी ने गिलास धोकर पानी फेंका तो भट्ठी के बाहर पड़े अधबुझे कोयले बेजान-सी आवाज़ के साथ बुझ कर रह गए।

'अम्मा...अम्मा...'

उसे लगा कि उसके भीतर से किसी ने पुकारा है। वह उठा और जैसे ही पुराने छप्पर से बाहर निकला, सिर बल्ली से टकाराया और बिल्कुल काला पड़ चुका छप्पर का सड़ा-गला फूस उसके कंधों पर आकर गिरा। कंपकपाती नज़रों से उसने ऊपर की ओर देखा, जगह-जगह हो चुके छेद से सुबह की पीली धूप झाँक रही थी। वह जल्दी से बाहर निकल गया। बुढ़िया की लाश अब तक बाहर ही पड़ी थी। अब वहाँ सिर्फ चार-छह आदमी खड़े रह गए थे। उसने बुढ़िया को छूकर देखा। उसका जिस्म ठंडा पड़ चुका था। वह भर्रायी हुई आवाज़ में बोला, 'किसी ने कार का नंबर भी लिखा या सब उल्लुओं की तरह देखते रहे। यहाँ आ रे लौंडे। कार का रंग कैसा था?'

लड़का सहम कर बोला, 'काला, बिल्कुल काला...दयालु काका।'

'हरामज़ादे कार वाले समझत हैं कि उन्हीं का राज है। जिसे चाहे कीड़े-मकोड़े की तरह कुचल दिया और निकल गए। अगर कार रोक लिया होता तो कौन-सी मौत आ जाती। अस्पताल ले जाता तो बुढ़िया बच जाती। नहीं तो कुछ रुपये ही तो देने पड़ते, बेचारी का क्रिया-कर्म हो जाता। अब जलेगी भी तो चंदे की लकड़ियों से।' उसने अपने ट्रक की ओर देखा। उसके ऊपर सूरज का गोला एक अंगारे की तरह दहक रहा था। उसे लगा गोले में से आग की लपटें निकल कर उसके बदन में उतरती जा रही हैं। वह भागता हुआ ट्रक के पास पहुँचा तो उसका क्लीनर मंगलुआ भी दौड़ कर वहाँ पहुँच गया। दयालु जाट ने उसे धक्का देकर खिड़की बंद कर ली, 'परे हट, पहले हरामज़ादे कार वाले की मुंडी तोड़ूँगा फिर चलूँगा मथुरा। तू यहीं ठहर।'

उसने तेज़ी से ट्रक वापस शहर की ओर मोड़ा और पूरी रफ़्तार से सड़क पर दौड़ाने लगा। दूर तक कार नज़र न आई तो रफ़्तार और तेज़ कर दी, 'शायद रेल का फाटक बंद हो', उसने सोचा।

सड़क लगभग खाली थी, मग़र उसे जगह-जगह भीड़ नज़र आती, बूढ़ी औरत को घेरे हुए एक भीड़। उसने आँखों के कोरों को साफ किया और दूर तक नज़र दौड़ा कर देखा। रेल का फाटक बंद था और काले रंग की एक कार भी खड़ी थी। एक अज़ीब-सी कैफ़ियत के साथ टाँगें कँपकँपाने लगी। गाड़ी की रफ़्तार कुछ धीमी हो गई। उसने मज़बूत हाथों से स्टीयरिंग को कस कर दबा लिया, जैसे कार वाले की गर्दन दबा रहा हो, 'अभी साले की मुंडी पकड़ कर दो लातें जमाऊँगा। गाड़ी में डाल कर बुढ़िया की लाश के पास ले जाऊँगा। लोग जुतियाएँगे, हड्डी-पसली एक कर देंगे। पुलिस मारेगी सो अलग। अमीरजादा कहीं का।' मगर उसने देखा कि फाटक खुला

और कार वहाँ से फुर्र हो गई।

'धत्त तेरे की।' उसने मन मसोस कर रफ़्तार और बढ़ा दी। अब ट्रक पूरी गति के साथ सड़क पर दौड़ रहा था। गाड़ी शहर में दाखिल हो चुकी थी, मगर उसकी रफ़्तार में कोई कमी न आई। उसने अंदाज़ा लगाया कि पाँच मिनट में कार से आगे निकल कर उसे रोक लेगा। नज़रें कार पर जमी हुई थी। अचानक एक कुत्ता ट्रक के सामने आ गया। इसके पहले भी कई कुत्ते उसके ट्रक के नीचे कुचल कर मर चुके थे। मगर आज पहली बार उसके जानदार होने का एहसास हुआ और सिटपिटाकर स्टियरिंग घुमा दिया। गाड़ी सड़क के नीचे उतर गई। कुत्ता तो बच गया मगर गाड़ी को पक्की सड़क पर लेते वक़्त एक हल्की-हल्की चीख़ उसके कानों में रेंग गई। पूरी ताक़त से उसने ब्रेक लगाया। खिड़की खोल कर बाहर झाँका तो देखा एक बूढ़ी औरत पिछले पहिये के नीचे आ गई थी। उसने देखा कि अभी साँस बाकी है और वह गर्दन हिला-हिला कर कराह रही है। सिर पर काफी चोट आई थी और ख़ून बहकर सड़क पर फैलने लगा था। उसके हाथ में एक दवा की शीशी थी जो उसने अब भी मज़बूती से पकड़ रखी थी। उसने पहचाना, यह उसकी माँ थी। आँखों में अँधेरा छा गया, 'अम्मा!' चीख़ना चाहा मगर उसका गला रुँध गया। अब वह न तो कुछ कह पा रहा था और न ही उसे कुछ दिखाई दे रहा था, न कुछ सुनाई दे रहा था। बस एक ही वाक्य बार-बार उसके कानों के पर्दे से टकरा रहा था, 'मेरा क्रिया-करम अच्छे ढंग से करियो, कहे देती हूँ।'

उसने गाड़ी से उतरने के लिए पैर लटकाया ही था कि कुछ आवाज़ें सुनाई दीं, 'मारो, अरे पकड़ो। कहीं भाग न जाए, ज़िंदा मत जाने देना, अंधे होके चलाते हैं।' पैर ख़ुद-ब-ख़ुद वहीं रुक गया।

'हे भगवान्।' इन आवाज़ों के साथ ही उसके ज़ेहन में एक आवाज़ और सरसरायी, 'किशन भगवान् से प्रार्थना करियो कि मुझे चलते हाथ-पाँव उठा लें।' उसने बाहर झाँका, लोग उसकी तरफ़ भागे चले आ रहे थे। जल्दी से पैर अंदर किया और खिड़की बंद कर ली। सूरज की किरणें आगे शीशे के पास रखे पीतल के कटोरदान पर कुछ इस तरह पड़ रही थीं जैसे कटोरदान के वजूद से ख़ून के धारे फूट रहे हों।

'मैंने कटोरदान में परांठे और अचार की फाँक रख दी है। देख समय से खा लियो।' दिल में आया कि खिड़की से कूदकर अम्मा के चरणों में अपना सिर रख दे।

'अम्मा, अभी तो भले दिन आए हैं!' खिड़की खोली मगर देखा कि भीड़ बिल्कुल क़रीब आ चुकी है और लोगों के हाथों में डंडे, लोहे की छड़ें और हलवाइयों के करछे हैं। चाहा कि उन्हें बता दे कि यह उसकी माँ है। मगर सुनेगा कौन? हाथ-पाँव फूलने लगे, बदन ठंडा पड़ गया। आवाज़ आई, 'खींच लो नीचे।' वह थरथरा गया। फिर शरीर की सारी शक्ति समेट कर गाड़ी स्टार्ट की और आगे बढ़ा दी।

'तेरा बालक दो दिनों से जाड़े बुखार में पड़ा है। सड़क पार वाले डागडर बाबू से दवा लाऊँगी।' गाड़ी एक रफ़्तार से आगे बढ़ती जा रही थी, 'अम्मा ने दवाई की बोतल कितनी कस के....'

गाड़ी की रफ़्तार धीमी की, खिड़की से मुँह निकाल कर पीछे पलट कर देखा। कुछ नज़र न आया, बस एक लाश थी जो सड़क पर पड़ी थी, उसकी अपनी लाश। वह मर चुका था। आँखें बंद की फिर खोलीं तो देखा उसकी लाश सड़क पर दौड़ रही है। उसने ग़ौर किया कि एक खुली जीप थी जो ट्रक के पीछे तेज़ी से दौड़ी चली आ रही थी। जीप में कुछ लोग 'पकड़ो, पकड़ो' की आवाज़ें लगा रहे थे।

सिर अंदर किया तो ऊपर लगे आईने पर नज़र पड़ी। वह चौंक गया। यह वह नहीं, कोई और था, जो उसकी जगह ड्राइवर की सीट पर बैठा था। अब वह गाड़ी रोक कर नीचे कूद जाना चाहता था। उसने गाड़ी रोकने के लिए एक्सीलेटर से पाँव हटाने की कोशिश की, लेकिन एक्सीलेटर पर पाँव का दबाव बढ़ता ही गया और उसकी गाड़ी बहुत तेज़ी से सड़क पर दौड़ने लगी।

000

फार्म IV

समाचार पत्रों के अधिनियम 1956 की धारा 19-डी के अंतर्गत स्वामित्व व अन्य विवरण (देखें नियम 8)।

पत्रिका का नाम : विभोम स्वर

1. प्रकाशन का स्थान : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001

2. प्रकाशन की अवधि : त्रैमासिक

3. मुद्रक का नाम : ज़ुबैर शेख़।
पता : शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एमपी नगर, भोपाल, मप्र 462011
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

4. प्रकाशक का नाम : पंकज कुमार पुरोहित।
पता : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

5. संपादक का नाम : पंकज सुबीर।
पता : रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

4. उन व्यक्तियों के नाम / पते जो समाचार पत्र / पत्रिका के स्वामित्व में हैं। स्वामी का नाम : पंकज कुमार पुरोहित। पता : रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001
क्या भारत के नागरिक हैं : हाँ।
(यदि विदेशी नागरिक हैं तो अपने देश का नाम लिखें) : लागू नहीं।

मैं, पंकज कुमार पुरोहित, घोषणा करता हूँ कि यहाँ दिए गए तथ्य मेरी संपूर्ण जानकारी और विश्वास के मुताबिक सत्य हैं।

दिनांक 21 मार्च 2022

हस्ताक्षर पंकज कुमार पुरोहित

(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

अजनबी

मलयालम कहानी

मूल कथाकार: अब्राहम मैथ्यू
अनुवादक : डॉ.षीना ईप्पन

अब्राहम मैथ्यू
मलयालम के जाने माने पत्रकार एवं कथाकार। मुद्रित माध्यम 'मातृभूमि 'में उन्होंने अपना पत्रकार जीवन प्रारंभ किया, फिर कैरली टेलीविजन माध्यम में उन्होंने एसोसिएट एडिटर के रूप में कई सालों तक काम किया।

डॉ.षीना ईप्पन
हाऊस नंबर २, अलफ़ोनसा मिडोस,
थेक्केमला पी.ओ., कोषंचेरी,
पत्तनंतिट्टा पिन- 689654, केरल
मोबाइल- 9249932946

'अ' आख़िर उधर पहुँच गया। परंतु पहुँचने पर पता चला कि गाड़ियाँ आज नहीं निकलेंगी, दूकानें बंद हैं। एक भी आदमी उधर दिखाई न पड़ा। एक पेड़ की छाया में खड़े होकर वह चारों ओर देखने लगा। पास ही एक खुला मैदान दिखाई पड़ा। वहाँ सूखे घास, गंदे घर, इस्तेमाल करके फेंके गए बहुत सारे सामान को भी देखा, शायद वह एक मण्डी हो सकती है। काली कलूटी मण्डी या काला बाज़ार। वैसे ही वह स्तब्ध खड़ा था, तभी दूर उस मोड़ से किसी को आता हुआ देखा। आनेवाला ढीला पतलून एवं कसा हुआ कुर्ता पहना हुआ था। वह नाटा और गोरे रंग का दीख पड़ा।

सामान्यतया अजनबियों से दूर रहने की आदत थी। परंतु अकेलेपन महसूस होने के कारण पूछा-

"क्या बंगाली है ?"

"जी हाँ"। उसने भी पूछा- "क्या मलयाली है ?"

"क्या दिखता नहीं ?"

बड़ी आसानी से मलयालम में बंगाली ने उत्तर दिया- "देखने पर आजकल किसी को पहचानना बहुत मुश्किल है।"

'अ' नामक यात्री ने हैरान होकर कहा- "दूध की तरह साफ-साफ मलयालम"।

बंगाली ने प्रत्युत्तर दिया- "मैं दूध नहीं पीता" फिर वह हड़ताल के बारे में कहने लगा-"सुबह ही हड़ताल शुरू हो गई थी। कल रात तक कोई गड़बड़ी नहीं थी"।

"हड़ताल के लिए केरल ज़्यादा मशहूर है। बंगाल का क्या हाल है?"

"बंगाल दल तो प्राय: ख़त्म हो गया है, यही तो पूछना चाहते थे न?"

दोनों अपनी-अपनी भाषा में हँसने लगे। दोनों को एक ही जगह पर जाना था।

"और क्या करेंगे?"

"देख लेंगे, चलिए", बंगाली ने कहा।

दोनों धीरे-धीरे चलने लगे। बंगाली के साथ उसी तेज़ रफ्तार में चलना थोड़ा मुश्किल था।

दुर्गंध से भरे उस लंबे रास्ते के एक छोर पर पहुँचा तो मुर्गी, गाय और सुअर को प्लास्टिक थैले में पाया। मक्खियों का अपना देश। "आप कैमरे के निरीक्षण के तहत हैं" पढ़ते हुए बंगाली हँसने लगा।

"सब पढ़ सकते हो?"

"जो भी लिखा जाता है"?

'अ' ने पूछा- "यह सब कैसे हुआ?"

करीब दस साल पहले आया था। पाँच साल पूर्व मलयाली से शादी हुई। फिर मलयालम से रिश्ता बढ़ गया। 'अ' ने अपनी बात भी बाँट ली। दस साल तक मैंने बाहर काम किया। उधर ही पढ़ाई की। पाँच साल पहले एक दिल्ली वाली से शादी भी की। फिर इधर आया।

बंगाली ने तब पूछा-क्या आप अपनी भाषा के अक्षर तक भूल गए।

मज़ाक में मलयाली ने उत्तर दिया "जिसकी ज़्यादा ज़रूरत नहीं वह सब" कड़ी धूप थी, उसके शरीर से पसीना निकलने लगा, बंगाली ने थोड़ा ग़ुस्से में पूछा-

"जी, आप लोगों को अपनी भाषा पसंद नहीं क्या?"

"कैसे पता चला?"

"अनुभव के आधार पर"।

"मतलब...."

बंगाली उस दिशा की ओर इशारा करते हुए कहने लगा-उधर तीस बंगाली परिवार रहते हैं। बाकी राज्य वाले उससे भी ज़्यादा हैं। दूसरे राज्य के बच्चों के लिए मलयालम पढ़ने का केन्द्र ख़ुद शुरू कर दिया। पचास से ज़्यादा बच्चे भर्ती हो गए। परंतु मलयाली लोग मदद नहीं करते। बाँगला एवं मलयालम एक साथ पढ़ाता हूँ। शनिवार और रविवार को कक्षा चलाता हूँ। जी, मलयालम वर्णमाला में कितने अक्षर होते हैं।

'अ' ने मौन साधा।

"मैं बच्चों को सरल मलयालम पढ़ाना चाहता हूँ। ऐसी कोई किताब दुकान में उपलब्ध नहीं है। दूसरे शहरों में भी जाकर देखा, पर मिली नहीं।"

एक अध्यापक के नाते उसकी जो समस्याएँ हैं, उसने बाँट लीं।

'अ' ने बंगाली से माफी माँगते हुए कहा- स्कूल में मलयालम सीखना अनिवार्य नहीं था। इसलिए नहीं सीख सका।

'अ' खुश होकर सोचने लगा कि और किसी बात पर बातचीत करना ही सही लगेगा।

'अ' ने फिर पूछा- "राजनीति में रुचि है? मतलब ख़ास किसी दल में दिलचस्पी है"। बंगाली ने रास्ते पर रखे बड़े-बड़े लाल रंग के फ्लेक्स की ओर इशारा किया। तब "अ' ने पूछा-

"अब भी"?

"हमेशा के लिए।"

"सबसे बड़ा दुश्मन कौन है"?

"मुख्यमंत्री... आपका नहीं, हमारा"।

"दूसरे रास्ते पर जाकर घाट पार करके उस ओर पहुँच सकते हैं। उस तहसील में हड़ताल नहीं है" -कहते हुए बंगाली आगे चलने लगा, पीछे-पीछे मलयाली भी। हड़ताल वाले पूर्व दिशा की ओर, और विपक्षी दल वाले पश्चिम की ओर चलते हुए दिखाई पड़े। उस नुक्कड़ पर हड़ताल वाले मोटर साइकिल से आए पति-पत्नी को रोककर कुछ पूछ रहे थे। उस ओर ध्यान दिए बिना हम चलने लगे। परंतु उनके बीच का वाद-विवाद ज़रा बढ़ने लगा।

"किधर जा रहे हैं ?"

"गिरजाघर"

एक हड़ताल पक्ष वाले ने पूछा- "इस समय में गिरिजाघर।"

पति ने उत्तर दिया, "हाँ, हर समय वहाँ पूजा होती है, अत: खुला रहता है।"

"क्या चौबीसों घंटे गिरजाघर खुला रहता है"। हड़ताल पक्षधर आपस में इस बात की चर्चा करने लगे। किसी ने कहा हो सकता है। जो भी हो उसके बारे में ज़्यादा जानकारी न होने के कारण वह वाद-विवाद समाप्त हुआ, मोटर साइकिल रवाना हो गई।

हड़ताल पक्षधर एक पुलिया पर बैठकर सोडा पीने लगे। उनमें से कुछ लोग रास्ते के बीच अपने दल के चिह्न का चित्र पेंट से खींचने लगे। कुछ मोबाइल पर खेल रहे थे और एक बाल ठीक करके सेल्फी खींचकर फेसबुक में डालने की तैयारी में था।

मलयाली और बंगाली चलते-चलते थक गए। 'अ' के पास एक थैला है, वह उसमें से पानी का बोतल निकालकर पीने लगा। आख़िर दोनों संत पीटर के गिरजाघर के सामने पहुँचे। गिरजाघर खुला था। जलती मोमबत्तियाँ हवा के झोंके से बुझ रही थीं। हड़ताल वादियों से परेशान पति-पत्नी उधर मोमबत्ती जला रहे थे। 'अ' घुटनों पर खड़े होकर प्रार्थना करने लगा। फिर उधर से राख को लेकर अपने माथे पर उसने सूली का संकेत खींचा। बंगाली संत पीटर की मूर्ति के आगे यों खड़ा रहा, परिचित न होने के कारण उसने वंदना न की।

उधर से चल पड़े तो बंगाली ने पूछा-

"क्या कैथोलिक हो?"

"नहीं पात्रियारकीस"।

"मतलब?"

"पेट्रियारक ऑफ एन्टियोक' सुना है?"

"ज़रूर सुना है, ओटम आफ द पेट्रियारक" पढ़ा भी है।

सुनकर 'अ' सचमुच हैरान हो गया।

अगला प्रश्न क्या होगा, वह सोचने लगा।

"क्या रिलीजियस हो"? सुनकर उसने हामी भरी।

"और तुम"?

"लेनिन ने कहा कि सोशलिज़्म इज़ माई रिलीज्यन।"

'अ' ने चुप्पी साधी। स्टालीन और लेनिन ने क्या-क्या कहा था, ऐसे कितनों ने कितनी बातें कही होंगी, सब तो चले गए। उन बातों का पालन करके जीने वालों की परेशानी क्या मृत लोग जानते हैं? मृत ही संतुष्ट है। उसने फिर सोचा बंगाली से ज़रा दूर रहना ही अच्छा है। इतनी दूर चल कर भी मंज़िल पर नहीं पहुँचा है।

अचानक एक पेड़ की छाया से हड़तालवादी छलाँग मारकर आए। रास्ते के बीच खड़े हो गए। बंगाली ने मदद की। वह जल्दी 'अ' के पास आकर कुछ कहने के बहाने उसके माथे पे जो सूली का संकेत था, उसे पोंछ लिया।

"किधर जाते"?

'अ' ने जगह का नाम बताया।

हड़ताल वाला उपहास के सुर में कहने लगा-"उधर कैसे जा सकता है?"

"घाट के उस पार पहुँचने पर गाड़ी मिलेगी'।

"किसने कहा?"

बंगाली आगे आकर हिन्दी में कहने लगा-

"भाई ! मैं उस रास्ते को अच्छी तरह जानता हूँ।"

बंगाली के दाहिने हाथ में तीन तावीज़ें बाँधी हुई थीं। उसने हड़ताल वादियों को हाथ उठाकर वह दिखाया।

"अजनबियों को देखकर ही रास्ता रोक लिया था। ठीक है।" कहकर हड़ताल वादियों ने जाने दिया। ऐसे बंगाली ने मलयाली को बचाया।

मलयाली ने "थैंक्यू" कहा।

बंगाली लोग आमतौर पर बातूनी होते हैं। वह फिर पूछने लगा- जी बताइए "एक ही समय दो विरुद्ध अर्थ- देनेवाला मलयालम अक्षर कौन-सा है?"

"बोलो भाई।"

"बुरा मत मानों, यह सब मेरे बस की बात नहीं।"

बंगाली ने तुरंत कहा- 'अ' अक्षर।

उदाहरण के लिए कोई ईश्वर के अस्तित्व पर प्रश्न करता है, और उस पर उतना भरोसा न करने वाला 'अ...' कहेगा। किसी को पूरा भरोसा है तो तुरंत 'अ' कहेगा।

'अ' सचमुच अवाक् रह गया।

बंगाली ने अपनी बात जारी की। 'अ' दर्द का अक्षर भी है। परेशान मनुष्य के होंठ से पहले निकलने वाले शब्द भी 'अ' ही है। दुनिया का सबसे श्रेष्ठ शब्द भी 'अ' से ही शुरू होता है - 'अम्मा'। दोनों और भी बातें करने लगे। धूप या गर्मी का कोई असर उन पर नहीं पड़ा।

तुम अच्छे अध्यापक हो, कहते हुए मलयाली ने बंगाली का अभिनंदन किया। बंगाली के द्वारा मलयालम पढ़ाने की जो संस्था है, उस जगह से तो मलयाली परिचित था, परंतु वहाँ ऐसी एक संस्था है उसके बारे में उसे कुछ पता नहीं था।

'अ' कहने लगा- "मेरी बेटी आठ साल की है, मलयालम अक्षर ठीक तरह से जानती नहीं, मैं उसकी मदद भी नहीं कर सका"।

मलयाली को एक तरह का अपराध बोध महसूस हुआ।

मलयाली की बात सुनकर बंगाली ने उस दायित्व को खुशी के साथ स्वीकार किया। वह कहने लगा-"अगले हफ्ते कक्षा शुरू होगी। प्रारंभकर्ताओं के साथ बिठाएँगे। दो महीने के अंदर सब ठीक हो जाएगा।"

"इस धूप में क्यों निकलें?" फिर बंगाली ने पूछा

"लिखने के लिए।"

"क्या लिखने के लिए?"

"इधर दो हत्याएँ हुई न, उसका रिपोर्ट तैयार करने के लिए।"

"कौन-से पत्र में काम करते हैं?"

"पत्र के लिए नहीं, साप्ताहिकी के लिए।"

दोनों घाट के निकट पहुँचे।

'अ' सोचने लगा। ज़रूर उस पार गाड़ियाँ होंगी। इधर तो सब सूना-सूना है। पुराने ज़माने के खेत आज खेल के मैदान है। कैसे सूखे और जंगली हो गए हैं। उधर चार-पाँच मकानों के खंडहर।

एक काले घड़े पर सफेद पेंट से "काले नयन वाले इधर मत देख"लिखकर टंका गया था। "यह काले नयन वाला कौन है?" वह सोचने लगा। किनारे पर ही नाव खड़ी थी। मुस्कराते हुए व्हाट्सएप पर कुछ देख रहा था। उसने हमें देख लिया था, परंतु अनदेखा कर दिया।

"अरे, उस पार जाना है भाई।"

केवट सुने बिना फिर से व्हाट्सएप देखने लगा। एक साथ नौ संदेश।

फ़ोन पर चेहरे को दबाकर उसने कहा- "उस ओर नहीं चलेगा।"

"क्यों?"

"हड़ताल"

"हड़ताल में तो गाड़ियाँ ही नहीं चलती न?"

"क्या नाव गाड़ी नहीं है?"

'अ' परेशान हो गया। "अब क्या करेंगे?"

बंगाली ने मलयाली के लिए मलयाली से याचना की। "ज़रा उस पार पहुँचाइए।"

खेवट ने कहा- "उधर भी हड़ताल है।"

"कब से?"

"अरे ! हड़ताल के लिए कोई समय होता क्या?"

बंगाली ने वापस चलने का फैसला लिया। परंतु 'अ' वापस नहीं जा सकता था; क्योंकि इस पार और उस पार दो हत्याएँ, दो दल, संघर्ष, कैसे वह वापस जा सकता है!

बंगाली ने विदा लेते हुए कहा-"फिर मिलें।"

'अ' ने कहा- "अगले हफ्ते बेटी को लेकर आऊँगा।"

"बड़ी खुशी की बात है, ज़रूर आइएगा।"

जाते वक़्त बंगाली से नाम पूछा। तो उसने कहा- "कनू"

"क्या इसका मतलब कृपालु है?"

उसने हामी भरी।

"बहुत अच्छा नाम।"

बंगाली ने फिर पूछा-"क्या कानू सन्याल के बारे में सुना है? क्रांतिकारी... फिर फाँसी लगाकर मुत्यु।"

बंगाली क्षण भर के लिए सकपकाया, फिर चलने लगा।

केवट ज़ोर से फ़ोन पर बोल रहा था। जल मलिन हो गया था।

बंगाली ने आगे जाकर पीछे मुड़कर देखा।

'अ' उधर ही कुछ सोचकर खड़ा था।

फिर ज़ोर से बंगाली से पूछने लगा-"क्या कानू सन्याल को देखा है?"

"मेरे पिताजी उनके साथ थे, उनके शिष्य थे। सिलीगुड़ी में किसी ने उन पर गोली मारी, फिर उन्हें किसी ने देखा नहीं।"

सुनकर 'अ' दुखी हो गया। कानू सन्याल की परंपरा में आनेवाले के साथ उसने सेल्फी खींचा।

"मलयाली और बंगाली" - संगीत का जैसा दूसरे का स्वर शीर्षक देखकर फेसबुक पर डालने को सोची। बंगाली ने आख़िरी विदा ली।

'अ' बिलकुल अकेला हो गया। वह सोचने लगा जो मारे गए दो हैं एक इधर दूसरा उस पार। पहले इधर फिर प्रतिशोध में उधर।

'अ' ने संपादक को फ़ोन किया- "दोनों जगह हड़ताल। दोनों जगहों पर एक-एक मारा गया।"

उसकी बातें सुनकर संपादक ने पूछा- "तो फ़रियादी कौन है ?"

000

राम कौन?

डॉ. वंदना मुकेश

कोरोना काल हमारे जीवन का अत्यंत चुनौतीपूर्ण काल था। कोविड की भयावहता से डरे-सहमें हम अपने ही घरों में क़ैद हो गए। बहुत कुछ दुखद, अप्रीतिकर और अवांछित स्थितियों का सामना करना पड़ा।

उस दिन मन बहुत उदास हो रहा था। न जाने कितने विचार मन में निरंतर चलते रहते हैं। रामचरित मानस के अंतिम कुछ पन्ने पढ़ने रह गए हैं। निराशा में हमें भगवान् याद आते हैं और मुझे भगवान् के साथ-साथ मेरे गुरुजी डॉ. केशव प्रथमवीर, मेरे पीएॅच.डी गाइड। लगभग दो सप्ताह हो गए थे सर से बात नहीं हो सकी थी। तो, सुबह 10 बजे सर को फ़ोन लगाया यह सोचकर कि सर की उत्साह भरी, जिज्ञासा भरी आवाज़ सुनकर और फिर उनसे बातचीत कर के मेरे उद्विग्न मन को शांति मिलेगी और दूसरी बात यह थी कि वे कोरोना महामारी के इस आपद काल में आगरा के निकट अपने पैतृक गाँव दिगरौता में अकेले थे। लॉकडाउन के कारण पुणे वापस नहीं लौट सके। यों तो गाँव में भी उनका परिवार, प्रियजन भरपूर हैं किंतु उनकी नियमित उनका खोज-ख़बर लेना मेरी आदत में शुमार है। वैसे भी कभी सर से मेरा रिश्ता एकेडेमिक गाइड वाला नहीं रहा है। तो मैंने सोचा कि सर के हाल-चाल ले लूँ, उनसे राम के विषय में चर्चा करूँगी तो मन को शांति मिलेगी । फ़ोन लगाने पर दूसरी ओर से बड़ी कमज़ोर-सी 'हैलो' की आवाज़ सुनाई दी। मैं डर गई , कोरोना-काल में घर से दूर सर अकेले हैं... मैंने पुन: फ़ोन लगाया। फिर वही कमज़ोर –सी आवाज़।

मैंने पूछा, 'सर क्या हुआ, कैसे हैं आप?'

'अरे बेटी क्या बताऊँ, कल रात से पेट ख़राब है, कल से कुछ नहीं खाया है और कमज़ोरी बहुत ज़्यादा महसूस हो रही है। अभी लेटा हूँ, लेकिन तुम बात कर सकती हो।'

डॉ. वंदना मुकेश
35 ब्रुकहाउस रोड, वॉलसॉल, WS 5 3AE, इंग्लैंड
मोबाइल- +447886777418
ईमेल- vandanamsharma@hotmail.co.uk

उन्होंने बहुत ही क्षीण-सी आवाज़ में बताया।

फिर मैंने विस्तार से उनके हाल-चाल लिए, खाने-पीने संबंधित निर्देश दिये। फिर उन्होंने मेरी गतिविधियों के विषय में पूछा, तो मैंने उन्हें बताया कि पिछले तीन सप्ताह से मैं प्रति शनिवार 'ज़ूम' द्वारा दो संगोष्ठियों में सहभागिता कर रही हूँ- एक न्यूयॉर्क, अमेरिका से सॉफ्टवेयर इंजीनियर श्री अशोक सिंह द्वारा संयोजित मुशायरे में और दूसरी श्री ओम जी गुप्ता ह्यूस्टन अमेरिका द्वारा संयोजित 'राम कौन' परिचर्चा में। साथ ही मैंने यह भी मैंने बताया कि मैं पिछले एक माह से तुलसीकृत रामचरितमानस का साहित्यिक दृष्टि से अध्ययन कर रही हूँ, इसलिये राम पर चर्चा में भाग लेना अच्छा लगता है।

तो अपने स्वभाव के अनुसार उन्होंने जिज्ञासा दर्शाई और उसी क्षीण आवाज़ में मुझसे बड़े स्नेह से पूछा, 'तो फिर बेटी बताओ मुझे कि राम कौन हैं?'

मैं इस अकस्मिक प्रश्न के लिये तैयार नहीं थी तो बोली, 'क्या सर आप भी.. आप तो सुबह-सुबह मेरी परीक्षा ले रहे हैं? (इंग्लैंड में सुबह थी)'

'अरे बताओ तो सही, कि तुम क्या सोचती हो?' उन्होंने पुन: पूछा।

मैंने सोचा, कि बच्चू अब तो तुम फँस ही गई हो तो उतर ही पड़ो मैदान में। ग़लत उत्तर हो या सही, अपने तो दोनों हाथों में लड्डू ही रहेंगे। सो मैंने मन ही मन जय श्री राम कहा और अपने 'राम' के बल पर 'राम' की अपनी परिभाषा सर के सम्मुख रखी।

'हम्मम.. तो सर मेरी दृष्टि में राम हमारे जीवन का वह तत्व है जो हमें जीवन में जो कुछ सुंदर , कल्याणकारी और ललित है वह करने की प्रेरणा देता है, उत्साहित करता है। एक साधारण भारतीय के लिये राम भगवान् हैं, और यही वह राम हैं जिनकी कथा के माध्यम से महाकवि तुलसीदास ने भारतीय संस्कृति को व्याख्यायित करनेवाला सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य लिख डाला। जो....'

मैं आगे बोलती किंतु मेरे उत्तर को सही दिशा में जाते देख, वे संतुष्ट थे। लेकिन उनके

पास राम के विषय बताने के लिये बहुत कुछ था सो वे सहज ही मुझे टोकते हुए बोल उठे, 'हाँ..., और तुम्हें पता है कबीर ने राम के विषय में क्या लिखा है, सुनो'-

'एक राम दशरथ का बेटा, एक राम इनहुँ से हेठा

एक राम का जगत् पसारा, एक राम इनहूँ से न्यारा'

'तो बेटी, वह कौन से राम हैं, दशरथ वाले कि दूसरे, तीसरे या चौथे। हमारे गाँवों में 'राम-राम' कर अभिवादन करते हैं, राम-नाम से अंतिम विदा करते हैं। दरअसल, यह उस दशरथ के बेटे राम में जो राम है, वही राम-नाम हमारे तन-मन, हमारी साँसों में बसा है।'

'वाह, वाह! सर, क्या बात कह दी आपने!' मैं गद्गद् हो गई। मैंने मंत्रमुग्ध भाव से कहा, 'सर क्या बात है, वाह! मैं कहाँ से लाऊँ आपका-सा ज्ञान और आपकी-सी अभिव्यक्ति? मज़ा आ गया, आपने कितने संक्षिप्त, सुंदर और सटीक शब्दों में अपने मेरे और सबके राम की व्याख्या कर दी, जय हो गुरु जी आपकी।'

अपने चिर-परिचित, किंतु अभी-भी, कमज़ोर हँसी के साथ बोले , 'किसी ने कहा है न-

'कहाँ से लाएगा क़ातिल, ज़बाँ मेरी, बयाँ मेरा' और हँसने लगे। मैंने भी उनकी हँसी में हँसी मिलाते हुए एक और दाद दी। तब तक उन्होंने एक और चौका लगा दिया।

'अरे, बृज में कहावत भी तो है- गीत लै जायगी, राग कहाँ से लावेगी।'

प्रथमवीर सर बृज भाषा के प्रकांड विद्वान हैं। वैसे तो उनसे जीवन और जगत् संबंधी कोई भी चर्चा करने पर आप समृद्ध ही होते हैं। लेकिन मध्यकालीन काव्य की अर्थ –छटाओं को वे जिस प्रकार व्याख्यायित करते हैं, वह किसी भी दृश्य को आपके सम्मुख सजीव कर देने की सामर्थ्य रखता है। इसका कारण सिर्फ बृज क्षेत्र से उनका संबंधित होना मात्र नहीं है। वे गहन अध्ययनशील हैं यह तो हम सभी जानते हैं किंतु उनके भीतर जो गाँव जीवित है उसके कारण किसी बात पर उनकी टिप्पणी पांडित्य से बोझिल न होकर इतनी सहज और रसमय होती है कि उस पल तो आप को भी यह भ्रम होने लगता है कि मध्यकालीन काव्य पढ़ना-समझना तो चुटकियों का खेल है। लगभग छ: सौ वर्ष पुरानी भाषा की बारीकियों को जनाना-समझना और याद रखना कोई सरल बात नहीं है। और तो और उसे सरल बनाकर बड़े आत्मीय ढंग से समझाना ही सर का वैशिष्ट्य है। फिर एक व्याख्या नहीं, अनेकों नए-पुराने संदर्भों से संयुक्त कर बताते हैं तो समझ में यह नहीं आता कि किस बात पर प्रंशसा करूँ- उनके विशद् अध्ययन की या उनकी रसीली सहज ग्राह्य शैली की। सर अपनी स्मृति और अपने संचित अनुभव-कोष से आपको मालामल कर देते हैं। मुझे उस आनंद-सागर में फ़ोन पर ही जब-तब सराबोर होने का सुख प्राप्त है।

हमारी बातों में रवानी आ रही थी, उनके स्वर की क्षीणता भी किंचित कम हुई थी और मैं तो मस्त हो ही रही थी। अब तो तार छिड़ चुके थे। अब तो अमृत ही अमृत झरना था। वे कह रहे थे-

'देखो बेटी, मृत्यु होने पर हमारे लोक में कहते हैं न, राम निकर गया; अर्थात् हमारी प्राण-शक्ति चली गई। हमारा आत्मविश्वास ही हमारा राम है कितनी भी कठिन परिस्थिति हो, यह राम हमें यह विश्वास दिलाता है कि यह निराशा, यह हताशा जीवन का एक पड़ाव है। यह निकल ही जाएगा। ऐसी बात हमें धैर्य बँधाती है। यह राम हमें उस मनोभूमि में पँहुचाता है जहाँ इंद्रिय- धर्म से ऊपर आत्मिक

आनंद की अवस्था में पँहुचा जा सकता है। बेटी हमने ही स्वयं को इस माया-जाल में उलझा रखा है। सूरदास कह गए हैं न कि-

'सूरदास नलिनी के सुअना तोये कौन पकरयो।'

मैं इसका अर्थ नहीं लगा सकी। मैंने कहा, 'सर मुझे मतलब नहीं समझ में आया, अर्थ समझाइए।'

'अरे वह पुराने समय में बहेलिया तोते को पकड़ने के लिये एक नली से अमरूद और मिर्ची बाँध कर वृक्ष की डालियों में अटका देता। उसे देख कर तोता यह समझता कि फल उसी वृक्ष का है और उस पर अपना पंजा जमा देता। जैसे ही वह उस पर बैठता तो नली पलट जाती लेकिन उलटा हुआ तोता उस अमरूद को नहीं छोड़ता, अपने पंजे उसमें गड़ाए रखता है। उसे लगता है कि उसने छोड़ा और वह गिरा। तो सूरदास कहते हैं कि तुझे किसने पकड़ कर रखा है तू स्वयं ही नहीं छोड़ रहा है, छोड़ देगा तो भी तो बच सकता है... यही स्थिति हम सबकी है। समस्याओं को हम पकड़कर बैठे हैं, हम ही नहीं छोड़ना चाहते।'

'वाह, सर वाह! इस पंक्ति को इस तरह आज कौन-सा हिंदी का शिक्षक समझा सकेगा ? कवि ने जो सुंदर बिंब रखा है यदि आप नहीं समझाते तो मैं इस पंक्ति के इस सौंदर्य को समझने से वंचित रह जाती। आपने वास्तविक चित्र खींच दिया।'

सर की क्षीण आवाज़ अब कुछ बलवती हो चुकी थी वे बड़े सहज और नम्र भाव से बोले , 'बेटी तुम तो जानती हो पच्चीस साल की आयु तक तो मैंने हल चलाया है। तो शिक्षक बनने पर, कक्षा में छात्रों का सामना करने के लिये बहुत पढ़कर, तैयारी से जाता था कि कहीं ऐसा कुछ नहीं कह दूँ जिससे बाद में छात्र मेरी खिल्ली उड़ाएँ।'

उन्होंने अंजाने में एक अच्छे शिक्षक का गुर बता दिया था। सर के सम्मुख जिज्ञासा रूपी एक छोटी-सी चिंगारी छोड़ दीजिये और फिर ज्ञान-रूपी अग्नि के ताप से अपनी संशय रूपी ठंड का पूर्ण निवारण कर लीजिए। सर जब तक मेरे पीऍच.डी गाईड थे तब तक तो सिर्फ अपनी थीसिस पूरी करना ही प्रमुख ध्येय

था। किंतु पीऍच.डी के बाद जब वे हमारे बच्चों के प्रिय नानाजी बन गए, आंटी के कारण आत्मीयता बढ़ती गई और अपने पापा के देहांत के बाद तो मैंने उन्हें मन ही मन गुरु से पापा बना लिया। सर के बच्चे सर को पिताजी कहते हैं। पर मुझे सर को सर ही कहने की आदत है किंतु अब कभी-कभी बातचीत में अचानक मैं भी उन्हें पिताजी कहकर संबोधित कर दूँ, तो मुझे पहले -सा संकोच नहीं होता।

अपने पिताजी को मैं पापा कहती थी। मेरे पापा में भी एक उत्कृष्ट साहित्यकार के गुण थे। पापा की ग्रहण-शक्ति भी अद्‌भुत थी। वे बहुत पढ़ते थे, बहुत अच्छी कविताएँ लिखते थे, आशुकवि थे, लेकिन उनकी ज़िम्मेदारियों और परेशानियों के कारण उनका साहित्यिक पक्ष दब कर रह गया। और संकोची स्वभाव के कारण कहीं उनके मन में यह था कि साहित्यकार एक अलग जाति होती है। सच बात तो यही है कि तब साहित्यकार और आज के साहित्यकारों में ज़मीन-आसमान का अंतर है। साहित्य में व्यापी मूल्यहीनता पर अलग चर्चा हो सकती है। ख़ैर, मेरे पीऍच.डी करने के दौरान मेरा पापा आयकर अधिकारी के पद से रिटायर होकर, मम्मी के साथ मेरे बच्चों को सँभालने आते थे और मेरे लिये एक क्लर्क बन कर मेरे निर्देश में काम करते थे। प्रथमवीर सर से जब उनका परिचय हुआ तो शुरुआत से ही उनमें एक विशिष्ट प्रकार का मित्र-भाव उत्पन्न हो गया जो समय के साथ प्रगाढ़ होता गया। पापा ग्वालियर से थे और सर आगरा से, दोनों लगभग एक ही प्रदेश-बृज से संबंध रखते थे। इसलिये वहाँ की बोली-बानी, भाषायी मुहावरों और वक्रोक्तियों आदि का साथ-साथ आनंद लेना, हँसी-ठठ्ठा करना मुझे परम सुख देता था और कभी-कभी आश्चर्य में डाल देता था।

सर, मैंने रामचरिचमानस में ऐसे पैंतीस –चालीस शब्द पाये जिनका अर्थ अब बदल गया है जैसे- मंदिर, नाग, खेद , ...इत्यादि, मैंने एक सूची में से कुछ शब्द उन्हें सुनाए।

वे गद्‌गद् हो गए, बोले,-बेटी रामचरित मानस पर इस तरह के बहुत से काम हुए हैं, कई शोध हुए है, तुम्हें जानकर आश्चर्य होगा कि रामचरितमानस पर पहला शोध भी किसी भारतीय ने नहीं, बल्कि किसी यूरोपियन ने किया था। हालाँकि मैंने पूरी रामचरितमानस धार्मिक दृष्टि से कभी नहीं पढ़ी है और पढ़ी भी है तो वह सिर्फ एम. एम के छात्रों को पढ़ाने के लिये। लेकिन देखो, इससे भाषा समृद्ध होती है। और आप तो स्वयं भाषा विज्ञान की छात्रा रही हैं। मैंने कहा, इसलिये तो सर, और भी आनंद आ रहा है कि कालांतर में शब्दों के अर्थ किस प्रकार बदल जाते हैं। एक बार गुरु जी पुन: मुझ पर प्रसन्न हो गए थे।

'जी, हाँ, तो सर मैं कह रही थी कि, आज के रामचरिचमानस पाठ में उत्तर कांड का वह प्रसंग है जिसमें रामराज्य स्थापित होने पर राम संत और संत का भेद लक्ष्मण,भरत, शत्रुध्न और हनुमान को बताते हैं। मुझे तो चौपाई याद नहीं थी लेकिन मेरे कुल्हाड़ी और चंदन वृक्ष... कहते ही सर ने मूल चौपाई ही सुना दी-

संत असंत कै असि करनी। जिमि कुठार चंदन आचरनी।।

काटई परसु मलय सुनु भाई। निजगुन देइ सुगंध बसाई।।

मैंने फिर चमत्कृत होते हुए टिप्पणी की, कि वाह, सर, रामचरितमानस पढ़ मैं रही हूँ और चौपाई आपको याद है। आप तो कहते हैं कि आपने पूरी रामचरितमानस कभी नहीं पढ़ी किंतु मैं कहीं से भी कुछ बोलूँ या बताऊँ, आप मूल पाठ के साथ उसे इस प्रकार व्याख्यायित

कर देते हैं जैसे पूरा पाठ कंठस्थ हो।

वे सहजता से कह गए, 'और हमने जीवन भर किया ही क्या है?'

फिर मैंने उन्हें अपने नए प्राप्त ज्ञान के आधार पर बताया कि सर रावण के अंत समय पर हम लोग सुनते थे कि राम, लक्ष्मण को रावण के पास प्रबोधन के लिये भेजते हैं लेकिन तुलसी रामायण में नहीं हैं।

अच्छा बेटी,तो संभव है कि वह वाल्मीकि रामायण में होगा। फिर बोले, बेटी, हमारे शास्त्रों में यही कहा गया है कि अपने संचित ज्ञान को जीवन रहते आगे बढ़ा दो वरना उस ज्ञान का कोई लाभ नहीं।

फिर हँसते हुए सर ने पूछा कि तुमने मुक्तिबोध की कहानी 'ब्रह्मराक्षस' पढ़ी है क्या? मैंने कहा, नहीं, पढ़ लूँगी । किंतु आप सुनाइये न। फिर सर ने संक्षिप्त में 'ब्रह्मराक्षस' का सार बताया और हँसते हुए बोले कि भाई, मुझे बह्मराक्षस नहीं बनना है और इधर मैं भी साथ-साथ बोल पड़ी, कि मैं आपको ब्रह्मराक्षस नहीं बनने दूँगी। हम खूब हँसे।

दरअसल उनकी क़िस्सागोई की कला में तो मज़ा आता ही है, लेकिन उससे भी ज़्यादा मज़ा इस बात में आता है कि अब मैं उनका मंतव्य बात शुरू होने के साथ ही समझ जाती हूँ और सर के साथ मुक्त कंठ से हँसती हूँ, ठीक वैसे ही जैसे, मैं अपने पापा के साथ जी भर कर हँसती थी। एक पल के लिये मेरे मन में एक स्वार्थी सोच पैदा हुई, कि यदि सर ब्रह्मराक्षस बनें और बस मेरे पास ही रहें तो ज्ञान की अजस्र धारा सतत बहती रहे, यह बातों का सिलसिला चलता रहे। उसे झटका। स्वयं को मन ही मन डाँट लगाई कि यही पढ़ रही हो वंदना रामचरितमानस में....।

और सर, अंत में रावण भी राम कहकर जाता है, इसी प्राकर मारीचि, कुंभकर्ण इत्यादि भी राम –नाम लेकर ही देह के बंधन से मुक्त होते हैं। मैंने सर से कहा कि अगले प्रंसग में पार्वती की कागभुशुंडि के संदर्भ में शंका का निवारण होगा। जिसमें पार्वती जी शंकर भगवान् से पूछती हैं कि यदि मनुष्य काल, गुण, धर्म और स्वभाव के अनुसार चौरासी लाख योनियों में भटकता रहता है और बहुत मुश्किल से उसे दुर्लभ मनुष्य योनि मिलती है फिर उसमें से भी करोड़ों में से किसी एक को राम भक्ति मिलती है तो कौए जैसे निकृष्ट प्राणी को राम भक्ति कैसे मिली ?

सर बोले, तुमने लोक की यह कहावत सुनी है, 'अंत मता सो गता'।

मैंने कहा, 'नहीं, मुझे पता था कि अब बाबा की पोटली से कुछ और निकलने वाला था।'

वे बोले, अरे, 'अंत मता सो गता' का अर्थ है कि अंत में जैसी मति होगी वैसी गति होगी। अच्छा लोक में प्रचलित यह कहानी सुनाता हूँ।

मैं सजग हो गई, हाँ, सुनाइए। कहानी शुरू हुई।

एक गाँव में एक साधु रहता। वह देशाटन पर जाना चाहता था। साधुओं के पास कुछ सामान तो होता नहीं है, सो उसके पास भी विशेष कुछ सामान तो था नहीं, बस एक बिस्तर था, सो उसने बाँध कर गाँव के ही एक व्यक्ति के घर यह कह कर रख दिया कि छ: माह बाद जब लौटूँगा, तब ले लूँगा। उस व्यक्ति ने वह बिस्तर उसी भाँति छत से लटका दिया। बिस्तर लटके-लटके डेढ़ वर्ष से ज़्यादा का समय बीत गया। तब उस व्यक्ति ने आसपास गाँव के जो साधु थे उनसे पूछताछ की कि वे साधु महाराज कहाँ हैं अब तक नहीं लौटे, उनका कुछ सामान मेरे पास रखा है । तब तीर्थ करके लौटे किसी साधु ने बताया कि उन साधु महाराज का तो कुछ माह पूर्व ही देहांत हो गया। अब यह आदमी बड़े असमंजस में पड़ गया। तब उसने साधुओं की जमात को कहा कि महाराज उन महाराज का बिस्तर मेरे पास है मैं चाहता हूँ कि आप उसे ले जाएँ । तब साधुओं ने कहा कि वह तुम्हें दे गए तो सामान अब तुम्हारा ही है, तुम उसे खोलो और देखो कि क्या है उसमें? तब उस आदमी ने उस बिस्तरे की रस्सी खोली तो उसमें एक चादर में लिपटा कुछ था। फिर चादर खोली तो एक बाँध के रखी हुई थैली निकली। फिर उस थैली को खोला गया तो उसमें से एक छोटा बटुआ निकला, फिर उस बटुए को खोला गया तो उसमें एक छोटी- सी डिब्बी निकली।

मेरी जिज्ञासा भी बढ़ रही थी, क्योंकि मैं अब तक नहीं समझ पा रही थी कि इस कहानी के अंत में कौन सी सीख होगी।

'तो बेटी, जब उस डिब्बी को खोला गया तो उसमें से दो चीज़ें उछल के गिरीं। एक तो कुछ मटमैला सा, गोल-गोल सोने का सिक्का, और दूसरा सफेद रंग का एक छोटा-सा सँपोला (साँप का बच्चा)। वहाँ खड़े सभी साधु बोले अरे, मरते समय साधु का ध्यान इस सिक्के पर था इसलिये उसकी यह गति है कि मर कर वह उसकी रक्षा करने आ गया। यही तो है 'अंत मता सो गता'।

सो बेटी, रावण हो, मुक्तिबोध का ब्रह्मराक्षस हो या वह साधु, अंत समय जिसका मन जहाँ अटका हो उसी के अनुसार उसकी गति होती है। यही है 'अंत मता सो गता'।

एक बार फिर मेरा मन वाह, वाह बोल उठा।

मुझे लगा कि सर से अस्वस्थता के बाद भी कुछ लंबी चर्चा हो गई। मुझे ग्लानि हुई। मैंने कहा,- सर क्षमा चाहती हूँ। दरअसल.....

बेटी, बीमार तो मैं हूँ ही, लेकिन तुमसे बात कर के मुझे अच्छा लगा, फ़ोन कर लिया करो।

सर की आवाज़ तो कमज़ोर ही थी लेकिन उसमें उत्साह और प्रसन्नता का पुट आ गया था।

फ़ोन पर हुए इस वार्तालाप से मैं मध्यकालीन काव्य की बारीकियों, कई कहानियों, क़िस्सों और दोहे चौपाइयों से समृद्ध हो कर निकली थी। मुझे लगा यही वह राम तत्त्व है। जो हमारे निराश मन को आशा से भर देता है, उसे आह्लादित कर देता है। जीवन में सत्य, सुंदरता, प्रेम और करुणा का संचार करानेवाले हैं राम।

रामचरितमानस के पारायण के बाद और सर द्वारा पूछे गए प्रश्न से मैं इसी निष्कर्ष पर पँहुची कि मनुष्य जन्म की सार्थकता उसी दशरथ के बेटे, राम में बसे राम को पाने की है...।

000

नीलांजल मॉरीशस

चौधरी मदन मोहन "समर"

मॉरीशस का नाम आते ही एक छोटा सा, किन्तु बेहद ख़ूबसूरत देश जहाँ भारत का दिल बसता है, मस्तिष्क में कौंध जाता है। हिंद महासागर के अफ्रीकी छोर पर बसा यह द्वीप अपनी संस्कृति और हिन्दी के कारण छोटा भारत है। कभी डच फिर फ्रेंच और फिर अंग्रेज़ों के कब्ज़े में रहने के बाद सन् 1968 में यह आज़ाद हुआ। गन्ने की खेती के गिरमिटिया मज़दूरों के रूप में बिहार से गए भारतीयों ने इस द्वीप पर अपने पसीने को ऐसा सींचा कि यह धरती महक उठी, अपने घरों से दूर ले जाने के लिए अंग्रेज़ों ने उन्हे बरगलाया था कि मॉरीशस का जो पत्थर पलटोगे उसके नीचे सोना निकलेगा। पत्थर के नीचे सोना मिलना तो स्वप्न ही था, लेकिन धरती के आँचल पर शक्कर की मिठास में इन गिरमिटिया मज़दूरों ने अपनी मेहनत बो दी। उन मज़दूरों की संतानों ने आज मॉरीशस को अफ्रीकी महाद्वीप का सबसे अधिक प्रतिव्यक्ति आय वाला देश बना दिया है, पत्थर के नीचे से सोना निकाल कर नहीं बल्कि अपने पसीने से मिट्टी को तर कर। आज यह सोने की चिड़िया ही तो है। दोनों द्वीप मॉरीशस के, सेट ब्रेंडन, रॉड्रीगज़ व अगालेगा द्वीप मिलकर मॉरीशस गणराज्य होता है। जिसमें मॉरीशस द्वीप मुख्य और सबसे बड़ा द्वीप है। बिल्कुल हमारे अंडमान निकोबार की तरह।

हर यायावर भारतीय के मन में एक बार मॉरीशस देखने का भाव उसी तरह पल रहा होता है जैसे वह गंगा जाकर उसकी निर्मल धारा को छूने की लालसा रखता है। हो भी क्यों न। हम भारतीयों को पता है कि मॉरीशस की धरती में भारत की सुगंध रची-बसी है। मान्यताएँ, भाषा, रहन-सहन, खान-पान सब भारतीय। फिर समुद्र की अठखेलियों के साथ गन्ने की खेती के क़िस्से जिन्हें हम बचपन से सुनते आए हैं।

अभी कुछ दिन पहले ही तो पुत्रवधु श्रुति अपने व्यावसायिक दौरे पर मॉरीशस गई थी। वहाँ के चित्र वह लगातार हमें भेज रही थी। मुझे लगता था कि जैसे वह धरती मुझे टेर रही है और कह रही है एक बार यहाँ आकर देखो तुम्हें समुद्र के बीच बसा यह भारत याद कर रहा है।

भारतीय सांस्कृतिक सम्बंध परिषद् की ओर से जब मुझे बताया गया कि मेरा चयन 18 से 20 अगस्त, सन् 2018 तक मॉरीशस में होने वाले ग्यारहवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में कविता पाठ के लिए किया गया है, तो मेरे लिए यह अत्याधिक प्रफुल्लता का छण था। एक तो विश्व हिन्दी सम्मेलन में भाग लेना, और दूसरा मॉरीशस की यात्रा, दोनों ही मेरे लिए महत्त्वपूर्ण थे। हालाँकि भोपाल में आयोजित दसवें विश्व हिन्दी सम्मेलन में भाग लेने का अवसर भी मुझे मिला था, किंतु वह मेरे अपने शहर में था और हम लोग मेज़बान की भूमिका में अधिक थे। सम्मेलन के अंतिम दिन जब कवि सम्मेलन होना था तो मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले में पेटलावद क़स्बे में हुई विस्फोट की दु:खद घटना के कारण कवि सम्मेलन निरस्त होने से हम कवियों का काव्यपाठ नहीं हो सका था। अब पुन: विश्व स्तर पर, वह भी अपने देश से बाहर देश के प्रतिनिधि के रूप में चयनित होना मेरे लिए सम्मान का विषय था। मेरे मिलने-जुलने वालों में मेरी प्रतिष्ठा की वृद्धि होना स्वाभाविक ही था।

हर भारतीय की तरह मॉरीशस मुझे सदा से आकर्षित करता रहा है। मैं जब स्कूली विद्यार्थी था मॉरीशस के प्रधानमंत्री सर शिवसागर रामगुलाम भारत आए थे। तब अख़बारों में इस यात्रा को बहुत सम्मान के साथ स्थान मिला था। मेरे मन में तभी मॉरीशस के प्रति सम्मानजनक भाव जाग्रत हो गए थे। इस प्रकार मेरे दो दिवा स्वप्न साकार हो रहे थे।

लेकिन यहाँ भी विधि का विधान सामने आ गया। विश्व हिन्दी सम्मेलन के संस्थापक आधार व देश के लोकप्रिय प्रधानमंत्री रहे हिन्दी कवि श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी के स्वर्गवास का

चौधरी मदन मोहन "समर"
16, श्रीहोम्स
चूनाभट्टी कोलार रोड
भोपाल (मध्यप्रदेश)-462042
मोबाईल: 9425382012, 7000479808
ई-मेल- shabdupasna@gmail.com

दु:खद समाचार हमें हवाई अड्डे पर प्राप्त हुआ। पूरे देश क्या, विश्वभर में शोक लहर छा गई। अब सम्मेलन का पूरा आयोजन शोक के साये में होने वाला था।

हमारे दल में श्री बलवीर सिंह करुण जी, आचार्य देवेन्द्र देव जी, श्री ध्रुवेन्द्र भदौरिया जी, भाई गजेन्द्र सोलंकी जी, सुरेश अवस्थी जी, श्रीमती सरिता शर्मा जी, श्रीमती मधुमोहनी जी, व श्रीमती सुमन दुबे जी सहित दस लोग थे। श्री सुरेन्द्र दुबे जी छत्तीसगढ़ के दल के साथ जाकर हमें पोर्ट लुईस में ही मिलने वाले थे।

हमारी अन्तर्राष्ट्रीय उड़ान चेन्नई से 17 अगस्त को सुबह सात बजे मॉरीशस के लिए थी। जबकि हम दिल्ली से चेन्नई 16 अगस्त की रात 11 बजे ही पहुँच गए थे। यहाँ पर आज बहुत भीड़ थी। मॉरीशस जाने वाले यात्री ज़्यादा थे। अनेक प्रतिनिधि अपने-अपने समूह में विश्व हिन्दी सम्मेलन में जाने के लिए चेन्नई में एकत्र हुए थे। भारतीयों के साथ अनेक अन्य देशों के प्रतिनिधि भी वहाँ मौजूद थे, जहाँ से मॉरीशस की सीधी उड़ान नहीं थी। हमारा परिचय अनेक विभूतियों से हो रहा था। हिन्दी और हिन्दी की स्थिति पर बात करना केन्द्रीय विषय था। हमें चेन्नई हवाई अड्डे पर साढ़े आठ घंटे का लम्बा और थका देने वाला इंतजार करना था। ऐसे में सरिता शर्मा जी की युक्ति बहुत काम आई और हम सभी ने अभिजात्यता त्याग कर एक सुरक्षित स्थान तलाश बेहतरीन नींद निकाल ली।

भारतीय समय अनुसार सुबह 7 बजे चेन्नई से हमारी एयर मॉरीशस से पोर्ट लुईस के लिए उड़ान भरी। क्रू मेम्बर ने जब यह घोषणा की कि हम कुछ ही समय में पोर्ट लुईस में उतरने वाले हैं और हवाई जहाज़ बादलों की तह को हटा नीचे आने लगा तो मेरी नज़रें बरबस उस धरती की तरफ चली गईं जिसे देखना मेरे लिए उत्सुकता का विषय था। चारों तरफ नीले समुंदर से घिरे इस द्वीप की हरितिमा ने गगन में ही हमें सूचित कर दिया कि यह धरती किसी दुष्यंत की शकुंतला से कमतर नहीं होगी। प्रसिद्ध लेखक मार्क ट्वेन ने कहा था कि- "ईश्वर ने पहले मॉरीशस

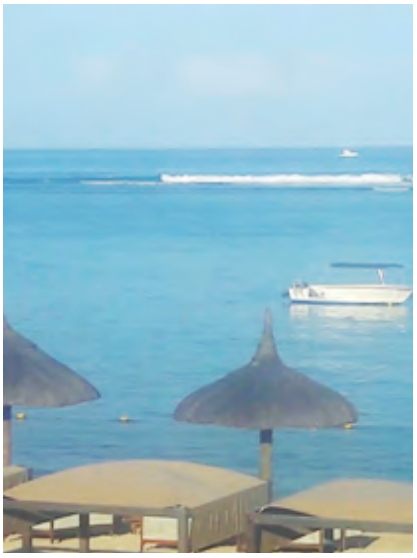

बनाया और फिर उसमें से स्वर्ग की रचना की" गन्ने के खेत, छोटी किन्तु खड़ी ख़ूबसूरत पहाड़ियाँ, नीलांजल सागर की जलधि तरंगें, धवल रेत के चमचमाते हुए सागर के किनारे, सौंदर्य की इस धनवान अनुपम कृति को हम व्योम से निहार रहे थे। हम मॉरीशस के समय अनुसार करीब साढ़े दस बजे सुबह पोर्ट लुईस उतरे। मॉरीशस का समय भारतीय समय से एक घंटा तीस मिनट पीछे है। पोर्ट लुईस हवाई अड्डे पर हिन्दी के सम्मान में जगह-जगह विश्व हिन्दी सम्मेलन में भाग लेने आए प्रतिनिधियों के स्वागत के लिये होर्डिंग्स लगे हुये थे। लेकिन जिस बात ने प्रभावित किया वह थी हवाई अड्डे पर स्थाई रूप से दिशा निर्देश अंग्रेज़ी फ्रैंच व हिन्दी में लिखे थे, अर्थात् यह स्पष्ट था कि हिन्दी वहाँ की अधिकृत भाषा है।

आगमन की समस्त ज़रूरी अन्तर्राष्ट्रीय औपचारिकताओं के पश्चात् हम एयरपोर्ट से बाहर आए तो वहाँ भारतीय सांस्कृतिक एवं सम्बंध परिषद् की ओर से दल के स्वागत व मार्गदर्शक के रूप में तुलसी देवी जी जो मॉरीशस क्रियोल हैं व वंदना गौतम जी जो भारतीय सांस्कृतिक परिषद् दिल्ली से विगत 6 माह पूर्व स्थानान्तरित होकर मॉरीशस आई थीं, उपस्थित थीं। हमारी मुलाकात सहयात्री को रूप में फिजी के शिष्टमंडल में शामिल श्वेता जी, अशोक बालगोविंद जी और नेमानी जी से हुई। नेमानी जी फिजी मूल के हिन्दी के विद्वान हैं। इस तरह पूरी दुनिया में हिन्दी को चाहने वाले मॉरीशस के मेहमान बने थे।

तुलसी जी व वंदना जी ने हमें बताया कि हमें सबसे पहले इंदिरा गाँधी सांस्कृतिक केंद्र चलना है, जहाँ हमारे लिए स्वागत भोज का आयोजन है। हमारी आरामदायक मिनी बस हवाई अड्डे से निकलकर मॉरीशस की सड़कों पर दौड़ रही थी, मेरा मन-मस्तिष्क इन सड़कों से दूर तक बिछी हुई भारतीयता को देख आनंदित हो रहा था। अटल जी के देहान्त के कारण भारत में राष्ट्रीय शोक था। जिसकी वजह से तिरंगा गमगीन होकर आधा झुका था। मॉरीशस के हर चौराहे पर तिरंगा व मॉरीशस का ध्वज लगाया गया था। तिरंगे के झुके होने के कारण मॉरीशस ने अपना ध्वज भी आधा झुका कर हमारे शोक में अपनी संवेदना प्रकट की थी।

हम सड़क पर चलते हुए देख रहे थे, बड़े-बड़े खेत, उनमें लहराती हुई गन्ने की फसल तथा वहाँ काम करते हुए लोग, जो ढाई सौ साल पहले भारत से यहाँ आए गिरमिटिया मजदूरों के पसीने की कहानी के स्वर्णिम पृष्ठ सहेजे हुए थे। सड़कें बिल्कुल साफ-सुथरी व ट्रैफिक पूरी तरह से अनुशासित। मेरे मन में जो कोतुहल जागा वह स्वभाविक था। मॉरीशस में 68 प्रतिशत भारतीय हैं, किन्तु जिस अनुशासन के साथ उन्होंने स्वयं को वहाँ स्थापित किया है, भारत में हम क्यों नहीं कर सकते? वाहनों का संचालन निर्बाध था और नियम अटूट थे।

मार्ग में हमने महात्मा गाँधी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय का बड़ा सा भवन देखा, जो हमें बता रहा था कि, हमारे गाँधी जी का यहाँ कितना सम्मान है। मैं यह देखकर चौंक गया कि मॉरीशस में इंडियन ऑयल और हिन्दुस्तान पैट्रोलियम के पैट्रोल पम्प बिल्कुल भारतीय तरीके से कार्यरत हैं। रास्ते में पड़ने वाले गाँवों के बारे में तुलसी जी बताती जा रहीं थी, गाँव भी विकसित व स्वच्छ थे। जबकि वहाँ स्वच्छ मॉरीशस जैसा कोई नारा या स्लोगन लिखा हुआ दिखाई नहीं दे रहा था अर्थात् स्वप्रेरणा से स्वच्छता स्थाई थी।

लगभग पैंतालीस मिनट में हम इंदिरा गाँधी भारतीय सांस्कृतिक केंद्र, स्वामी शिवानंद एवेन्यू, फीनिक्स, पोर्ट लुईस, मॉरीशस पहुँच

गए, जहाँ संतुष्टि भोजनशाला में हमारे लिए विशेष रूप से भोजन की व्यवस्था थी। पहले तो हम सभी ने भोजन का आनंद लिया, फिर हमारी भेंट पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार केंद्र निदेशिका आचार्या प्रतिष्ठा देवी जी से हुई। प्रतिष्ठा जी योगाचार्या हैं व मूलरूप से सहारनपुर की हैं। मुख मण्डल पर तेज व गहन-गम्भीर वैचारिक आभा-मण्डल, किन्तु सहज व्यक्तित्व की धनी प्रतिष्ठा जी ने इस केन्द्र व भारतीय संस्कृति का मॉरीशस में प्रभाव पर चर्चा की। इस केंद्र की स्थापना सन् 1987 में की गई थी। यह भवन भारतीय वास्तुकला का अनूठा नमूना है। मुख्य द्वार पर स्वर्गीय इंदिरा गाँधी जी की प्रतिमा स्थापित है। कला व योग के लिय केन्द्र सक्रिय भूमिका में है। इस केन्द्र का विशाल पुस्तकालय है जिसमें भारतीय कला, संस्कृति व इतिहास की दस हजार से भी अधिक पुस्तकें मौजूद हैं। एक हजार से भी अधिक छात्र केन्द्र के साथ सम्बद्ध हैं।

भारतीय उच्चायोग, मॉरीशस द्वारा हमारे ठहरने की व्यवस्था होटल हिल्टन में की गई थी। यह होटल माहेबर्ग में है। हम केन्द्र से होटल की ओर चले तो हमारी बस में हिन्दी रेडियो बजने लगा। हमारे लिये यह सुखद अहसास था, मॉरीशस में हिन्दी रेडियो के अनेक चैनल अपना प्रसारण करते हैं। समुद्र के किनारे सुरम्य स्थान पर यह होटल स्थित है। लम्बी यात्रा की थकान थी किन्तु मन आनंदित था। लगभग 3 बजे हम होटल पहुँचे।

पहली बार कहाँ आए होंगे हमारे भारतीय पूर्वज? पता चला वह अप्रवासी घाट के नाम से विख्यात, यूनेस्को की विश्व विरासत सूची में शामिल है। यही वह घाट है जहाँ फटेहाल और महीनों की समुद्री यात्रा का कष्ट सहकर सर रामगुलाम शिवसागर और श्री अनिरुद्ध जगन्नाथ जी के पितामह के पितामह यहाँ आए थे। आज गर्व के साथ उनके चरण-चिह्न इस अप्रवासी घाट पर अपनी संतानों के एश्वर्य को देख रहे हैं।

17 अगस्त के कार्यक्रम के अनुसार सभी अतिथियों का रात्रिभोज उत्तरी मॉरीशस स्थित गंगा तलाब मंदिर परिसर में आयोजित था।

होटल से गंगा तलाब की दूरी करीब 60 किलोमीटर थी। कुछ आराम करने के उपरांत जब हम गंगा तलाब पहुँचे तो साँझ ढलकर अंधेरा हो चुका था। अगस्त माह भारत में बरसाती होकर ठंडा और धूप निकलने पर गर्म होता है लेकिन उत्तरी मॉरीशस के इस स्थान पर नर्म सर्दी थी। गंगा तलाब मॉरीशसवासियों के लिये महत्त्वपूर्ण तीर्थ है। इसे ग्रैंड बेसिन भी कहते हैं। यह मॉरीशस के सावन्ने जिले के पहाड़ी क्षेत्र में है। जनश्रुति के अनुसार कहा जाता है कि सन् 1897 में दो पुजारियों को स्वप्न में दिखाई दिया कि ग्रैंड बेसिन की झील का जल जाह्नवी से उत्पन्न हुआ है तथा गंगा जी का एक भाग बन गया है। यह बात पूरे मॉरीशस में फैल गई, लोगों ने वहाँ तक पैदल यात्रा की। महाशिवरात्रि के दिन इस झील का जल भगवान् शिव को अर्पित किया गया। तब से यह पवित्र तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध हो गया व आज मॉरीशस का गंगासागर कहलाता है। इसका संचालन व प्रबंधन मॉरीशस सनातन धर्म मंदिर संस्थान व हिंदू महासभा द्वारा किया जाता है। पिछले दिनों भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जब मॉरीशस यात्रा पर गए तो अपने साथ गंगाजल लेकर गए थे। उन्होंने गंगा तालाब में गंगाजल अर्पित किया। अब यह गंगा की पावन धारा का प्रतीक बन गया है। तालाब के किनारे पर भव्य मंदिर है, जहाँ प्रतिदिन गंगा आरती होती है। समस्त देवी-देवताओं की सुंदर प्रतिमाएँ यहाँ स्थापित हैं।

गंगा तालाब पहुँचने तक हल्की बारिश भी होने लगी थी, जिसकी पहले कोई संभावना नहीं थी। यहाँ अनेक लोगों से मुलाकात हुई। श्री अशोक चक्रधर जी, श्री प्रदीप गांधी जी, नार्वे के श्री सुरेश चनसुखी जी आदि थे। पंडाल में स्वादिष्ट भोजन की व्यवस्था थी और उसमें जो कद्दू की सब्ज़ी बनाई गई थी उसका तो स्वाद अविस्मरणीय था। गंगा तालाब के दर्शन व भोजन के बाद हम वापस होटल आ गए। अगले दिन विधिवत् सम्मेलन का उद्घाटन होना था। बेहतर था कि सभी आराम करें व सुबह तैयार होकर आठ बजे होटल के रेस्टोरेंट में नाश्ते पर मिलें।

अठारह अगस्त का सूर्य जब निकला तब तक हम लोग अपना बिस्तर छोड़ चुके थे। बालकनी से देखने पर पाया कि हिन्द महासागर का यह छोर स्वच्छ नीलांजल और उस पर उठती सफेद फेनिल लहरों के साथ अठखेलियाँ कर रहा है। ईश्वर द्वारा सुंदरता के जितने भी प्रतिबम्ब रचे गए हैं वे हमारे सामने चित्रवत घूम रहे थे। रात्रि में तो पूर्णिमा की धवल चाँदनी को जल के साथ तरंगित होते हुए अपनी कविताओं में कवियों ने उतारा है, लेकिन सूर्य की स्निग्ध किरणें सुनहरी होकर यहाँ के सागर में स्नान कर जब बाहर आ रही थीं तो यूँ लगता था जैसे सौन्दर्य की सुरा से मत्त होकर देवदास अपनी पारो की कलाई थामें इन लहरों पर दौड़ रहा हो। हम सभी एक साथ रेस्टोरेंट में पहुँचे। रेस्टोरेंट में देखा हमारे घरों में चहकने वाली गोरैया, कबूतर और अन्य परिचित चिड़यों के साथ कुछ नए पक्षी भी चहकते हुए अपना हिस्सा माँगकर लुभा रहे थे। आधुनिक वैभव से सम्पन्न यह होटल मन मोहक था। होटल के सामने उसके मुख्यद्वार के सामने से झाँकती हुई पहड़ी का दृश्य इतना लुभावना और सुंदर था, कि जब मैंने उसका फोटो मेरे मोबाइल में क़ैद किया तो उसकी सुंदरता और अधिक बढ़ गई। मेरे एक व्हाट्सएप की डीपी के रूप में वह दृश्य अब तक स्थाई है।

आज 11 बजे ग्यारहवें विश्व हिन्दी सम्मेलन का विधिवत् उद्घाटन था। हमें होटल में ही प्रवेश-पत्र व उपलब्ध आवश्यक साहित्य प्रदान कर दिया गया। होटल से

आयोजन स्थल पाई क़स्बे की दूरी करीब चालीस किलोमीटर थी। जब हम बस में बैठे तो बस में माँ दुर्गा की आरती के स्वर सुनाई दिये। गजेन्द्र सोलंकी जी पूर्ण मनोयोग से सभी का ख़याल रख रहे थे। वंदना जी व तुलसी जी ने हमें सामान्य निर्देश दिए जिनका हमें पालन करना था। हम पुन: मॉरीशस के सौंदर्य का दर्शन करते हुए सम्मेलन स्थल की ओर चल पड़े। छोटी-छोटी पहाड़ियाँ और उनके बीच उपजाऊ मैदान, जिनमें या तो गन्ना लहरा रहा था या कट चुका था। लीची और केले के बगीचे लहलहा रहे थे। खेतों में कई जगह सब्जियाँ भी हरिया रहीं थीं। इन खेतों में काम करने वाले किसानों के देखकर हमें ऐसा लग रहा था कि जैसे पटना से बेगूसराय के रास्ते अथवा दरभंगा से पूर्णिया के दृश्य एवं वहाँ के उपजाऊ खेत और मेहनती किसान हों।

आज मॉरीशस में विश्व के एक हज़ार से अधिक प्रतिनिधि हिन्दी की दिशा व दशा पर चर्चा हेतु एकत्र हो रहे थे। अनेक विदेशी राजनायिक एवं अतिविशिष्ट व्यक्ति वहाँ पहुँच रहे थे, किन्तु मॉरीशस बिल्कुल सहज व सरल था। कोई हड़बड़ी नहीं थी। राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री का आगमन सम्मेलन में होना था। फिर भी न कोई बैरीकेट्स थे, न कोई सुरक्षा के अतिरिक्त वीवीआईपी इंतजाम। अर्थात् मॉरीशस निर्भय है, शांति का द्वीप है। यहाँ कोई दहशतगर्दी नहीं है। विकास है, भाईचारा है और सहकार है।

आयोजन स्थल वहाँ के भव्यतम् स्वामी विवेकानंद अंतर्राष्ट्रीय सभागार में आयोजित था। छोटी-छोटी सुरम्य पहाड़ियों की तलहटी में निर्मित यह सभागार विश्व के विशालतम् सभागारों में से एक है। मॉरीशस सरकार ने हिन्दी साहित्य के सम्मान में आयोजन स्थल का नाम गोस्वामी तुलसीदास नगर रख दिया था। इसके विभिन्न सभागारों का नाम भी हिन्दी के मनीषियों के नाम पर रखे गए थे।

मुख्य सभागार में हम अपने निर्धारित स्थान पर बैठ गए। तभी मेरे पास वाली सीट पर बैठी महिला ने बड़े ही शिष्ट लहजे में कहा श्रीमान जी आप कहाँ से पधारे हैं। मैंने उन्हें बताया कि मैं भारत के एक राज्य मध्यप्रदेश

की राजधानी भोपाल से आया हूँ। फिर परिचय का सिलसिला हुआ। वे मॉरीशस के एक स्कूल में हिन्दी शिक्षिका श्रीमती वीणादेवी शिवरानी थीं। वीणा जी से मुलाकात बेहद आत्मीय हुई और हम अब अच्छे परिचित मित्र हैं।

भारत के पूर्व प्रधानमंत्री एवं हिन्दीजगत् के हृदय सम्राट श्री अटल बिहारी वाजपेयी जी का महाप्रयाण होने से सभी शोक संतप्त थे। इसका प्रभाव उद्घाटन में देखने को मिला। उद्घाटन के अवसर पर वहाँ प्रधानमंत्री श्री प्रवीण जगन्नाथ, शिक्षा मंत्री सुश्री लीला दुखन लक्ष्मण, भारत की विदेश मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज सहित अनेक नेतृत्वकर्ता उपस्थित थे। यह कहना समीचीन होगा कि श्रीमती सुषमा स्वराज व सुश्री लीला दुखन लक्ष्मण पूरे सम्मेलन की रूपरेखा व संचालन को नेतृत्व दे रही थीं।

निर्धारित समय पर मॉरीशस के प्रधानमंत्री श्री प्रवीण जगन्नाथ व भारत की विदेश मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज सहित अन्य अतिथि मंच पर पधारे। पहले मॉरीशस का राष्ट्रगान व फिर भारत का राष्ट्रगान हुआ। मेरे लिये यह गौरवशाली पल था जब मैं भारत के बाहर जन-गण-मन के शब्द गा रहा था।

दीप प्रज्ज्वलन के पश्चात् सरस्वती वंदना का गायन किया गया यह गायन इंदिरा गाँधी सांस्कृतिक केंद्र मॉरीशस के कलाकारों द्वारा किया गया। इस तरह हिन्दी के गौरवशाली इतिहास में ग्यारहवें विश्व हिन्दी सम्मेलन का यह स्वर्णिम पृष्ठ और जुड़ गया।

इस सम्मेलन का प्रतीक चिह्न भारत के राष्ट्रीय पक्षी मोर तथा मॉरीशस में लुप्त हो रहे डोडो पक्षी को साथ रखकर ग्यारह की आकृति के रूप में बनाया गया था। यह लोगो भारत के रचित यादव ने तैयार किया है। जैसा कि विदित है, अटल जी के अवसान का असर सम्मेलन पर था, सम्मेलन में उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की गई। विश्व का हर वक्ता जो सम्मेलन में अपने उद्गार व्यक्त कर रहा था, ने उन्हें श्रद्धांजलि दी।

मॉरीशस की शिक्षामंत्री सुश्री लीला दुखुन लछमन को बेहतरीन हिन्दी बोलते देख कर सुखद लगा। आयोजन के लोगो निर्माण को लेकर अशोक चक्रधर जी की फिल्म का प्रदर्शन काफी प्रभावी था, जिसमें लुप्त होते डोडो को मोर द्वारा बचाने का संकल्प झाँक रहा था। जिसे हिन्दी भाषा को बचाने से जोड़ा गया था। 10वाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन भोपाल में सम्पन्न हुआ था और यह ग्यारहवाँ आयोजन था। इन तीन वर्षों के विगत व आगत कार्ययोजना के क्रियान्वयन पर अशोक चक्रधर जी ने बहुत ही सलीके से "भोपाल से मॉरीशस" पुस्तक के रूप में जो दस्तावेज़ संपादित किया वह उपयोगी तो है ही संग्रहणीय भी है।

अनेक विद्वानों ने अपनी बात रखी। लीला दुखुन जी के बाद सुषमा स्वराज जी ने हिन्दी को यूएनओ में मान्यता दिलाए जाने के प्रयासों के सम्बंध में जो महत्त्वपूर्ण जानकारी दी वह खर्च के नियमों को लेकर थी। असल में यूएनओ में किसी भाषा को मान्यता दिये जाने के लिए नियम है कि समर्थक देशों को खर्च का बराबर भाग देना होगा जो सबसे बड़ी समस्या है। उन्होंने बताया कि भारत अकेले पूरा खर्चा उठाने को भी तैयार है, लेकिन नियम से यह भी संभव नहीं हो पा रहा। इसलिए यह बहुत ज़रूरी है कि मित्रराष्ट्र जो हिन्दी का सम्मान करते हैं उनकी सुविधा और सहायता ली जाकर हिन्दी को यूएनओ में मान्यता दिलाने का कार्य भारत सरकार पूरे संकल्प के साथ पूर्ण करे।

हिन्दी की बेहतरी के लिए सम्मेलन का

विषय "भारतीय लोक संस्कृति से हिन्दी का विकास" महत्त्वपूर्ण विषय था। यह सौ फीसदी सही है कि लोक संस्कृति और लोकभाषा हिन्दी के प्राण हैं। यदि इन्हें हिन्दी से पृथक करने का प्रयास किया गया, तो हिन्दी को अपूर्णीय क्षति होगी तथा हमारी यह प्यारी भाषा कमज़ोर हो जाएगी। प्रधानमंत्री श्री प्रवीण जगन्नाथ का उद्‌बोधन बहुत ही सार्थक एवं सारगर्भित था। प्रधानमंत्री जी के उद्‌बोधन के पश्चात् अशोक चक्रधर जी द्वारा सम्पादित "भोपाल से मॉरीशस" पुस्तक व भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद की पुस्तक "गगनांचल" का विमोचन हुआ।

मुझे चीन के श्री झियाँग चांग जी की बात ने बहुत प्रभावित किया। उन्होंने कहा कि वे भारतवंशी भी नहीं हैं व हिन्दी भाषी भी नहीं हैं, लेकिन वे वास्तविक रूप में हिन्दी प्रेमी हैं। ऐसे ही वास्तविक हिन्दी प्रेमियों को प्रोत्साहन की आवश्यकता है। प्रोफ़ेसर जावेद पोलोत्सोव, यूँग ली आदि ने भी अपनी बात कही। जो मुख्यत: हिन्दी और हिन्दी की समस्याओं को लेकर थी।

भोजन के बाद के सत्र में हमने मृदुला सिन्हा जी की अध्यक्षता में होने वाले सत्र को चुना जिसमें "लोकभाषा व लोक संस्कृति का हिन्दी के विकास में योगदान" विषय था। मृदुला जी गोवा की राज्यपाल हैं, लेकिन सरल व सहज, उन्होंने अपने उद्‌बोधन में अनेक लोकगीतों को मीठी आवाज में सुनाया। उनके गीतों से मंच और श्रोता सभी आनंदित होकर झूम रहे थे। आज के कार्यक्रम सम्पन्न होने के बाद हम वापस होटल चले गए।

अगले दिन अर्थात् 19 अगस्त को हमने प्रसून जोशी जी के साथ सत्र चुना। जिसका विषय "फिल्मों के माध्यम से भारतीय संस्कृति का संरक्षण" था। यह काफी गरमा-गरम सत्र था, प्रतिभागी फिल्मों में हिन्दी और संस्कृति की दुर्दशा पर अधिक चिंतित थे। प्रसून जी को उत्तर देने में कठिनाई का सामना करना पड़ रहा था, लेकिन वे धैर्यपूर्वक सभी श्रोताओं की शंका का समाधान कर रहे थे।

शाम को हमारा कविसम्मेलन था। हम दस कवि भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्

की ओर से काव्यपाठ के लिए आमंत्रित थे, साथ में मॉरीशस के स्थानीय कविगण और विश्व के अन्य कवियों को भी काव्यपाठ का अवसर दिया गया। सुश्री लीला दुखुन लक्ष्मण जी, श्रीमती सुषमा स्वराज जी, जनरल वीके सिंह जी एवं श्री सतपाल सिंह जी, पूरे समय कार्यक्रम में उपस्थित थे। मृदुला जी, केसरीनाथ जी व सम्माननीय अशोक चक्रधर जी का सानिध्य कार्यक्रम को उत्कृष्ट बनाने में महत्त्वपूर्ण था।

मैंने "राष्ट्र की आराधना" कविता का पाठ किया, जिसकी भूमिका में मैंने सभी को अपने-अपने राष्ट्र की आराधना करने हेतु अनुरोध किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि आराधना सिर्फ भारत की न होकर वैश्विक हो गई, तथा रचना को सभी का विशेष स्नेह प्राप्त हुआ।

अब अंतिम दिवस अर्थात् 20 अगस्त, समापन सत्र के रूप में आयोजित हुआ। समापन के लिए मॉरीशस के राष्ट्रपति श्री परमाशिवम पिल्लै वैयापुरी व पूर्व राष्ट्रपति श्री अनिरुद्ध जगन्नाथ पधारे। यहाँ यूएनओ का हिन्दी बुलेटिन प्रसारित किया गया। हिन्दी के लिए जीवनभर काम करने वाले हिन्दी सेवी व्यक्तियों व संस्थाओं को सम्मानित किया गया। जिनमें मरणोपरांत सर्वश्री बृजलाल धनपत, अभिमन्यु अनत मॉरीशस से, सर्वश्री प्रोफ़ेसर जावेद पोलेत्सोव, डॉ.रामप्रसाद परसराम, डॉ.ईनेस फोरवेल, डॉ.अन्ना चेनोकोवा, प्रोफेसर गेलिन सोकोलोवाज़ी, श्री उदयनारायण गंगू, श्री हनुमान दुबे गिरधारी, श्री केशन बदरू, श्री ऊल गुली, श्री गोपाल ठाकुर, सुश्री सिलेन्द मचानूकी, नेमाली तुकुम्बू बाययली फिजी, श्रीमती सुनीता नारायणन, केजुतिको मचीजदी, रत्नाकर नराले, ईमादे धर्मयश, हिन्दी प्रचारिणी सभा मॉरीशस, टोकियो विश्वविद्यालय जापान, आर्यसभा मॉरीशस, डॉ.जोरम अमततारा, श्री प्रसून जोशी, सुरेश ऋतुपर्ण, इंद्रनाथ चौधरी, प्रेमशंकर त्रिपाठी, चमनलाल, रीता शुक्ला, श्रीधर परारकर, श्री एन तमसब टोबर, सुभाष कश्यप, सी भास्कर राव, केसी अजय कुमार, अजय कुमार पटनायक, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचारिणी सभा व मॉरीशस के हिन्दी शिक्षकों को सम्मानित किया गया। समापन के बाद एक नया अनुभव व हिन्दी के लिये वैश्विक प्रयासों का सुखद भविष्य सँजोए हम पंडाल से बाहर आ रहे थे।

हमारी चेन्नई के लिए उड़ान शाम के समय थी इस बीच हमारे पास करीब पाँच-छ: घंटे का वक्त था। अत: हमने पूर्वी तट पर भ्रमण का विचार बनाया। साथ ही मॉरीशस के बाज़ार और कुछ गाँव भी देखना थे, सो निकल गए पूर्वी तट पर। यहाँ एक गाँव तो हमें पूरी तरह भारतीय क़स्बे की तरह मिला, जिसका साप्ताहिक हाट भरा हुआ था। हमने पैदल घूमकर उसे निहारा। समय की मर्यादा थी सो एयरपोर्ट पहुँचना था। हम वापस हवाई अड्डे पहुँच कर अपनी लाइन में लग गए व प्रात: चैन्नई में भारत की धरती पर वापस आ गए।

अपनी आँखों में नीले आकाश के साथ नीलांजल मॉरीशस लिए। हिन्दी के लिए विश्व की मानव सभ्यता को एकजुट देखा था मैंने। यह भी तो हिन्दी और सरस्वती का आशीर्वाद है मुझ पर।

हाँ एक बार पुन: यहाँ आना होगा। अब केवल नीलांजल मॉरीशस के लिए, वहाँ के हिन्दी समाज के बीच फिर से हिन्दी में बात करने। उसे जी भरकर निहारने के लिए, पूरी तरह मन भरकर मॉरीशस को देखने। लेकिन देखो कब.....।

000

गूगल बाबा की जय

डॉ. दलजीत कौर

आपको प्रचलित बीमारी की दवाइयों के नाम ज़ुबानी याद नहीं। किसी विशेषज्ञ की तरह यदि आप किसी बीमारी पर टिप्पणी नहीं कर सकते तो आप नाहक अनपढ़ -गँवार हैं। अपनी या अपने परिवार के सदस्य की बीमारी की जानकारी आपको डॉक्टर से अधिक होनी चाहिए। बीमारी का पूरा निबंध आपको ज़ुबानी रटा होना चाहिए। बीमारी का कारण, निवारण, परिभाषा, बीमारी की कौन -सी स्टेज, कौन -सी दवाई, दवाई के परिणाम आदि -आदि। अर्थात् इस पर पीऍच.डी करना नितांत अनिवार्य है। इसके लिए आपको किताबों की आवश्यकता नहीं है। बस गूगल देवता का आशीर्वाद चाहिए।

हमारे एक मित्र को भिंडी बहुत पसंद है। उन्हें बस बाज़ार में भिंडी दिखनी चाहिए। कैसी भी, किसी भी मौसम में। पुराने समय में हम मौसम के हिसाब से ही सब्ज़ियाँ खाते थे। परंतु आज बिन मौसम भी महँगी सब्ज़ी खाना अमीरी की निशानी है। सर्दी के मौसम में महाशय ने भिंडी खाई। जाने उसपर कौन -सी दवाई लगाई गई थी कि मित्र का पेट दर्द होने लगा। पेट दर्द ऐसा शुरू हुआ कि रुकने का नाम ही नहीं ले रहा था। दो-तीन डॉक्टरों को दिखाया। लगभग दो महीने हो गए। अब ख़ुद डॉक्टरी करने का वक़्त आ गया। गूगल पर रिसर्च शुरू हुई और बढ़ते -बढ़ते पेट के कैंसर तक पहुँच गई। उन्हें यक़ीन हो गया कि अंत समय निकट है। कुछ महीने बाद उनके बेटे की शादी थी। उन्हें लगने लगा वे शादी नहीं देख पाएँगे। उन्होंने अपने मित्र से कहा - यदि मैं न रहूँ तो शादी उसी तारीख़ को होनी चाहिए।

उनकी नींद ख़त्म हो गई। भूख-प्यास मिट गई और वे डिप्रेशन के शिकार हो गए। बहुत समझा-बुझा कर मानसिक चिकित्सक के पास ले गए और बहुत प्रयत्न के बाद उन्होंने सच बताया। डॉक्टर ने सब से पहले उन्हें गूगल बाबा से नाता तोड़ने को कहा। इस बात को दस -बारह साल हो चुके और वे पूर्णत: स्वस्थ हैं।

कोरोना काल में दूसरी लहर के समय जब चारों ओर मौत का तांडव हो रहा था। एक

डॉ. दलजीत कौर
2571/40 सी, चंडीगढ़ 160036
मोबाइल- 9463743144
ईमेल- drdaljitkaurthind@icloud.com

परिवार में सभी को कोरोना हो गया। डॉक्टर से दवाई ली गई और नब्बे साल की बीमार माता जी से लेकर घर की नौकरानी तक कुछ दिनों में ठीक हो गए। परंतु घर के मालिक जो स्वयं को बहुत समझदार मानते थे। उन्होंने गूगल पर ज्ञान वृद्धि करते हुए कोई दवा नहीं ली। उन्होंने छानबीन कर पता लगाया कि किस दवा का क्या नुक़सान है और दवा लेने से इंकार कर दिया। उन्होंने सारी जानकारी जुटा ली। यदि उन्हें ICU की ज़रूरत भी पड़ती है तो वे घर पर ही सब इंतज़ाम करवा लेंगे। क्योंकि उनके पास पैसों की कमी नहीं है। परंतु उनका अंत समय बहुत कष्टकारी रहा। वे बच नहीं पाए। पैसा व गूगल का ज्ञान धरा का धरा रह गया।

मेरे बेटे के दोस्त का मैसेज आया -"मैं कुछ दिन का मेहमान हूँ। मिलने आ जाओ।"

उसने मुझे बताया। मैंने कहा -"जल्दी जाओ। कुछ भी ज़रूरत हो तो बताना।"

बेटे ने जाकर मैसेज किया -"सब ठीक है। घबराने की ज़रूरत नहीं।"

शाम को बेटे ने आकर बताया -"उसे दो दिन से उल्टियाँ हो रही थीं। उसके मम्मी - पापा कुछ दिन के लिए शादी में गए हैं। किसी को बताया नहीं। गूगल पर देखकर सोच लिया कि कैंसर से ऐसा होता है। महाशय का तो रो - रोकर बुरा हाल। घर में उसका कोई और दोस्त भी आया हुआ था। उसने बताया -दो दिन पहले दोनों ने पहली बार शराब पी। इसे कहा भी कि कम पी। कहने लगा -मम्मी-पापा घर पर नहीं हैं। इंज्वाय करते हैं। ले-ले मज़ा।"

बेटा उसे हमारे फ़ैमिली डॉक्टर के पास ले गया। उन्हें सारी बात बताई। वे हँसने लगे और कहा -इसे नींबू पानी पिलाओ। इसका कैंसर ठीक हो जाएगा।

पिछले सप्ताह मुझे व मेरी मित्र को किसी ने खाने पर सपरिवार बुलाया। पार्टी शुरू हुई। उन्होंने हमें अंडे व चिकन सर्व किए। मेरी मित्र ने कहा -"मैं शाकाहारी हूँ। मुझे डायबटीज़ (मधुमेह) भी है।"

उनका इतना कहना था कि मेज़बान ने उन्हें पूरे दो घंटे का भाषण डाईट, डायबिटीज़, लाइफ़ स्टाइल पर दिया। उन्हें बार -बार, बहुत बार समझाया। गूगल पर उन्हें डॉक्टरों, वैज्ञानिकों की जानकारी खोलकर दिखाई। उन्हें लिंक दिए। उन्होंने स्वयं यहीं से सारी जानकारी ली थी। उन्होंने बताया -आपको केवल और केवल अण्डे व चिकन खाना चाहिए। प्रोटीन ! बस प्रोटीन।

चाय बिलकुल बंद।

सभी सफ़ेद चीज़ें बंद।

सब्ज़ी खाइए।

सुबह दो अण्डे। शाम को दो अण्डे।

मुठ्ठी भर कर बादाम खाएँ।

पानी बहुत पीना है। प्यास लगे या न लगे।

रोटी बिलकुल नहीं खानी। चपाती नहीं। ब्रेड नहीं। बिस्कुट नहीं। रोटी बहुत नुक़सान करती है।

इतने में उनकी पत्नी ने खाना लगा दिया। खाने की मेज़ सजी हुई थी। खाना देखने में स्वादिष्ट लग रहा था। पर इतना भाषण सुन कर हम किस मुँह से खाना खाएँ। मेरे व मेरी मित्र के पति ने खाना खाने से इंकार कर दिया। उन्होंने साफ़ झूठ बोल दिया -हम रात को खाना नहीं खाते।

अब मेरी मित्र से नहीं रहा गया। वह अपने पति से बोली -थोड़ी रोटी खा लो। नहीं तो घर जा कर कहोगे। भूख लगी है। उनकी देखा देखी मेरे पति ने भी एक रोटी खाई। मेज़बान फिर मेरी मित्र से बोले -आप बस एक महीना मेरे कहे अनुसार डाइट फ़ॉलो करें। आपकी डायबिटीज़ बिलकुल ठीक हो जाएगी। मेरी गारंटी। वे किसी स्पेशलिस्ट की तरह बोल रहे थे - मीठा बिलकुल नहीं खाना।

आम भी नहीं।

मीठा तो सब के लिए ज़हर है।

इतने में उनकी श्रीमती जी स्वीट डिश में गुलाब जामुन लेकर आ गईं। गुलाब जामुन देखकर जैसे हमें साँप सूँघ गया। मुझे लगा गुलाब जामुन बोल रहे हैं। पूछ रहे हैं -

ज़हर खाओगे क्या ?

उनमें से एक गुलाब जामुन नारे लगाने लगा -गूगल बाबा की जय !

गूगल बाबा की जय !

हम बिना गुलाब जामुन खाए जय -जय करते घर लौट आए।

000

लेखकों से अनुरोध

'विभोम-स्वर' में सभी लेखकों का स्वागत है। अपनी मौलिक, अप्रकाशित रचनाएँ ही भेजें। पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जाएँगी। रचना को स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा। प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा। बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा लम्बे आलेख न भेजें। अपनी सामग्री यूनिकोड अथवा चाणक्य फॉण्ट में वर्डपेड की टैक्स्ट फ़ाइल अथवा वर्ड की फ़ाइल के द्वारा ही भेजें। पीडीऍफ़ या स्कैन की हुई जेपीजी फ़ाइल में नहीं भेजें, इस प्रकार की रचनाएँ विचार में नहीं ली जाएँगी। रचनाओं की साफ़्ट कॉपी ही ईमेल के द्वारा भेजें, डाक द्वारा हार्ड कॉपी नहीं भेजें, उसे प्रकाशित करना अथवा आपको वापस कर पाना हमारे लिए संभव नहीं होगा। रचना के साथ पूरा नाम व पता, ईमेल आदि लिखा होना ज़रूरी है। आलेख, कहानी के साथ अपना चित्र तथा संक्षिप्त सा परिचय भी भेजें। पुस्तक समीक्षाओं का स्वागत है, समीक्षाएँ अधिक लम्बी नहीं हों, सारगर्भित हों। समीक्षाओं के साथ पुस्तक के कवर का चित्र, लेखक का चित्र तथा प्रकाशन संबंधी आवश्यक जानकारियाँ भी अवश्य भेजें। एक अंक में आपकी किसी भी विधा की रचना (समीक्षा के अलावा) यदि प्रकाशित हो चुकी है तो अगली रचना के लिए तीन अंकों की प्रतीक्षा करें। एक बार में अपनी एक ही विधा की रचना भेजें, एक साथ कई विधाओं में अपनी रचनाएँ न भेजें। रचनाएँ भेजने से पूर्व एक बार पत्रिका में प्रकाशित हो रही रचनाओं को अवश्य देखें। रचना भेजने के बाद स्वीकृति हेतु प्रतीक्षा करें, बार-बार ईमेल नहीं करें, चूँकि पत्रिका त्रैमासिक है अत: कई बार किसी रचना को स्वीकृत करने तथा उसे किसी अंक में प्रकाशित करने के बीच कुछ अंतराल हो सकता है।

धन्यवाद

संपादक

vibhom.swar@gmail.com

पत्नी और धर्मपत्नी

ललन चतुर्वेदी

सुबह की सैर के अनेक फायदे आप सुन चुके हैं। इसे मैं चिंतन-काल मानता हूँ। ऐसे ही एक सुबह प्यारेलाल जी से मुलाक़ात हो गई। उनके चेहरे पर मेले के उसरने वाली उदासी पसरी हुई थी। मैंने उनसे उलाहना भरे स्वर में कहा- "क्या प्यारे,सुबह-सुबह क्यों मुँह लटकाये हुए हो।"

"क्या कहूँ। आँखों में रात कटी है। एक धर्मसंकट में फँस गया हूँ। मसला गंभीर है। चूँकि समस्या पत्नी से संबंधित है इसलिए इसे मैं गुरु-गंभीर मानता हूँ। घर में पत्नी की पुकार और ऑफ़िस में साहब की घंटी पर किसके कान खड़े नहीं होते?शायद ऐसे वीर- बहादुरों की संख्या धरती पर नगण्य ही हैं जो पत्नी और साहब की बातों पर तत्काल कान नहीं देते।"

मैंने उनके अनुभव पर मुहर लगाते हुए कहा-"क्या पते की बात कहते हो! आठ घंटे साहब और बारह घंटे पत्नी को देने के बाद जो समय बचे उसे मैं अमृत काल मानता हूँ। अब प्रात की वेला को पत्नी और ऑफ़िस की गतिविधियों के चिंतन पर व्यर्थ मत करो। चलो,मौसम्बी का जूस पियो और सेहत को बुलंद रखो। फिर भी यदि कोई मसला है तो बतलाओ। हर समस्या का समाधान है।" प्यारेलाल जी ने लंबी साँस लेकर बतलाना शुरू किया- "मेरी पत्नी का नाम माधुरी है।"

"इसमें कौन सी नई बात है। हर व्यक्ति की पत्नी का एक नाम होता है। यह अलग बात है कि कुछ लोग प्यार प्रदर्शित करने के लिए पत्नी को अलग-अलग नामों से भी पुकारते हैं।"

"तुम तो मज़ाक ही शुरू कर देते हो। पहले पूरी बात तो सुन लिया करो। असल में कल रात की पार्टी से लौटने के बाद माधुरी गुम-सुम दिखने लगी हैं। घर में उदासी पसरी हुई है। वह जब बोलती हैं तो लगता है कि घर बोल रहा है। उनकी उदासी मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता।"

"आख़िर हुआ क्या उन्हें?मैं भी तो जानूँ।"

"बात बिलकुल मामूली सी है। पार्टी में लोग अपनी-अपनी पत्नी का एक-दूसरे से परिचय करा रहे थे। लोग अपनी पत्नी को श्रीमती, धर्मपत्नी,अर्धांगिनी,स्वामिनी आदि विभिन्न कर्णप्रिय नामों से परिचय करा रहे थे। कुछ लोग वाइफ और स्वीटहार्ट वाले भी थे। इसमें किसी को क्या आपत्ति?आप अपनी पत्नी को जो कहे। दाल में जितना घी डालें, स्वाद उसी के अनुसार मिलेगा। मैं तो सीधा-सादा आदमी ठहरा। एक सज्जन से माधुरी का मैंने भी परिचय कराते हुए कहा- ये माधुरी जी हैं, मेरी पत्नी।" उनकी बहुत ठंडी प्रतिक्रिया रही।

"ख़ैर खाने-पीने के बाद हम दोनों घर लौट आए। रास्ता सन्नाटे में ही कटा। संवादहीनता की स्थिति भयावह होती है।"

"तो तुम्हारा चेहरा इसलिए उतरा हुआ है।"

"नहीं भाई ! बात दरअसल ऐसी है कि माधुरी मुझसे सख्त नाराज़ हैं। कहती हैं कि सारा प्यार घर में ही टपकता है। यहाँ दिन-रात तरह-तरह की उपमाओं और विशेषणों से नवाज़ते रहते हो। महफिल में तुम्हारे कंठ सूख जाते हैं। यदि प्यार से एक बार धर्मपत्नी कह देते तो तुम्हारी इज़्ज़त में बट्टा लग जाता।"

"अब तुम्हीं बताओ,मैं उन्हें क्या और कैसे समझाऊँ? वाणी और अर्थ तथा जल और लहरों के बीच तुलसी दास जी भी अंतर बतलाने में असमर्थ हो गए थे। मैं कैसे बतलाऊँ कि पत्नी और धर्मपत्नी दोनों एक ही हैं। तुम तो हिन्दी के प्रोफ़ेसर हो। बतलाओ।"

ललन चतुर्वेदी
मोबाइल- 9431582801
ईमेल- alancsb@gmail.com

मैंने माथा पकड़ लिया। मैं कैसे कहूँ कि तुम्हारी पत्नी के लिए मैं प्रोफ़ेसर नहीं हूँ और अपनी पत्नी के लिए तो मास्टर भी नहीं। पत्नी के सामने पति को हमेशा अनुशासित विद्यार्थी की भूमिका में रहना चाहिए। मैंने मन ही मन इन बातों का गंभीरतापूर्वक मनन किया। मुझे थोड़ी देर तक मौन देखकर प्यारेलाल जी ने कहा-

"पत्नी का नाम आते ही तुम्हारी भी बोलती बंद हो गई प्रोफ़ेसर।"

"पत्नी अतर्क्य होती है, मन-बुद्धि से परे प्यारे! तुम घर जाओ प्रेम से भाभी के साथ चाय पर चर्चा के दौरान मन की बात बतलाओ। गृहस्थी में अच्छे दिन बनाए रखने के लिए मैं तुम्हें कुछ ज़रूरी टिप्स दे रहा हूँ।"

"बतलाओ भी भाई ! माधुरी की चाय का भी टाइम हो गया है। दिन दो पहर चढ़ चुका है। सूरज के बढ़ते ताप के साथ मेरी भी चिंताओं का ग्राफ बढ़ने लगा है।"

"देखो,पहली मार्के की बात यह है कि स्त्री से बातें करते समय अधैर्य नहीं होना चाहिए। जाकर प्रेम से भाभी को समझाओ कि पत्नी संज्ञा है, विशेषण है, क्रिया विशेषण है, अव्यय है। इसीलिए पत्नी के पहले कुछ भी जोड़ना न केवल व्याकरणिक रूप से बल्कि नैतिक रूप से भी ग़लत है। अब तुम्हीं बतलाओ पत्नी से पहले कोई है? पत्नी स्वयं में पूर्ण है। उसको किसी विशेषण से विभूषित करने की ज़रूरत ही नहीं है। यह हृदय की बात है। विज्ञजन पत्नी के संदर्भ में विधि,विज्ञान और शास्त्र का कभी हवाला नहीं देते।"

अब प्यारेलाल जी मेरी बातों से पूर्ण रूप से आश्वस्त दिखे रहे थे। उनके चेहरे पर चमक और संतोष का भाव उभरने लगा था। वह अचानक उठ कर चल पड़े। मुझे कोई ख़ास आश्चर्य नहीं हुआ। ज्ञान प्राप्त हो जाने पर शिष्य गुरु को छोड़ देता है। मेरी चिंता कुछ अलग थी। समाधान में मैंने भी तेज़ कदमों से घर का रुख़ किया। अनावश्यक विलंब से मेरी बेचैनी बढ़ रही थी। निश्चित रूप से चंचला आज चाय के बदले कारण बतलाओ नोटिस सर्व करने के लिए तैयार बैठी होगी।

000

लघुकथा

राख से पहले

ज्योत्सना सिंह

"सिगरेट की आदत आपको कब से लगी?" मैंने अपना लैपटॉप खोलते हुए इंटरव्यू के नाम पर पहला प्रश्न किया। वह व्यंगात्मक रूप में मुस्कराते हुए बोली-"आपके चैनल ने मेरी रचनाओं पर काम करने के लिए आपको भेजा है या मेरी सिगरेट पर?"

"ऐसा नहीं है मैडम,आपकी ऐश्ट्रे भरी हुई देखी तो पूछ लिया। अगला प्रश्न आपकी रचना से ही है।"

टाइमर ऑन करके सिगरेट सुलगाते हुए उन्होंने प्रश्न पूछने की आज्ञा दे दी। मैंने टिक-टिक करती उस घड़ी पर एक नज़र डाली और प्रश्न किया- " आप प्रेम लिखती हैं फिर भी क्या वजह है कि आप अपनी हर नायिका को मार देती हैं?"

"जब मेरी नायिका मरती है तब मैं ज़िंदा होती हूँ।"

"ओह! आपने प्रेम भरी इतनी कहानियाँ लिखी हैं। निश्चित ही आपने प्यार किया होगा। फिर आपकी ज़िंदगी में इतना अकेलापन क्यों है?"

एक लंबा कश लेते हुए उन्होंने कहा-" सच सुन सकोगे?" हाँ में सिर हिलाते हुए मैंने कहा- "ज़रूर सुनना चाहूँगा।" "सच यह है कि तुम बस मेरी ज़िंदगी में झाँकना चाहते हो; क्योंकि अगर तुम मसालेदार नहीं लिखोगे तो तुम्हारी टी.आर.पी. गिर जाएगी और तुम्हारा यह प्रोग्राम किसी कचरे के डिब्बे में फेंक दिया जाएगा। जाओ मेरा वक्त मत बर्बाद करो मत लो मेरा इंटरव्यू। जो तुम चाहते हो वह मैं जीते जी बता नहीं सकती और कुछ पूछने से तुम्हें लाभ नहीं है।"

राख हो चुकी सिगरेट को ट्रे में रखते हुए उन्होंने कहना शुरू किया- "बाबू जी को सिगरेट कितनी पसंद थी यह बात माँ के बदन पर गोल जले हुए निशान देखकर ही मुझे पता चल गया था। प्रेम के नाम पर भी माँ को घुटते ही देखा, हाँ उस दिन वह मुस्करा रही थीं, जब उन्होंने आत्महत्या कर ली और मुझे घुटने के लिए उस जले हुए टोटे के पास छोड़ गई। जिन गलियों से गुज़रकर मैं यहाँ तक आई हूँ, उन गलियों में भी यही धुआँ और ऐसा ही प्रेम देखा। मेरी लेखनी ने कई बार मुझसे ज़िंदगी के इसी हिस्से को लिखने के लिए कहा पर मैंने मन में ठान ली थी कि ज़िंदा रहते न तो ये सब लिखूँगी न ही किसी से कहूँगी। तभी मैंने अपने जीवन में सब कुछ पलट दिया। सिगरेट से दोस्ती कर ली और प्यार से नफ़रत। नायिका मरने लगी और मैं धुआँ उड़ाने लगी।" चुपचाप उन्हें शूट करते हुए मैं एक और प्रश्न करने ही वाला था कि तभी टाइमर बज गया।

वक्त के लिए दिए हुए वादे के अनुसार मैंने अपना पैकअप करते हुए उन्हें धन्यवाद दिया। पर वह वहाँ से जा चुकी थीं। तभी कमरे में उनका सहायक आया और बोला-

“साहब, दीदी जी ने बताया था कि इंटरव्यू के लिए आप आओगे पर वह रात ही स्वर्ग सिधार गईं, जाते वक्त बोलीं कि जब टाइमर बजे तब मैं सबको उनके जाने की ख़बर दूँ। बस इसी आवाज़ को सुनकर मैं फ़ोन करने के लिए उठा तो आप को स्टडी में पाया।"

हतप्रभ मैं बोला-"अभी तो उन्होंने मुझसे बात की और तुम कहते हो!" वह मुझे उनके कमरे में ले गया, ऐश्ट्रे में आधी जली सिगरेट वैसे रखी थी और वह संतुष्टि भरी निद्रा में लीन थीं।

000

ज्योत्स्ना सिंह, अम्बरोसिआ, बी-1701, ओमेक्स् रेसिडेंसी टू, सेक्टर-7, गोमती नगर एक्स्टेंशन, लखनऊ, उप्र 226010

मोबाइल- ९८३८६००४६

ईमेल- singhjyotsana1968@gmail.com

विशिष्ट कवि

वसंत सकरगाए की कविताएँ

पिता सा सुंदर

वह अपने पिता से कहीं ज़्यादा सुंदर था
चाकलेटी फ़िल्मी अभिनेता सा नवनीत सा चेहरा
रुई की मानिंद मुलायम हाथ चाँदी जैसे उजले पाँव
सेबफल बोल दें तो कोई हर्ज़ नहीं ऐसे कपोल
घर से कार और कार से दफ़्तर तक वातानुकूलित

मगर एक फाँस थी जो उसे चुभती थी हरदम
कि पिता से उसके नाक-नक़्श यूँ तो मिलते हैं बहुत कुछ
और क़द भी पिता से ऊँचा
लेक़िन अपने पिता सा
वह हो न सका सुंदर

मसलन, पैदल चलते पिता को करिया दिया था आग़ उगलते सूरज ने
पर सूरज को उन्होंने कभी उलाहना नहीं दिया
उल्टे सर झुकाकर नमस्कार करते रहे जीवन भर
सर्दियों में बनियान, बुशर्ट और फटी स्वेटर का
पीठ का हिस्सा कर लेते थे छाती पर
और बड़ी गर्मजोशी से कहते ठंड का वार कभी नहीं चलता ढँकी छाती पर
गोदड़ी ज़्यादा गर्म होती है तीन-तीन रजाइयों की बनिस्बत
पुराने छाते के सूराख़ों से सलग आती बारिश की धार
किन्तु तरबतर पिता इस बात पर खुश रहे सदा
कि कुछ न होने से बेहतर है, कुछ होना
सिटी बस की पायदान पर पाँव रखते-रखते
हर बार ख़ुद को रोक लेते और
हाथों में मैथी या पालक की गड्डी लिए
चप्पल फटकारते पिता घर लौट आते मुस्कराते हुए

पर उसे बार-बार खोट नज़र आती अपनी सुंदरता में
भाई-बहन, दोस्तों ने उसे कितनी ही बार समझाया
समझाया कि बाप से बढ़कर होता है बेटा
कि वह उसके पिता से सुंदर है कहीं ज़्यादा
लेकिन वह बार-बार उसाँस भरता और कहता
पपीते का बीज पपीते का बीज होता है
और काली मिर्च का दाना काली मिर्च का

000

ऐसी-वैसी

जैसे;
लू से हलकान कानों पर सूँड का मफलर लपेटे
ठंड से काँपता ग्लेशियर पर बैठा हाथी पी रहा है कोल्डड्रिंक
जूते का सूराख़ एक अँधेरी सुरंग जिसमें गुज़रती है साँसों की रेल
समय की दीवार की खूटी,खूँटी पर टाँगता हूँ बदबूदार संवेदनाओं की उतरने
ऊँट बैठा ठूँठ पर जिसकी कूबड़ पर टँगा है अन्यमनस्क एक बादल अमनोज्ञ
आकाश की देह पर चाँद एक फोड़ा है बरसात जिसका फूटा मवाद
धरती के लोहे में लापता है द्वारहीन घरों की चाबियाँ
अयस्क की वादियों में विचरते हैं धातुओं के साँप
इन्द्रधनुष की गुलेल में फँसाकर जब आकाश धरती की तशरीफ़ पर मारता है ओले
आकाश के प्रेम में ठंडी आह भरती है धरती सिहरती है

मेरी कविताओं के गमले में
उगते हैं ऐसे
गुठलीहीन फलों के कितने ही जुमले
कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा
क्षमा करना
मेरे पूर्वजों-पुरखों-वर्तमानियों मुझको क्षमा करना
ऐसी कोई चमत्कारी कविता मैं लिख नहीं सकता कभी!

000

यह मेरे नहाने समय है

रोज़-रोज़ नहाते हो और थोड़ी बारिश हुई
नहीं कि सर छुपाने
मेरे पास चले आते हो

मुझसे दूर चले जाओ कहीं
मैं फिर कहता हूँ
ढूँढ़ लो कोई बस-स्टॉप
तलाश लो
आत्महत्या के बाद
किसी छोटे व्यापारी की उखड़े शटरवाली कोई दूकान
जा कर देखो तो सही
सर छुपाने को तुम्हें मिल सकता है
किसी के सपनों का उजड़ा हुआ मकान

पर तुम चले जाओ मेरे साए से दूर
कि मेरे तन-बदन पर लिथड़ी हुई है धूल-माटी
पक्षियों का शुष्क मल-मूत
कुछ उजार घोंसले रखे हुए हैं मेरी डगानों पर
जिनमें जाते-जाते अपने पंख छोड़ गए हैं पाँखी

इनके दाग़-छब्बे उभर आएँगे तुम्हारे उजले वस्त्रों पर

मैं सिर्फ़ बारिशों में नहाता हूँ और यह मेरे नहाने-धोने का समय है

बारिशों में मुझसे
एक पेड़ ऐसा कहता है
000

स्याही

उन्हें शायद नहीं पता कि स्याही
सिर्फ़ समय की इबारत लिखने के काम आती है
काग़ज़ पर लिखी जाए
अथवा दीवार पर
फैंकी जाए किसी के चेहरे पर
कि छिड़क दी जाए किसी की उजली कमीज़ पर
याकि उड़ेल दी जाए ज़मीन पर

स्याही गढ़ ही लेती है अपना मुहावरा अपनी भाषा
भाषाओं को दरकार होती है
स्याही की
लेकिन स्याही
कभी मोहताज नहीं होती किसी भाषा की

उन्हें शायद नहीं पता कि एक कवि
नमक की खोज में निकला था
और रात ने उसे गिराया
स्याही के ताल में

और उन्हें तो शायद यह भी पता नहीं
कि एक अन्य कवि बहुत कुछ कहना चाहता है
लेकिन समय और स्याही
नहीं है उसके पक्ष में
बावजूद इसके
वह बेइंतिहा प्यार करता है
समय और स्याही से
000

हीरा-जीरा

कविता छोटी हो और बात बड़ी तो
कविता की जात बन जाती है

पर बन नहीं पाती कविता की जात
कविता बड़ी हो और छोटी सी
भी न हो बात

गर्मियों में अक्सर मेरी नकबाल फूट जाती थी
और थोड़ा सा जीरा पीसकर
मेरे मुँह में डालते हुए कहती थी आजी;
गर्मी जाए जीरे से
पर सर्दी न जाए हीरे से

कविता में मैं
हीरे की चौंध नहीं स्वाद की मौज़ तलाशता हूँ...
000

बीच का रास्ता

दोस्त बीच के रास्ते के बारे में कई बार समझाता है मुझको

अक्सर कॉफी हाउस ले जाता है और पूरे इत्मीनान से समझाता है
जब वह समझा रहा होता है तब अक्सर
कॉफी के प्याले से उठती भाप
उसके चश्मे पर जम जाती है
जिसे पेपर-नेपकिन से साफ़ करते हुए
वह कहता है सबसे मुफ़ीद होती है भाप
चश्मे के दाग़-धब्बे पोंछने के लिए

साफ़ किया हुआ चश्मा मेरी ओर बढ़ाता है और
कहता है
इसे लगाकर देखो थोड़ी देर
बिल्कुल साफ़ नज़र आएगा बीच का रास्ता तुम्हें

कितने ही संवेदनशील बहाने और छुपने को आढें हैं
बीच के इस रास्ते पर;
कि रात से बहुत ख़राब है पत्नी की तबीअत
कि बुखार से तपती माँ ने आँखें नहीं खोली है तीन दिनों से
कि अभी-अभी हृदयाघात हुआ है पिता को और
बहुत ज़रूरी है तत्काल मेरा गाँव निकलना
कि घर से निकल ही रहा था कि सीढ़ियाँ उतरते
फिसल पड़ा और मुड़ गई दाँए पाँव की ऐड़ी
ऐसे में बड़ा मुश्किल होगा कार का एक्सीलेटर दबा पाना

तुझमें सबसे बड़ी ख़ामी यह है कि तू घुटन भरे
रिश्तों के मुख्य-मार्ग पर चलता है और
जाम में फँस जाता है

तुझे फिर भी यक़ीन न हो तो,आज़मा कर देख लेना कभी
पलटकर तुझसे
कोई नहीं पूछेगा
अब कैसी है तेरी पत्नी की तबीअत
माँ ने आँखें खोली कि नहीं
पिता को लगा कुछ आराम
अब कैसी है तुम्हारे पाँव की मोच

मैं दोस्त को उसका चश्मा लौटाता हूँ
और कहता हूँ
निकट और दूर दृष्टि दोष से बुरी तरह ग्रस्त हैं मेरी आँखें
तुम्हारे चश्मे का नम्बर
कत्तई फिट नहीं बैठ रहा है
मेरी आँखों पर
000

वसंत सकरगाए
ए/5 कमला नगर
कोटरा सुल्तानाबाद
भोपाल-462003
मोबाइल- 99774 49467

'मीनू' मीना सिन्हा की कविताएँ

विधवा

लाचार, मजबूर, निरीह, कातर, विवश
बातों-बातों में आँसू पोंछती, बेबस
दयादृष्टि की आतुर, सभी का मुँह जोहती
अपनों की बेरहम बेरुख़ी झेलती
दीन-हीन, श्रीहीन, मुर्झाया चेहरा

माँगलिक कार्यों से अछूत-दूर
मनहूसियत की काया-छाया
सुबह-सवेरे सफेद कफ़न ओढ़े
नारी-सुलभ शौक-शृंगार से वंचिता
घर-बाहर की उपेक्षिता, अरमानों की चिता

क्या तुमने किसी विधुर को देखा है
लिबासों में फ़र्क करते हुए
श्वेत-धवल धारण करते हुए
घर की व्यवस्था गड़बड़ा गई
ठीक है, दूसरी आ जाएगी
दंतविहीनों को मिल जाती नवयौवनाएँ
पुनः वैधव्य ढोने के लिए

व्यवस्था का यह क्रूर चेहरा
युगों से विधवाओं को हद में रखने की कोशिश
पायल, कंगन-टीका, बिछुए उतारते हुए
नरभक्षिता की उपाधि
सौभाग्यविहीना दोषिता, पीड़िता

घर की चारदीवारी में क़ैद
ख़ुद की खोट की वजह वैधव्य
सूनी माँग, शेष ज़िंदगी का उपहार
हँसने-बोलने पर टेढ़ी नज़रें
प्रतिपल असम्मानजनक व्यवहार
मौके की ताक में भेड़िए तैयार
विद्रूप चेहरा झेलती

इन्हीं विधवाओं से बसीं कई गृहस्थी
अवांछिताओं ने पाले कई बच्चे
क्योंकि कोई अपना नहीं था
आसरे की ओट में शोषित हुईं
आँसुओं को अंदर घुटकती गईं
समझती सारे कुचक्र
नासमझ बन सहती रहीं
हाँ, हमारे समाज की एक
सूरत, विधवा औरत !
000

छुट्टल

देखो..."छुट्टल" चली जा रही है
सहमी, सिमटी, सिकुड़ती, सकुचाई
नज़रें झुकाए
दाएँ-बाएँ नहीं देखती
नाक की सीध में चलती
तेज़ कदमों से
अपने ही जिगर पर पाँव रख रही हो जैसे
आना-जाना पड़ता है उसे नौकरी पर
सफेद कौवों-गिद्धों की चोंच से बचते हुए

"छुट्टल" जा रही है
छुट्टल यानी छोड़ी हुई औरत!
चेहरे पर अपमान की काली स्याही
ग्लानि-क्षोभ से विवर्ण हिया
घर में रोटियाँ सेंकती
गाय-गोरू करती
दिन-दुनिया से बेख़बर रहती
अपनी छोटी-सी दुनिया में रमण करती
उसे क्या पता "शनिचरा" का फरेब
ऑफ़िस में ब्याय-फ्रेंड बना
'लंच' में साथ बैठ खाना- पीना हुआ
फटफटिया पर घुमाया
कुछ अपनों ने अवश्य आगाह किया
पर प्रेम में अंधी-बहरी थी
बाबुल का घर छोड़ भागी लेकिन..
वह न नौका था न ही नाविक
कौमार्य का पंख कतर कर छोड़ दिया
शिला की गोद में एक फूल देकर
अब गर्दन झुकाए पाषाण अहिल्या को
इंतजार नहीं किसी राम का....
दुधमुँही बिटिया के लिए जीती
नौकरी से घर पहुँचने की जल्दी होती
जहाँ रात के जूठे बर्तन, गंदा घर,
बाल्टीभर कपड़े, बची-खुची रोटियाँ
प्रतीक्षारत रहती हैं
कोई तो है घर में प्रतीक्षारत
जो देती है गति उसके पाँव को
यदि कभी नज़रें उठाकर
किसी की आँखों में झाँक कर
बातें करे वह
तो सफेद कौवे-गिद्ध
फिर उसे एक नया नाम देंगे
तीसरे नाम से "छुट्टल" भयभीत है बहुत !
000

'मीनू' मीना सिन्हा
'मीनूछाया', कुसुम विहार रोड नं 4ए,
मोराबादी, राँची, झारखंड- 834088
मोबाइल- 9835551769
ईमेल- meenasinha35@gmail.com

लेखकों से अनुरोध

सभी सम्माननीय लेखकों से संपादक मंडल का विनम्र अनुरोध है कि पत्रिका में प्रकाशन हेतु केवल अपनी मौलिक एवं अप्रकाशित रचनाएँ ही भेजें। वह रचनाएँ जो सोशल मीडिया के किसी मंच जैसे फ़ेसबुक, व्हाट्सएप आदि पर प्रकाशित हो चुकी हैं, उन्हें पत्रिका में प्रकाशन हेतु नहीं भेजें। इस प्रकार की रचनाओं को हम प्रकाशित नहीं करेंगे। साथ ही यह भी देखा गया है कि कुछ रचनाकार अपनी पूर्व में अन्य किसी पत्रिका में प्रकाशित रचनाएँ भी विभोम-स्वर में प्रकाशन के लिए भेज रहे हैं, इस प्रकार की रचनाएँ न भेजें। अपनी मौलिक तथा अप्रकाशित रचनाएँ ही पत्रिका में प्रकाशन के लिए भेजें। आपका सहयोग हमें पत्रिका को और बेहतर बनाने में मदद करेगा, धन्यवाद।

-सादर संपादक मंडल

रेखा भाटिया की कविताएँ

उदास नदी

बेचैन मन आज यूँ ही नहीं मचल रहा
पर्वतों की आग़ोश से निकलती नदी
उदास पूछ रही क्या मैं सोच बदलूँ

आषाढ़ के बादल जब बरसे थे झूमकर
गीली मिट्टी पर पैर रख पहली बार
बही थी यौवना धरती पर बल खाकर

बहती रही उन्मुक्त निर्मल उसकी धार
उमड़-घुमड़ मेघों की रस धार साथ
बदला मौसम, धरती की छटा निराली

पेड़-पौधे खिल उठे मिली अमृत धार
जीवन हुआ जंगल-मंगल चारों दिशा
मीठी नदी समा जाती खारे सागर में

उजली धूप-सी पनपी सभ्यता वहाँ
थी निष्ठा नदी की परम अतुल्यनीय
विकास की मची होड़ में छलती रही

गिरगिट-सा रंग बदला दुनियावालों ने
मेघों का दम घुटने लगा, मौसम चकराया
पेड़ों ने माँगी रहम की दुआ दुनियावालों से

मरते जंगल, किसी को तरस न आया
दोहन नदी का सारी सीमाएँ लाँघ चुका
बेबस-मरती नदी, घायल-बीमार नदी

अचेत पहुँची है किसी तरह सागर तक
पूछ रही सागर से मेरा उद्गम तुझसे होता
सोच बदल लूँ मैं अपनी, तब क्या होगा
निर्मल सोच वाली नदी ज़िद पकड़े बैठी
मुझे प्रदूषित कर दुनिया ने क्या पाया
मैं चाहकर भी अपनी सोच बदल न पाऊँगी

देख नदी का सब्र हृदय फटा है सागर का
बाहें चौड़ी कर भर रहा नदी को आगोश में
हाहाकार मची दुनिया में सागर ने तट छोड़े

रिश्तों की भी कुछ ऐसी दशा जीवन में
जिनकी सोच और मन नदी-सा निर्मल
दुनिया वालों का छलावा घायल मन सहते!
000

जाने कौन-से चेहरे

जाने कौन-से चेहरे परछाइयों की शक्लों में
उदासी बन उतर आए हैं पानी की सतह पर
कहीं दूर अतीत में भटक रही थी आज यूँही
बहती यादों की नदी किनारे वर्तमान से दूर
आज यादों से निकल नज़र आ रही हैं मुझे
कई परछाइयाँ जानी-पहचानी मूक घूर रही
देख रही हूँ अपना चेहरा पानी में अजनबी
अजनबी मेरा चेहरा पहचाना नहीं जा रहा
कुछ अल्हड़, बेपरवाह, हसीन यौवना
मुस्कराती हुई एक परछाईं, दूसरी, तीसरी
एक ने एक तितली बंद कर दी बोतल में
एक ने मोर पंख किताब में छिपा लिया
एक परछाईं शृंगार करती इतराती फिरती
एक परछाईं भाग रही है कोई पुकारता है
बिट्टो, बेटा, गुड़िया, रानी, लाडो, परी
यह परछाईं सुना-अनसुना कर भाग रही
सुनो प्रिये, बहू, भाभी, दीदी, मैडम, माँ
यह परछाईं अब भी भाग रही है हाँफती
पीछे से अब कोई भी तो नहीं पुकार रहा
फिर भी भाग रही, क्यों भाग रही है बेदम
अपनी ही आवाज़ से घबरा भागी शायद
अपने ही चेहरे से अनजान उसी के पीछे
एक पत्थर ज़ोर से दे मारा परछाइयों को
पानी की सतह पर गूढ़-मूढ़ छूमंतर हो गए
परछाइयों की शक्लों में जाने कौन-से चेहरे
उदासी बन उतर आए हैं पलकों के पीछे
आँखें टिकी रहती हैं उन चेहरों पर
पथरीली-सी
कभी इन्हीं आँखों से प्यार का पानी बहा था!
000

ज़िंदगी मैं तुष्ट हूँ

सपल-पल बदलती ज़िंदगी
रेत के कणों में पड़ते हैं जब
वक्त के कदम सरक जाती है
समय के हाथ जब हैं संवारते
महलों के आकर ले लेती है
कभी हवा के झोंकों से यहाँ-वहाँ
बहने लगती है, लहरों में बह जाते
महल ज़िंदगी के, जीवन और मृत्यु
दो किनारे हैं बीच कर्मों की यात्रा
यही तो है ज़िंदगी, निहित उम्मीद पर
कायम हैं हौसले ज़िंदगी के अपार
पार लगती कर्मों की गति दृढ़ श्रम से
प्रेरणा भी है, प्रेरणादायक भी है,
स्वप्न भी है, भ्रम भी है, योग्य भी,
दुर्लभ भी, इसकी क्षमता अपार है
एहसासों और अनुभूतियों का अम्बार
ज़िंदगी, प्रेम का अमृतदान ज़िंदगी
पॉपकॉर्न की तरह पकाओ तो कभी
पकती, कभी न पकती ज़िंदगी, सच
सरल भी,कठिन भी, सम और विषम
ज़िंदगी, अनुभवों का खट्टा-मीठा आचार
ज़िंदगी से सभी की उम्मीदें होती हैं
सभी को अपने हिस्से का आसमान
चाहिए, ऊँचाइयों पर उठ गए बहुत
लेकिन पैर ज़मीन से छूट गए
ज़िंदगी की मुझसे उम्मीद है कितनी
चलती रहती है अपनी रफ़्तार से
समर्पित रहती है आगे बढ़ती सदा
हुनर है उसमें रास्ते ख़ुद ही बना लेती
ज़िंदगी मैं तुष्ट हूँ, मैं सीख रही हूँ !
000

रेखा भाटिया
9305 लिंडन ट्री लेन, शार्लिट, नॉर्थ
केरोलाइना- 28277, अमेरिका
मोबाइल- 704-975-4898
ईमेल- rekhabhatia@hotmail.com

हेमन्त शर्मा की कविताएँ

नियते स्वार्थ

टहनियाँ रोक लेती हैं मुझे
झुककर
जब मैं कोशिश करता हूँ
किसी पेड़ के तने तक पहुँचने की,
काँटे फँसा लेते हैं मेरे वस्त्र
विरोध में!
जैसे
बुलडोज़र देख खड़े हो जाते हैं
अधनंगे बच्चे,
औरतें,
बूढ़े दादा दादी हाथ पसारे
अपनी झोंपड़ी की हिफाज़त के लिये,
सहमे सहमे प्रतिरोध में।
शायद पत्ते, काँटें, टहनियाँ
भाँप लेती हैं
मेरी नियत में छुपी धारदार कुल्हाड़ी के
बढ़ते कदमों की आहट!
000

भ्रम रोग

आँखों में मोतिया
उँगलियों में शिथिलता
दिमाग़ी निष्क्रियता
और जीभ पर
तफरीही वाणी विलास
बढ़ाता जा रहा हूँ मैं।
हाँ,
जाने-अनजाने!!
पंगु किये जा रहा हूँ
स्वयं को हौले-हौले।

वह पोस्ट जो
किसी अजनबी ने बनाई थी
किसी ग़ैर ने लगाई थी
किसी तीसरे ने
फ़ोटो शॉप में सजाई थी
हाँ वही पोस्ट
मैं धीरे से सरका देता हूँ,
किसी चौथे बेगाने
बेचारे बेहाल
सोशल सेटअप पर
अपने नाम का लेबल चिपका।
जानता हूँ किसी
लावारिस अनियंत्रित फॉरवर्डिंग को आगे
सरकाना
यानी
पवित्र पहाड़ी दुर्गम रास्ते को
जाँचे बिना
चढ़े बिना, हाँफे बिना
यात्रा पूरी करने का
झूठा
मुफ्ती
भिखमंगा अहसास।
या बिना पढ़े समझे विश्व के सर्वोच्च
दिमागों में से एक हो जाने का भ्रम।
मेरा यह खोखलापन
यह बौद्धिक दिवालियापन
यह गुरूर,
यह भ्रम और अभी और
गहरा होता जा रहा है
दिनों दिन
मुझमें
किसी भ्रम रोग की तरह।
सरस्वती की तरह
000

पुनर्मूल्याँकन

चलो
फैला दें
खुले में खुली छत पर
आस्था, अनास्था
विश्वास, अविश्वास
परम्परा, जातियाँ
मज़हब
पढ़े हुए, ओढ़े हुए, लादे हुए
ज्ञान की
चादरों
कम्बलों
कालीनों को,
कई वर्ष गुज़र गए हैं,
सड़ाँध हो गई है,
धूप खिला दें
चलो फैला दें।
000

अकेलापन

हाँ, मैं कई बार अकेला होता हूँ
पर अकेला नहीं होता!
मेरे विचारों के नन्हें शिशु
मुझसे आगे
मुझसे दूर
"पापा हमें छू लो" कह
डगमगाते कदमों से
भागते होते हैं
और मैं उन्हें मेरे बराबर में चलती
चिंतन प्रेयसी के हाथों में
थमा देने
सहेज देने में आतुर होता हूँ।
तुम्हारे राह रोक
"क्यों अकेले"
पूछने पर
तुम्हें अदृश्य को न दिखा पाने की
मेरी विवशता पर मुस्करा
आगे चल निकलता हूँ !
हाँ,
मैं कई बार अकेला होता हूँ
पर अकेला नहीं होता....
000

हेमन्त शर्मा
27, हेस्टिंग रोड, केंडल पार्क, न्यूजर्सी - 08824, यू एस ए
मोबाइल- 848 219 1875
ईमेल- hemantsharman@gmail.com

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव की कविताएँ

हम बनना चाहते हैं मुंशी प्रेमचंद...

हम बनना चाहते हैं मुंशी प्रेमचंद..
साहित्य में हम बनना चाहते हैं भारतेंदु हरिश्चंद्र
लिखना चाहते हैं ग़रीब और शोषितों की दास्तान
बनाना चाहते हैं साहित्य में एक नई पहचान
पर आख़िर क्यूँ नहीं वह कथानक ला पाते हैं
क्यूँ! नहीं वह कहानी लिख पाते हैं
महादेवी वर्मा की तरह नारियों की पीड़ा और दर्द को
क्यों! नहीं दे पाते हैं ऐसे शब्द
क्यूँ! नहीं न ला पाते वे संवाद
जो वर्षों तक लोग रखें याद...

क्यूँ! नहीं क्रांतिकारी रचनाओं का करते हैं सृजन
जिससे समाज की दशा एवं दिशा
बदलने के लिए शब्दों में हो वजन
हमारा लिखा हुआ लोग नहीं रखते याद
और लिखने के लिए क्यूँ! नहीं करते लोग फरियाद
हम अगर करें मनन और चिंतन
अपने साहित्य का करें विश्लेषण...

हमें पता चलता है कि हम तो वर्तमान में बस!
आत्ममुग्धता की लिए लिख रहे हैं
साहित्य के लिए नहीं
बस! अपने लिए ही जी रहे हैं
इससे आगे बढ़ कर हमें विचारना होगा
समाज व देश के निर्माण के लिए सोचना होगा
कुरीतियों एवं आडंबरों के ख़ात्मे के लिए आगे बढ़ना होगा
भ्रष्टाचार, आतंकवाद, निज स्वार्थवाद के विरुद्ध
तेज़धार शब्दों से नीति नियंताओं को
सोचने के लिए मजबूर करना होगा
नारी अस्मिता का सवाल उठाना होगा
शिक्षा, संस्कृति, सभ्यता, संस्कार आदि के लिए
अपने शब्दों से हमें ताना-बाना बुनना होगा
तब हमें पढ़ने के लिए लोग होंगे मजबूर..
हमें याद करेंगे ज़रूर...!

000

उम्मीद का इक टुकड़ा...

दिल के किसी कोने में उम्मीद का इक टुकड़ा
चाँदनी रात में छत पर अभी भी
तुम्हारा इंतज़ार कर रहा है...

मुझे तो बिल्कुल उम्मीद नहीं है तुम्हारे आने की
पर मेरे दिल को अभी भी उम्मीद है कि
तुम मेरे जीवन में वापस आओगी
क्योंकि दिल अभी भी तुम्हें प्यार कर रहा है

मुझसे सवाल भी करता है
तुमने उम्मीद क्यों छोड़ दी है
मेरा जबाब न पाकर निराश हो जाता है
लेकिन आशा का दीप जलाए हुए है
उसे विश्वास है कि एक न एक दिन
तुम मेरे जीवन में रोशन करोगी
खुशियों से जीवन जगमग कर दोगी
सच में ऐसा कुछ हो रहा है
प्रेम संपूर्ण आकार ले रहा है...

मुझे भी दिल की बातें सच लग रही हैं
मुझे भी अपने पवित्र प्रेम पर विश्वास जग रहा है
सृजन अब शब्दों में साकार हो रहा है
दिल की बातों पर मुझे भी ऐतबार हो रहा है
सच में मेरा प्यार वापस आ रहा है...

000

बेटियों को उड़ान भरने दो...

सृष्टि में सूर्य प्रभा फैलाती हैं,
घर को गुलाब-सा महकाती हैं।
नदियों के कल-कल सा बहती हैं,
स्वर्ण अक्षरों में इतिहास लिखती हैं।
बेटियों को ख़ूब उड़ान भरने दो...

हम इन्हें ख़ूब संस्कार सिखाए,
पढ़ा-लिखाकर योग्य बनाएँ।
ये चहचहाएँ और खिलखिलाएँ,
हर घर को स्वर्ग-सा सुंदर बनाएँ।
बेटियों को नई दिशाएँ तय करने दो...

हर घर की आन-बान-शान होती हैं,
ये कुल की पहचान होती हैं।
प्रत्येक क्षेत्र में कर रहीं हैं नाम,
स्थापित कर रहीं नए आयाम।
इन्हें भी अपने सपने सजाने दो...

बेटियों पर बंदिशों की बेड़ियाँ मत डालें,
ये बेटों से कमतर नहीं, हम मान लें।
भू से लेकर नभ तक श्रेष्ठता की प्रतिमान,
बेटियों से अलोकित है सारा जहान।
इन्हें लक्ष्य पर निशान लगाने दो...

इन्हें भी कुछ कर दिखाने के होते अरमान,
इनकी प्रतिभा को दें विस्तृत आसमान।
सफलता पर इनका करें गुणगान,
बेटियाँ भी घर, समाज औ राष्ट्र की शान।
इन्हें उन्मुक्त गगन में विचरने दो...

000

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
ग्राम-कैतहा, पोस्ट- भवानीपुर, जिला-बस्ती 272124 (उ. प्र.)
मोबाइल- 7355309428
ईमेल- laldevendra204@gmail.com

प्रतिभा चौहान की युद्ध विषय पर कविताएँ

युद्ध पर कविताएँ

युद्ध में जीवन
वे सौंप देते हैं
अनजान हाथों में
अपनी अकेली दुधमुँही बच्ची
उसकी लंबी उम्र की कामना करते हुए
तनिक भी नहीं डरते अंजान हाथों से
उस वक्त
शायद उसके अच्छे जीवन की कामना से
कहीं ज़्यादा होती है
सिर्फ जीवित बने रहने की कामना
000

एक ख़्वाहिश

एक आम इंसान
तुम्हारे बड़े बड़े नापाक युद्धों को
सिरे से ख़ारिज करता है
वही आम इंसान
जिसने राजाओं को राजा बनाया
सूरमाओं को सौंप दिया देश के भविष्य का नक्शा
हुकूमत को दी आज़ादी
मानता रहा नियम विनियम
राजा रजवाड़ों का फ़रमान
कानूनों की पगडंडियों पर
सबसे ज़्यादा दस्तक देने वाला
आम आदमी
नहीं चाहता युद्ध के नाम पर संवेदनाओं का व्यापार
000

युद्ध से परे

युद्ध में
अपने दोनों हाथ खोने वाले बच्चे को
अब भी फ़िक्र है
डूबती हुई चींटी को बचाने की
क्योंकि संवेदना रक्त में बहती है
संस्कार की तरह
युद्ध से अप्रभावित, परे व शुद्ध।
000

उम्मीद

पतझड़ के बाद
पेड़ की उम्मीदें ख़त्म नहीं होतीं
पर युद्ध
ख़त्म कर देता है
उम्मीदों की भी उम्मीद।
000

क्या आप जीवित हैं?

युद्धों के बीच
बचता है सिर्फ सन्नाटा
और अंतहीन कारुणिक रुदन
संवेदनहीनता की हद तक
कोई दीवार ढहती जाती है
प्रेम और विश्वास की देहरी पर
उपजता है चीत्कार
उगता है
भयावह सन्नाटों का जंगल
वे जो
मिलकर लड़ते हैं
मिलाते हैं हाथ
मिलते हैं गले
बचे रह जाते हैं
शेष मारे जाते हैं
000

सीमाओं में

ये सीमाओं के दावेदार
करते हैं बड़े-बड़े वायदे
और जनता की सुरक्षा की लेते हैं शपथ
करते हैं वार्ताएँ
बड़े-बड़े संवाद
और इसी तरह
कभी-कभी हो जाते हैं हिंसक
जिसका असर युगों तक
बहता रहता है जनता की धमनियों में
000

क्या बचेगा इसके बाद

क्या समय को
मात देना चाहते हो युद्ध से
पा लेना चाहते हो सब कुछ
समय से पूर्व ही
सुनो
समय से पूर्व सब कुछ पाने की चाहत में
पाने जैसा कुछ नहीं मिलता
बल्कि बढ़ती जाती हैं
अधिक खोने की संभावना
और अंतत:
तुम खो देते हो वह सब कुछ
जो भी है तुम्हारे पास
000

एक बच्ची की डायरी

एक डायरी में
लिखती है एक बच्ची
घरों के सामने हुए दंगों के स्याह संस्मरण
जिनकी स्याही की बीच-बीच में कहीं पर
पड़े हैं कुछ धुँधले से धब्बे
उन धब्बों में
उसके आँसुओं के भीतर छिपी आह को
सुनना
शायद
समझ आ सके कुछ ज़्यादा
क्योंकि जितना सह लेता है आदमी
उतना लिख नहीं पाता।
000

प्रतिभा चौहान
ईमेल- cjpratibha.singh@gmail.com

गीत

कैलाश मनहर की गीतिकाएँ

यादें जवानी की

सूखी नदी की रेत में
ख़ुशबू है पानी की अभी
उसके बुढ़ापे में भी हैं
यादें जवानी की अभी

छाये तो हैं बादल कि शायद
आजकल में बरसेंगे
लेकिन हवाओं की है हालत
खींचा-तानी की अभी

जमुहाई मत लो ऊब कर
पकड़ो न माथा दर्द से
पूरी सुनो शुरुआत है
यह तो कहानी की अभी

माना कि उसको तोड़ डाला
है ग़मों ने बेतरह
लेकिन झलकती है चमक
कुछ शादमानी की अभी

यों तो है मंज़ूर उसको
वक़्त का हर फैसला
दिल में मगर होती है
हिम्मत आना-कानी की अभी
000

मरघट नहीं

दहकती आग के रंगों में भी
नमी दिक्खी।
मुझको कुँए के हलक़ में भी
तिश्नगी दिक्खी।

देखने के लिये बहती नदी
गया था मैं,
दूर तक सिर्फ़ मगर रेत ही
बिछी दिक्खी।

हरेक गाँव-ओ-शहर
रास्ते-ओ-सड़कों पर,
भीड़ के दिल में भी
अज़ीब उदासी दिक्खी।

तुम्हारी बातों पे यक़ीन
कैसे करते हम,
हरेक बात में सच्चाई की
कमी दिक्खी।

लो कि अब देख लो कमाल
हमारा भी तुम,
हवाएँ रंग-ओ-बू हम से ही
ले चली दिक्खी।
000

क्यों गलें हम

डर के साये में रह कर
क्यों पलें हम
सूखी लकड़ी के जैसे
क्यों गलें हम

तुम हो तुम और
मैं हूँ मैं आख़िर
तो अपने आप को ही
क्यों छलें हम

बहुत मिलना-मिलाना
हो चुका अब
चलो फिर अपने अपने
घर चलें हम

कैसी उल्फ़त है
कैसा इश्क़ है यह
विरह की आग में
हर पल जलें हम

दुबारा मिलने की
उम्मीद रख कर
दुनिया वालों की
नज़रों में खलें हम
000

छिपा ख़ंजर है

जिधर भी देखिये
लहूलुहान मंज़र है
मुख पे है राम पर
हाथों में छिपा ख़ंजर है

बताया जाता है
जनतंत्र मुल्क में अपने
मगर प्रधान ख़ुद को
मानता सिकंदर है

तलाशते हैं वे लड़ने को
रोज़ मुद्दे नए
न जाने कितना भरा ज़हर
उनके अन्दर है

चेला गोरख का जब से
बैठा राजगद्दी पे
धुन रहा सिर उधर धूणी पे
अब मछंदर है

000

कैलाश मनहर
मनोहरपुर, जयपुर, राजस्थान, 303104
मोबाइल- 9460757408
ईमेल- manhar.kailash@gmail.com

ग़ज़ल

ग़ज़लें

डॉ. आरती कुमारी

डॉ. आरती कुमारी
शशि भवन
आज़ाद कॉलोनी, रोड 3
माड़ीपुर, मुज़फ़्फ़रपुर, बिहार 842001
मोबाइल- 8084505505
ईमेल- artikumari707@gmail.com

ग़म से जब मिलना मिलाना हो गया
कम ख़ुशी का आना जाना हो गया
मिलते ही परवाज़ पंछी उड़ गए
पेड़ का क़िस्सा पुराना हो गया
सह लिए इक बार जो उनके सितम
फिर तो हर दिन का फ़साना हो गया
इक ज़रा तितली हवा में क्या उड़ी
उसका तो दुश्मन ज़माना हो गया
दर्द, आहट, ज़ख़्म, लहज़ा और ख़त
याद का मेरी ख़ज़ाना हो गया
नेकियाँ, तहज़ीब, रिश्ते, चाहतें
इनको देखे तो ज़माना हो गया

000

तेरी याद में जो गुज़ारा गया है
वही वक़्त अच्छा हमारा गया है
तुम्हें मेरी हालत पता क्या चलेगी
मेरा जो गया कब तुम्हारा गया है
तुम्हें इश्क़ का आइना मानकर ही
मुक़द्दर को अपने सँवारा गया है
अजब है मुहब्बत का मैदान यारों
न जीता गया है न हारा गया है
लिखा रेत पर नाम मैंने तुम्हारा
नदी में भी चेहरा निहारा गया है
है मेरी भी आदत तुम्हारे ही जैसी
हर इक रंग मुझपे तुम्हारा गया है

000

ये पलकें भीग जाती हैं नमी से
तेरा जब ज़िक्र करती हूँ किसी से
मुहब्बत में फ़ना कैसे हुई है
समंदर से नहीं, पूछो नदी से
तेरी ही याद के जुगनू पकड़ने
गुज़र जाती हूँ मैं तेरी गली से
हिदायत माँ ने जो बख़्शी है मुझको
क़दम मुड़ जाते हैं ख़ुद ही बदी से
तुम्हें पाकर मेरा दिल झूमता है
शिकायत अब नहीं है ज़िन्दगी से

000

लेके हाथों में हाथ करते हैं
हम निगाहों से बात करते हैं
ज़िक्र से तेरे सुब्ह होती है
तेरी यादों से रात करते हैं
सिर्फ़ काग़ज़ क़लम नहीं कुछ भी
यूज़ संग में दवात करते हैं
साँस लेने से धड़कनों तक हम
काम सब साथ-साथ करते हैं
पास दौलत नहीं है अपने सो
नाम तेरे हयात करते हैं

000

तेरे बग़ैर मेरा घर उदास रहता है
मेरा सुकून बराबर उदास रहता है
हर इक मक़ाम पे किस्मत भी आज़माती है
हरेक मोड़ पे मुक़द्दर उदास रहता है
ये फड़फड़ाये तेरे आने की ख़बर सुनकर
कि और दिन तो कलन्डर उदास रहता है
करूँ सिंगार मैं ख़ुद को सँवार लूँ कितना
जो तू न देखे तो ज़ेवर उदास रहता है
सताया याद ने तेरी सो दिल ये रोया है
कहाँ ये सोच समझकर उदास रहता है

000

आँधी चली थी शम्अ बुझाने तमाम रात
जलते रहे थे ख़्वाब सुहाने तमाम रात
यूँ मेरे दर्दे -दिल की दवा बन सके न तुम
रिसते रहे हैं ज़ख़्म पुराने तमाम रात
तोड़ा था जिसके दिल को सितारों ने बेसबब
आये थे जुगनू उसको मनाने तमाम रात
जिनके लिए थी दिल की वो महफ़िल सजी हुई
आए नहीं वो रस्म निभाने तमाम रात
आई नहीं न आँख लगी सुब्ह हो गई
करती रही है नींद बहाने तमाम रात

000

तुम आए याद हमेशा ही रौशनी की तरह
ये और बात कि मिलते हो अजनबी की तरह
न कोई फूल न तितली न कोई रंगे हयात
है आज ज़ीस्त भी तस्वीरे-बेकसी की तरह
तुम्हारी याद में सावन की तरह रोती हूँ
न सूख जाएँ ये आँखें किसी नदी की तरह
मैं घर को लौट रही हूँ कि शाम ढलने लगी
कि दिल में बढ़ने लगी याद तीरगी की तरह
कब आओगे कि उतारूँ तुम्हारा सदक़ा मैं
कि जल रही हूँ शबो- रोज़ 'आरती' की तरह

000

ग़ज़ल

ग़ज़लें

जय चक्रवर्ती

शर्म लहजे में न आँखों में नमी है
ये हमारे दौर पर लघु टिप्पणी है
फिर जगे प्रतिरोध के कुछ शब्द छूँछे
फिर कहीं पर रेप से बच्ची मरी है
मर चुकी हैं किस कदर संवेदनाएँ
तीन दिन से लाश रस्ते में पड़ी है
रोज़ लड़ता है ग़रीबों के लिए ये
राम जाने किस तरह का आदमी है
आ गए हैं लोग कुछ खाये-अघाये
अब बहस होगी कि दुनिया क्यों बनी है
आदमी की दोस्ती है भेड़ियों से
आदमी की आदमी से दुश्मनी है
जी रहे हम एक लाक्षागृह मुसलसल
आपको हँसने हँसाने की पड़ी है

000

ख़ुद युधिष्ठिर कर रहे हैं साज़िशों की पैरवी
जाएगी लेकर कहाँ ये वक़्त की आवारगी?
जिस जगह इंसानियत की लाश पर जलसा हुआ
धर्म के ध्वजवाहकों की थी वहाँ मौजूदगी
धर्म जीतेगा कि जीतेगी यहाँ इंसानियत
चल रही है बीच दोनों के यही रस्साकशी
हैं नहीं इस दौर में गाँधी, चलो अच्छा हुआ
किस तरह सहते यहाँ वो हर कदम शर्मिंदगी
एक दिन यह भी हुआ आख़िर हमारे सामने
रेत में डुबकी लगाकर की नदी ने ख़ुदकुशी
एक सम्मोहन बुना है जादूगर ने इस तरह
बेबसी पर थाप देकर नाचती ख़ुद बेबसी
हैं बहुत ज़िद्दी अँधेरे, कम मगर हम भी नहीं
हम जलेंगे रास्तों पर बाँटने को रोशनी

000

मैं अपने ज़ख्म सारे भूल जाऊँ
तेरी लफ़्फ़ाज़ियाँ ओढ़ूँ – बिछाऊँ
सुनेगा तू नहीं फरियाद मेरी
बता! जाऊँ कहाँ किसको सुनाऊँ
मुझे मालूम है तेरी हक़ीक़त
मैं तेरे सामने क्यों गिड़गिड़ाऊँ
भड़कने दे ये शोला आज फिर से
कहाँ तक और सीने में दबाऊँ
मुझे भी झूठ पर झुकना था, लेकिन
कहाँ किरदार अपना छोड़ आऊँ
मैं शायर हूँ मुझे तू कत्ल कर दे
उठाऊँगा नहीं तेरी खड़ाऊँ

000

चोट कर अन्याय पर हरदम हथौड़ों की तरह
और नंगी पीठ पर दस-बीस कोड़ों की तरह
रुक भी जा दो-चार पल कुछ सोच भी,कुछ देख भी
ज़िंदगी- भर दौड़ता ही रह न घोड़ों की तरह
मुश्किलों की ही तरह कर मुश्किलों का सामना
मुश्किलों से भाग मत हरगिज़ भगोड़ों की तरह
तय करो, लाखों करोड़ों में बनोगे एक, या
एक दिन मर जाओगे लाखों–करोड़ों की तरह
रख न पाये साथ यदि प्रतिरोध की चिनगारियाँ
रोज़ कुचले जाओगे कीड़ों-मकोड़ों की तरह
जो पृथाएँ-मान्यताएँ रोज़ डसतीं हैं तुम्हें
काट कर फेंको उन्हें अब ज़र्द फोड़ों की तरह

000

भूख, ग़रीबी, क़र्ज़े से सम्बंध पुराना है तो है
घर में मेरे लाख दुखों का आना-जाना है तो है
चिन्ता, डर, धोखा, दहशत, जीने की हर सू दुश्वारी
इतने सारे मेहमानों का आना-जाना है तो है
रोज़ समय फरमान सुनाता –'ये करना फिर वो करना'
ज़िन्दा रह पाने का ये भी एक बहाना है तो है
दिल तोड़े होंगे हमने, कुछ भूलें की होंगी हमने
चुकता करने को इतना सारा हर्जाना है तो है
रक्खे हैं इसमें जीवन-भर के दुख–सुख के अफ़साने
यादों के पीछे यादों का एक खजाना है तो है

000

जय चक्रवर्ती
एम.1/149, जवाहरविहार, रायबरेली
उत्तर प्रदेश 229010
मोबाइल- 9839665691
ईमेल- jai.chakrawarti@gmail.com

आत्ममुग्धता नापने का पैमाना

पंकज सुबीर
पी. सी. लैब, शॉप नंबर 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001
मोबाइल- 9977855399
ईमेल- subeerin@gmail.com

वैसे तो आत्ममुग्धता को नापने का कोई पैमाना नहीं है, लेकिन फ़ेसबुक को यदि पैमाना बनाएँ तो इसे नापा भी जा सकता है। फ़ेसबुक हमारे यहाँ ठीक-ठाक रूप से 2010 में प्रारंभ हुआ, अर्थात् बारह साल पहले। यदि इन बारह वर्षों को ही पैमाना माना जाए तो आप नाप सकते हैं कि आपकी मित्र सूची में अलग-अलग कैटेगरी के कितने आत्ममुग्ध मित्र हैं। इस नाप के लिए आप अपने मित्र के "फोटोज़" सेक्शन में जाकर "प्रोफाइल पिक्चर्स" पर क्लिक कर संख्या देखिए कि आपके मित्र ने पिछले बारह सालों में कितने प्रोफाइल पिक्चर अपलोड किए हैं। संख्या को नीचे दिए फार्मूले पर कसिए और जान जाइए मित्र की आत्ममुग्धता का लेवल।

1 नमो लेवल- (600 या उससे अधिक प्रोफाइल तस्वीरें) 600 से अधिक प्रोफाइल पिक्चर्स मतलब बारह साल में हर सप्ताह एक तस्वीर प्रोफाइल पर डाली गई। यह एक ख़तरनाक अवस्था है, यदि किसी के प्रोफाइल पर छह सौ से अधिक तस्वीरें हैं तो समझ लीजिए कि वह मित्र आत्ममुग्धता के शिखर पर विराजमान है। (मुझे 1500 तस्वीरों तक के मित्र मिले।)

2 नारसिसस लेवल- (400 से 599 प्रोफाइल तस्वीरें) 400 से अधिक प्रोफाइल पिक्चर्स मतलब बारह साल में हर माह कम से कम तीन बार अपनी प्रोफाइल तस्वीर को बदला गया। और इस प्रकार 400 से अधिक प्रोफाइल पिक्चर्स वहाँ उपलब्ध हैं। यह ग्रीक माइथोलॉजी के पात्र नारसीसस की तरह अवस्था है। नारसीसस को अपने अलावा किसी और से प्रेम ही नहीं था, वह पानी में अपनी छवि देख-देख के आत्ममुग्ध होता रहता था।

3 ट्रंप लेवल - (300 से 399 प्रोफाइल तस्वीरें) 300 से अधिक प्रोफाइल पिक्चर्स, मतलब यह कि हर दो सप्ताह में एक बार प्रोफाइल पर नई तस्वीर डाली गई। यह आत्ममुग्धता की मध्य अवस्था है, यह मित्र आत्ममुग्ध तो है लेकिन दीन-दुनिया से बेख़बर नहीं है। यह आपकी तरफ़ भी पूरा ध्यान देगा। अपने आपको सामने रखेगा मगर आपको भी इग्नोर नहीं करेगा।

4 अनिल कपूर लेवल- (200 से 299 प्रोफाइल तस्वीरें) 200 से अधिक प्रोफाइल पिक्चर्स, मतलब हर साल बीस के लगभग तस्वीरें प्रोफइल पर डाली गईं। यह लेवल माइल्ड लेवल है। इसे हम आत्ममुग्ध नहीं कह सकते, बस यह कि यह जब अकेला होता है तो अपने आप को दर्पण में बार-बार देखना पसंद करता है। मुग्धा नायिका की तरह ही आप इसको समझ सकते हैं।

5 इंसान लेवल- (100 से 199 प्रोफाइल तस्वीरें) 100 से अधिक प्रोफाइल पिक्चर्स,मतलब बारह साल में अमूमन दस तस्वीरें हर साल प्रोफाइल पर डाली गईं। यह एकदम इंसान टाइप का मित्र है। अचानक कभी जोश में आकर तस्वीर डाल देता है फिर कई दिनों तक चुप रहता है।

6 संत लेवल- (50 से 99 प्रोफाइल तस्वीरें) 100 से कम प्रोफाइल पिक्चर्स का मतलब है कि बारह सालों में बंदे ने सौ तस्वीरें भी नहीं डाली हैं अपने प्रोफाइल पर। एकदम संत लेवल।

7 बुद्ध लेवल- (25 से 49 प्रोफाइल तस्वीरें) 50 से कम प्रोफाइल पिक्चर्स मतलब साल भर में चार तस्वीरें भी नहीं डाली हैं, हमेशा परम ज्ञान और परम ध्यान की अवस्था में रहता है।

8 मोक्ष लेवल- (12 से 24 प्रोफाइल तस्वीरें) 25 से भी कम प्रोफाइल पिक्चर्स का मतलब वह मित्र जीते जी ही मोक्ष की अवस्था में है। पिछले बारह सालों में उसने हर साल लगभग दो तस्वीरें यूँ ही बस लोगों का मन रखने को लगा दी हैं। बाक़ी उसे इन सबसे कोई मतलब नहीं है।

9 देवदूत लेवल (2 से 11 प्रोफाइल तस्वीरें) 12 से भी कम तस्वीरें यदि बारह साल में लगी हैं तो मान लीजिए कि वह इंसान नहीं है बल्कि किसी देवदूत ने अपना एकाउंट बनाया हुआ है।

10 ईश्वर लेवल (केवल 1 प्रोफाइल तस्वीर) 1 तस्वीर..... यदि बारह साल से एक ही तस्वीर प्रोफाइल में लगी हुई है, तो उसे हम ईश्वर ही कहेंगे, क्योंकि ईश्वर ही स्थिर रहता है, कभी बदलता नहीं है। इस मित्र को तलाश कीजिए और फिर कहिए कि मैंने ईश्वर को पा लिया है। क्या आपकी सूची में है कोई मित्र जो ईश्वर है, मिले तो बताइयेगा ? **सादर आपका ही**

पंकज सुबीर

Award Winner
Cafe Irani Chaii International Film Festival
2022

WINNER
2022
CARAVAN INTERNATIONAL FILM FESTIVAL

CRITICS CHOICE AWARD
INDO FRENCH INTERNATIONAL FILM FESTIVAL
2022

स्ट्रॉबेरी इंटरटेनमेंट क्रिएशंस
शिवना क्रिएशंस
और ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन
की फ़िल्म
“तुम लोग”
को तीन इंटरनेशनल अवार्ड

Vibhom Swar ● Quarterly ● October-December 2022 ● RNI No. MPHIN/2016/70609 ● ISSN2455-9814

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन अमेरिका द्वारा मध्यप्रदेश के सीहोर ज़िले में सीहोर तथा आष्टा में चलाए जा रहे आर्थिक रूप से कमज़ोर परिवार की बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण योजना के तहत स्थापित प्रशिक्षण केन्द्रों पर आयोजित कुछ कार्यक्रम

सीहोर में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2022-23 प्रथम सत्र का शुभारंभ महामण्डलेश्वर पंडित अजय पुरोहित, समाजसेवी तथा क्रीसेंट ग्रुप के चेयरमेन श्री अखिलेश राय तथा उनकी धर्मपत्नी श्रीमती नमिता राय ने किया।

सीहोर में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2022-23 द्वितीय सत्र का शुभारंभ मुख्य नगरपालिका अधिकारी श्री संदीप श्रीवास्तव, समाजसेवी श्री अनिल पालीवाल, तथा डाइट की प्राचार्य श्रीमती अनीता भालेराव बड़गुर्जर ने किया।

सीहोर में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2022-23 तृतीय सत्र का शुभारंभ लोकायुक्त एसपी श्री मनु व्यास, स्मार्ट सिटी हॉस्पिटल के संचालक डॉ. विजय सक्सेना, समाजसेवी श्रीमती रश्मि व्यास तथा श्रीमती दीप्ति मिश्रा ने किया।

आष्टा में चलाए जा रहे बालिकाओं के लिए निशुल्क कम्प्यूटर प्रशिक्षण केंद्र पर सत्र 2022-23 का शुभारंभ ढींगरा फ़ैमिली फाउण्डेशन के भारत प्रभारी पंकज सुबीर, पत्रकार श्री आकाश माथुर, सीहोर केंद्र प्रभारी सनी गोस्वामी तथा शिवना प्रकाशन के श्री शहरयार ने किया।

If Undelivered Please Return to :
P. C. Lab, Shop No. 3-4-5-6, Samrat Complex Basement, Opp. Bus Stand, Sehore, M.P. 466001
Phone 07562-405545, 07562-695918, Mobile 09584425995, 07828313926, 09806162184

स्वत्वधिकारी एवं प्रकाशक पंकज कुमार पुरोहित के लिए पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001 से प्रकाशित तथा मुद्रक ज़ुबैर शेख़ द्वारा शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एम पी नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश 462011 से मुद्रित।